कौल-कल्पतरु

चण्डी

श्री वटुक भैरव (सात्विक)

'हीरक'-जयन्ती

'कौल-कल्पतरु'

चण्डी

वर्ष ६१ :: 'मन्मथ' संवत् २०५९ वि० (सन् २००३ ई०) :: संख्या १०-१२

ॐ 'दुर्मुख'-संवत्सराय नमो नमः

पृष्ठ १३१-१३२

दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नाम

पृष्ठ १-८

दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नामावलि

पृष्ठ ९-२४

दश-महा-विद्या-रहस्य (श्रीकाली-तत्त्व)

पृष्ठ १-८

हिन्दी 'तन्त्र-दीपनी' (दूसरा एवं तीसरा उल्लास)

पृष्ठ ३३ से ७४

निगम-तत्त्व-सार

पृष्ठ १ से २४

सम्पादक

रमादत्त शुक्ल

ऋतशील शर्मा

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक :

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज (उ० प्र०)–२११ ००६ ☎ (०५३२) २५०२७८३

अनुदान ३५/-

इस अङ्क में

श्री दक्षिणा काली आवरण १

श्रीबटुक-भैरव (सात्विक) आवरण २

(१) ॐ 'दुर्मुख'-संवत्सराय नमो नमः १३१

★ 'श्रीपीताम्बरा-पीठ' में त्रि-दिवसीय जयन्ती १३२

(२) विशेष प्रस्तुति (१) १-२४

★ दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नाम

★ दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नामावली

(३) विशेष प्रस्तुति (२) १-८

★ दश-महा-विद्या-रहस्य

★ श्रीकाली-तत्त्व

(४) विशेष प्रस्तुति (३) ३३-७४

★ तन्त्र-दीपनी (दूसरा उल्लास)

★ कुण्डलिनी का ध्यानादि

★ तान्त्रिक सन्ध्या

★ अघमर्षण (पाप-मोचन)

★ विविध गायत्री-मन्त्र

★ गायत्री के ध्यान

★ स्नान-विधि

★ सामान्य-अर्घ्य-स्थापन

★ भूत-शुद्धि और षट्-चक्र-निरूपण

★ अन्तर्मातृका-न्यास

★ बाह्य मातृका-न्यास

★ संहार-न्यास

★ प्राणायाम

★ पीठ-न्यास

★ विशेष अर्घ्य-स्थापन

★ ऋषि, छन्द, देवता-निरूपण

★ पीठ-पूजा

★ इष्ट-देवता का आवाहनादि पूजन

★ तन्त्र-दीपनी (तीसरा उल्लास)

★ विष्णु-मन्त्र

★ श्रीरामचन्द्र-मन्त्र

★ बाल-गोपाल-मन्त्र

★ श्रीवासुदेव-मन्त्र

★ श्रीलक्ष्मी-वासुदेव-मन्त्र

★ श्रीनृसिंह-मन्त्र

★ श्रीहरिहर-मन्त्र

★ श्रीशिव-मन्त्र

★ मृत्युञ्जय-मन्त्र

★ श्रीशिव-पञ्चाक्षरी-मन्त्र

★ भगवान् बटुक-भैरव-मन्त्र

★ सूर्य-मन्त्र

★ अजपा-मन्त्र

★ भगवती भुवनेश्वरी

(५) विशेष प्रस्तुति (४) १-२४

★ निगम-तत्त्व-सार

★ तत्त्व-सार का माहात्म्य

★ ब्रह्म-तत्त्व का माहात्म्य

★ मन्त्र-शोधन

★ स्तोत्र-शोधन

★ कवच-साधन

★ चण्डी-पाठ-क्रम

★ पञ्च-प्राणात्मक-ब्रह्म-ज्ञान

★ पञ्च-तत्त्व-शुद्धि

★ तत्त्व-शोधन

★ सम्विदा (विजया)-कल्प

★ भाव-माहात्म्य

श्रीबटुक-भैरव (राजस) आवरण ३

माँ दुर्गा की मूर्ति (भारत सेवाश्रम सङ्घ, प्रयाग) ४

सूचना : 'चण्डी' वर्ष ६२ का संयुक्त अङ्क १-३ वी०पी०पी० द्वारा जुलाई के पहले सप्ताह में सभी सदस्यों के पास जाएगा। कृपया वी०पी०पी० स्वीकार करेंगे।

"ॐ दुर्मुख-संवत्सराय नमो नमः"

बुधवार, अप्रैल २००३ से **नया संवत्सर** प्रारम्भ हो चुका है। इस **नए संवत्सर** के लिए न केवल **नई संख्या** २०५९ के स्थान पर २०६० है, अपितु **नया नाम** भी है—पिछले मन्मथ के स्थान पर **दुर्मुख** !

संवत्सर के लिए **नई संख्या** और **नया नाम** केवल **भारतीय सनातन तत्त्व-विज्ञान** के अन्तर्गत ही उपलब्ध हैं। अन्यत्र वर्ष-परिवर्तन होने पर केवल संख्या ही बदलती है, अन्य कुछ नहीं बदलता।

संवत्सर के लिए **नई संख्या** के साथ-साथ **नए नाम-करण** से यह बात स्पष्ट होती है कि — संवत्सर के दो स्वरूप हैं — एक **चक्रात्मक** और दूसरा **यज्ञात्मक**। संवत्सर का **चक्रात्मक-स्वरूप** उसकी संख्या द्वारा और संवत्सर का **यज्ञात्मक-स्वरूप** उसके नाम द्वारा स्पष्ट होता है।

भारतीय सनातन तत्त्व-विज्ञान के अनुसार **काल** कोई निर्जीव वस्तु नहीं है, अपितु स्वयं प्रजापति विश्व-निर्माण के लिए **संवत्सर** का रूप धारण करते हैं। आगे प्रकाशित **श्रीकाली-तत्त्व** के अन्तर्गत महाकाल की शक्ति— **काली** को समझिए। वहाँ यह स्पष्ट रूप में उल्लखित है कि — **"जड़ में चैतन्य लाने की चाबी इसी के हाथ में है, विश्व में अनेकानेक रूप-कल्पनाओं का मूलाधार यही है।"**

संक्षेप में **संवत्सर** के **नामात्मक-स्वरूप** द्वारा एक ओर विश्व की बाह्य वस्तुओं-वर्षा, फसल, उपज आदि के स्वरूप-मात्रा का ज्ञान होता है, तो दूसरी ओर जड़ से चैतन्यता की ओर ले जानेवाली **संवत्सर-पुरुष** की गुप्त गति का भी ज्ञान होता है।

दुर्मुख-संवत्सर का यदि सामान्य अर्थ लें, तो जिसका मुख अर्थात् अग्र-भाग कठिनाइयों को व्यक्त करनेवाला हो, यह ज्ञात होता है। **दुर्मुख-संवत्सर** के अग्र-भाग में विश्व में ऐसी ही घटनाएँ घट भी चुकी हैं। अतः इस सामान्य अर्थ के अनुसार **नाम की सत्यता स्वतः सिद्ध** है।

दुर्मुख-संवत्सर का यदि विशेष अर्थ लें, तो **चण्डी** के मानद सम्पादक **पं० रमादत्त शुक्ल** के अनुसार — **"यह नाम अनेक रहस्यों का ज्ञान कराने के साथ भगवान् नृसिंह का स्मरण कराता है। अतः पाठक 'क्ष्रौं नृसिंहाय नमः' - सप्ताक्षर मन्त्र का जप तीन-तीन बार किया करें। जपते समय 'भगवान नृसिंह का ध्यान' करें।"** (देखिए, तन्त्र-दीपनी, नृसिंह-मन्त्र)।

'क्ष्रौं नृसिंहाय नमः' — सप्ताक्षर मन्त्र का रहस्यार्थ समझें, तो दुर्मुख-संवत्सर के अनेक रहस्य भी उद्‌घाटित होते हैं। **'क्ष्रौं'** का उद्धार मन्त्र-कोष में इस प्रकार दिया गया है — **क्ष-कारो वह्निमारूढो, मनु-विन्दु-समन्वितः**। सत्य है, **दुर्मुख-संवत्सर** में ऐसा बोध हो रहा है कि **क्ष-कार** अर्थात् **चक्रेश्वर-रूपी संवत्सर-पुरुष रूपान्तर-कारी वह्नि-शक्ति पर आरूढ़ हैं** और वे हम सबको प्रभावी ढंग से जड़ता से चैतन्यता की ओर जाने को प्रेरित कर रहे हैं।

अतः हम सबको नित्य प्रातः आँख खुलते ही लेटे-लेटे **संवत्सर-पुरुष का स्मरण** करते हुए उन्हें **नमन** करना चाहिए —**ॐ दुर्मुख-संवत्सराय नमो नमः**।

दुर्मुख-संवत्सर के पावन अवसर पर प्रस्तुत अङ्क में विशेष प्रस्तुति के रूप में **दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नाम, श्रीकाली-तत्त्व, निगम-तत्त्व-सार** — जैसा शोधात्मक साधना-परक साहित्य दिया जा रहा है। आशा है, पाठक-बन्धु इनसे विशेष रूप से उद्‌बोधित होंगे।

—ऋतशील शर्मा

'श्रीपीताम्बरा-पीठ', दतिया (म०प्र०)

में

त्रि-दिवसीय जयन्ती

'श्रीपीताम्बरा-पीठ', दतिया में **त्रि-दिवसीय जयन्ती** (दिनाङ्क ४ से ६ मई) का आयोजन इस बार बड़े उत्साह से सम्पन्न हुआ। **भगवान् परशुराम, भगवती पीताम्बरा** एवं **जगद्-गुरु आदि शङ्कराचार्य** के सम्बन्ध में 'संस्कृत' और 'हिन्दी' में विद्वान् वक्ताओं ने अपने विचार प्रकट किए।

'श्रीपीताम्बरा-जयन्ती' पर **लखनऊ आकाश-वाणी** के प्रसिद्ध कलाकारों तथा औरंगाबाद के विख्यात **ध्रुपद-गायक अफजल हुसैन** द्वारा **'वागेश्वरी-भक्ति-सङ्गीत'** और **ध्रुपद-गायन** प्रस्तुत किया गया, जो बहुत ही भक्ति-मय तथा मन-मोहक था।

'श्रीशङ्कराचार्य-जयन्ती' पर **जगद्-गुरु शङ्कराचार्य स्वामी माधवाश्रम जी महाराज** ने **जगद्-गुरु आदि शङ्कराचार्य** के 'अवतार' के प्रयोजन, **'गो-सेवा'** तथा **'आतङ्क-वाद'** पर अपने विचार प्रकट किए। उनके अनुसार **आध्यात्मिक चेतना** बिना समस्याओं का समाधान सम्भव नहीं है।

'हिन्दी-गोष्ठी' में **स्वामी भागवतानन्द सरस्वती, श्रीइच्छाराम द्विवेदी** (मैनपुरी), **श्रीबालकृष्ण भारद्वाज** (ग्वालियर), **श्रीकैलाश तिवारी** (इटावा) एवं 'संस्कृत-गोष्ठी' में **पं० ओमनारायण द्विवेदी, श्रीरामसेवक पाठक, श्री अजय शर्मा** प्रमुख वक्ता रहे। सभी ने धारा-प्रवाह संस्कृत में प्रवचन किए, जिन्हें सुनकर जनता में **'देव-वाणी'** के प्रति सहज आदर और हर्ष का भाव उमड़ पड़ा।

ग्वालियर से पधारे **पण्डित बालकृष्ण भारद्वाज जी** ने अपने उद्बोधन में कहा–"**परशुराम जी** का अवतार और उसी युग में **भगवान् राम** का अवतार–दोनों धर्म की रक्षा के लिए पूरक रूप में हुए। **भगवान् परशुराम** ने जहाँ शस्त्र उठाया, वहीं उन्होंने **'भगवती त्रिपुर-सुन्दरी'** का **वेदोक्त तान्त्रिक उपासना-मार्ग** भी लोगों के सामने उद्घाटित किया, जो आगे चलकर **'गौड़ पाद'** एवं **'शंकराचार्य जी'** की परम्परा के रूप में सामने आया। आज सभी जगह **शाङ्कर मठों, तान्त्रिक पीठों** में **भगवान् परशुराम** द्वारा उद्घाटित **'श्री श्रीविद्या'** ही साधकों द्वारा उपास्या इष्ट-देवी हैं।

'श्रीपीताम्बरा-जयन्ती' के अवसर पर विद्वान् वक्ताओं ने बताया कि "**भगवती पीताम्बरा— 'भोग'** और **'मोक्ष'**—दोनों की प्रदात्री हैं। ये **'स्तम्भिनी' विद्या** हैं। यही **'ब्रह्मास्त्र-रूपिणी'** हैं।"

उक्त आयोजन प्रति वर्ष **'श्रीपीताम्बरा-पीठाधीश्वर' 'राष्ट्र-गुरु' श्री स्वामी जी महाराज** के निर्देशानुसार सम्पन्न होते हैं। तीनों दिन श्रद्धालु श्रोताओं की भीड़ रही। 'संस्कृत-गोष्ठी' का सञ्चालन **पं० ओमनारायण द्विवेदी** तथा 'हिन्दी-सभा' का सञ्चालन **हरिराम सावला, न्यासी कोषाध्यक्ष** द्वारा किया गया।

* * *

दकारादि

श्रीदुर्गा-नाम-साहस्त्रम्

॥ पूर्व-पीठिका ॥

॥ श्रीदेव्युवाच ॥

मम नाम - सहस्त्रं च, शिव ! पूर्व - विनिर्मितम् । तत् पठ्यतां विधानेन, तदा सर्वं भविष्यति ।।१

॥ श्रीशिव उवाच ॥

इत्युक्त्वा पार्वती देवी, श्रावयामास तच्च तान् । तदेव नाम - साहस्त्रं, दकारादि वरानने! ।।२
रोग-दारिद्र्य-दौर्भाग्य-शोक - दुःख - विनाशकम् । सर्वासां पूजितं नाम, श्रीदुर्गा देवता मता ।।३
निज - बीजं भवेद् बीजं, मन्त्रं कीलकमुच्यते । सर्वाशा - पूरणे देवि! विनियोगः प्रकीर्तितः ।।४

॥ नाम-साहस्त्रम् ॥

दुं दुर्गा दुर्गति - हरा, दुर्गा - चल - निवासिनी ।। दुर्ग-मार्गानुसञ्चारा, दुर्ग - मार्ग - निवासिनी ।।५
दुर्ग - मार्ग - प्रविष्टा च, दुर्ग - मार्ग - प्रवेशिनी । दुर्ग-मार्ग-कृतावासा, दुर्ग - मार्ग - जय - प्रिया ।।६
दुर्ग-मार्ग-गृहीतार्च्चा, दुर्ग-मार्ग-स्थितात्मिका । दुर्ग-मार्ग-स्तुति-परा, दुर्ग-मार्ग-स्मृति-परा ।।७
दुर्ग-मार्ग-सदा - स्थाली, दुर्ग-मार्ग-रति-प्रिया । दुर्ग-मार्ग-स्थल-स्थाना, दुर्ग-मार्ग-विलासिनी ।।८
दुर्ग-मार्ग-व्यक्त - वस्त्रा, दुर्ग - मार्ग - प्रवर्त्तिनी । दुर्गासुर - निहन्त्री च, दुर्गासुर - निसूदिनी ।।९
दुर्गासुर - हरा दूति, दुर्गासुर - विनाशिनी । दुर्गासुर - वधोन्मत्ता, दुर्गासुर - वधोत्सुका ।।१०
दुर्गासुर - वधोत्साहा, दुर्गासुर - वधोद्यता । दुर्गासुर - वध - प्रेप्सुर्दुर्गासुर - मखान्त - कृत् ।।११
दुर्गासुर - ध्वंस- तोषा, दुर्ग - दानव-दारिणी । दुर्ग - विद्रावण - करी, दुर्ग - विद्रावणी सदा ।।१२
दुर्ग-विक्षोभन - करी, दुर्ग - शीर्ष - निकृन्तनी । दुर्ग - विध्वंसन - करी, दुर्ग - दैत्य-निकृन्तनी ।।१३
दुर्ग-दैत्य-प्राण-हरा, दुर्ग-दैत्यान्त-कारिणी । दुर्ग - दैत्य - हर - त्राता, दुर्ग - दैत्यासृगुन्मदा ।।१४
दुर्ग - दैत्याशन - करी, दुर्ग - चर्माम्बरावृता । दुर्ग - युद्धोत्सव - करी, दुर्ग - युद्ध - विशारदा ।।१५
दुर्ग-युद्धासव - रता, दुर्ग - युद्ध - विमर्दिनी । दुर्ग-युद्ध - हास्य - रता, दुर्ग - युद्धाट्ट - हासिनी ।।१६
दुर्ग - युद्ध - महा - मत्ता, दुर्ग - युद्धानुसारिणी । दुर्ग - युद्धोत्सवोत्साहा, दुर्ग - देश-निषेविणी ।।१७
दुर्ग-देश - वास - रता, दुर्ग-देश-विलासिनी । दुर्ग - देशार्च्चन - रता, दुर्ग-देश - जन - प्रिया ।।१८
दुर्गम - स्थान - संस्थाना, दुर्गम-ध्यान-साधना । दुर्गमा दुर्गम - ध्याना, दुर्गमात्म - स्वरूपिणी ।।१९
दुर्गमागम - सन्धाना, दुर्गमागम - संस्तुता । दुर्गमागम - दुर्ज्ञेया, दुर्गम - श्रुति - सम्मता ।।२०
दुर्गम-श्रुति - मान्या च, दुर्गम - श्रुति - पूजिता । दुर्गम - श्रुति - सुप्रीता, दुर्गम - श्रुति - हर्षदा ।।२१
दुर्गम-श्रुति - संस्थाना, दुर्गम - श्रुति - मानिता । दुर्गमाचार - सन्तुष्टा, दुर्गमाचार - तोषिता ।।२२
दुर्गमाचार - निर्वृत्ता, दुर्गमाचार - पूजिता । दुर्गमाचार - वशिता, दुर्गम-स्थान - दायिनी ।।२३
दुर्गम - प्रेम - निरता, दुर्गम - द्रविण - प्रदा । दुर्गमाम्बुज - मध्यस्था, दुर्गमाम्बुज - वासिनी ।।२४
दुर्ग-नाडी-मार्ग-गतिः, दुर्ग-नाडी - प्रचारिणी । दुर्ग-नाडी-पद्म-रता, दुर्ग - नाड्यम्बुज - स्थिता ।।२५
दुर्ग-नाडी-गताऽऽयाता, दुर्ग-नाडी-कृतास्पदा । दुर्ग-नाडी - रति-रता, दुर्ग - नाडीश - संस्तुता ।।२६
दुर्ग-नाडीश्वर-रता, दुर्ग - नाडीश - चुम्बिता । दुर्ग-नाडीश-क्रोडस्था, दुर्ग - नाड्युत्थितोत्सुका ।।२७

दुर्ग- नाड्यारोहणा च, दुर्ग - नाडी - निषेविता । दरी-स्थाना दरी-स्थान-वासिनी दनुजान्त - कृत् ।।२८
दरी-कृत-तपस्या च, दरी - कृत - हरार्च्चना । दरी-जापित-दिष्टा च, दरी-कृत - रति - क्रिया ।।२९
दरी - कृत - हरार्हा च, दरी - क्रीडित - पुत्रिका । दरी-सन्दर्शन-रता, दरी-रोपित - वृश्चिका ।।३०
दरी-गुप्ति - कौतुकाढ्या, दरी-भ्रमण - तत्परा । दनुजान्त - करी दीना, दनु - सन्तान - दारिणी ।।३१
दनुज - ध्वंसिनी दूता, दनुजेन्द्र - विनाशिनी । दानव - ध्वंसिनी देवी, दानवानां - भयङ्करी ।।३२
दानवी दानवाराध्या, दानवेन्द्र - वर - प्रदा । दानवेन्द्र - निहन्त्री च, दानव - द्वेषिणी - सती ।। ३३
दानवारि - प्रेम - रता, दानवारि - प्रपूजिता । दानवारि - कृतार्च्चा च, दानवारि - विभूतिदा ।।३४
दानवारि - महाऽऽनन्दा, दानवारि-रति-प्रिया। दानवारि - दान - रता, दानवारि - कृतास्पदा ।।३५
दानवारि-स्तुति-रता, दानवारि - स्मृति - प्रिया । दानवार्या - हार - रता, दानवारि - प्रबोधिनी ।।३६
दानवारि-धृत-प्रेमा, दुःख-शोक-विमोचिनी । दुःख-हन्त्री दुःख - दात्री, दुःख-निर्मूल-कारिणी ।।३७
दुःख-निर्मूलन-करी, दुःख-दाय्यरि-नाशिनी । दुःख-हरा दुःख - नाशा, दुःख - ग्रामा दुरासदा ।।३८
दुःख-हीना दुःख-धीरा, द्रविणाचार - दायिनी । द्रविणोत्सर्ग-सन्तुष्टा, द्रविण - त्याग - तोषिका ।।३९
द्रविण-स्पर्श-सन्तुष्टा, द्रविण-स्पर्श - मानदा । द्रविण-स्पर्श-हर्षाढ्या, द्रविण - स्पर्श - तुष्टिदा ।।४०
द्रविण - स्पर्शन - करी, द्रविण - स्पर्शनातुरा । द्रविण - स्पर्शनोत्साहा, द्रविण - स्पर्श-साधिता ।।४१
द्रविण-स्पर्शन - मता, द्रविण-स्पर्श-पुत्रिका । द्रविण-स्पर्श-रक्षिणी, द्रविण - स्तोम - दायिनी ।।४२
द्रविणाकर्षण - करी, द्रविणौघ - विसर्जिनी । द्रविणाचल - दानाढ्या, द्रविणाचल - वासिनी ।।४३
दीन-माता दीन-बन्धुर्दीन - विघ्न- विनाशिनी । दीन-सेव्या दीन-सिद्धा, दीन-साध्या दिगम्बरी ।।४४
दीन-गेह-कृतानन्दा, दीन-गेह - विलासिनी । दीन-भाव - प्रेम - रता, दीन - भाव - विनोदिनी ।।४५
दीन-मानव - चेतःस्था, दीन - मानव - हर्षदा । दीन - दैन्य - विघातेच्छार्दीन - द्रविण - दायिनी ।।४६
दीन-साधन - सन्तुष्टा, दीन - दर्शन - दायिनी । दीन-पुत्रादि-दात्री च, दीन-सम्पद्-विधायिनी ।।४७
दत्तात्रेय - ध्यान - रता, दत्तात्रेय - प्रपूजिता । दत्तात्रेयर्षि - संसिद्धा, दत्तात्रेय - विभाविता ।।४८
दत्तात्रेय - कृतार्हा च, दत्तात्रेय - प्रसाधिता । दत्तात्रेय - हर्ष - दात्री, दत्तात्रेय - सुख - प्रदा ।।४९
दत्तात्रेय - स्तुता चैव, दत्तात्रेय - नुता सदा। दत्तात्रेय - प्रेम - रता, दत्तात्रेयानुमानिता ।।५०
दत्तात्रेय - समुद्गीता, दत्तात्रेय - कुटुम्बिनी । दत्तात्रेय - प्राण - तुल्या, दत्तात्रेय - शरीरिणी ।।५१
दत्तात्रेय - कृताऽऽनन्दा, दत्तात्रेयांश - सम्भवा । दत्तात्रेय - विभूतिस्था, दत्तात्रेयानुसारिणी ।।५२
दत्तात्रेय - गीति - रता, दत्तात्रेय - धन - प्रदा । दत्तात्रेय - दुःख - हरा, दत्तात्रेय - वर - प्रदा ।।५३
दत्तात्रेय - ज्ञान - दात्री, दत्तात्रेय - भयापहा । देव-कन्या देव-मान्या, देव - दुःख - विनाशिनी ।।५४
देव-सिद्धा देव - पूज्या, देवेज्या देव-वन्दिता । देव-मान्या देव - धन्या, देव - विघ्न -विनाशिनी ।।५५
देव - रम्या देव - रता, देव - कौतुक - तत्परा । देव-क्रीडा, देव-व्रीडा, देव- वैरि - विनाशिनी ।।५६
देव-कामा देव-रामा, देव - द्विष्ट - विनाशिनी । देव - देव - प्रिया देवी, देव - दानव - वन्दिता ।।५७
देव - देव - रतानन्दा, देव - देव - वरोत्सुका । देव - देव - प्रेम - रता, देव - देव - प्रियम्वदा ।।५८
देव - देव - प्राण - तुल्या, देव-देव-नितम्बिनी । देव-देव - हृत - मना, देव - देव - सुखावहा ।।५९
देव-देव-क्रोड-रता, देव - देव - सुख-प्रदा । देव - देव - महाऽऽनन्दा, देव - देव-प्रचुम्बिका ।।६०

देव - देवोपभुक्ता च, देव - देवानुसेविता । देव-देव-गत-प्राणा, देव-देव-गतात्मिका ।।६१
देव-देव-हर्ष-दात्री, देव - देव - सुख-प्रदा । देव - देव - महाऽऽमोदा, देव - देव - विलासिनी ।।६२
देव - देव - धर्म - पत्नी, देव - देव - मनो-गता । देव - देव - वधूर्देव, देव - देवार्चन - प्रिया। ६३
देव-देवाङ्क - निलया, देव - देवाङ्ग - शायिनी । देव - देवाङ्क - सुखिनी, देव - देवाङ्ग-वासिनी ।।६४
देव - देवाङ्ग - भूषा च, देव-देवाङ्ग - भूषणा । देव - देव - प्रिय - करी, देव-देवाप्रियान्त-कृत् ।।६५
देव-देव-प्रिय - प्राणा, देव-देव-प्रियात्मिका । देव - देवार्चक - प्राणा, देव - देवार्चक - प्रिया ।।६६
देव - देवार्चकोत्साहा, देव - देवार्चन - प्रिया । देव- देवार्चकाविघ्ना, देव - देव - प्रसूरपि ।।६७
देव - देवस्य - जननी, देव - देव - विधायिनी । देव - देवस्य - रमणी, देव - देव - हृदाश्रया ।।६८
देव - देवस्येष्ट - देवी च, देव-तापस-तापिनी । देवता - भाव - सन्तुष्टा, देवता-भाव-तोषिता ।।६९
देवता-भाव-वरदा, देवता-भाव - सिद्धिदा । देवता - भाव - संसिद्धा, देवता - भाव-सम्भवा ।।७०
देवता - भाव - सुखिनीर्देवता - भाव - वन्दिता । देवता - भाव - सुप्रीता, देवता - भाव-हर्षदा ।।७१
देवता - विघ्न - हन्त्री च, देवता-द्विष्ट-नाशिनी । देवता - पूजित - पदा, देवता - प्रेम - तोषिता ।।७२
देवतागार - निलया, देवता - सौख्य - दायिनी । देवता-निज - भावा च, देवता - हृत - मानसा ।।७३
देवता-कृत-पादार्चा, देवता-हृत-भक्तिका । देवता - गर्व - मध्यस्था, देवता - देवता - दनुः ।।७४
दुं दुर्गायै नमो नाम्नी, दूं फट् - मन्त्र-स्वरूपिणी । दूं नमो मन्त्र - रूपा च, दूं नमो - मूर्त्तिकात्मिका ।।७५
दूर - दर्शि - प्रिया दुष्टा, दुष्ट-भूत-निषेविता । दूर-दर्शि - प्रेम - रता, दूर - दर्शि - प्रियम्वदा ।।७६
दूर-दर्शि-सिद्धि-दात्री, दूर - दर्शि - प्रतोषिता । दूर-दर्शि-कण्ठ - संस्था, दूर - दर्शि-प्रहर्षिता ।।७७
दूर-दर्शि - गृहीतार्चा, दूर - दर्शि - प्रतर्पिता । दूर - दर्शि - प्राण - तुल्या, दूर-दर्शि-सुख-प्रदा ।।७८
दूर-दर्शि-भ्रान्ति-हरा, दूर - दर्शि - हृदास्पदा । दूर - दर्श्यरि - विद्भावा, दीर्घ-दर्शि-प्रमोदिनी ।।७९
दीर्घ-दर्शि-प्राण-तुल्या, दीर्घ-दर्शि - वर-प्रदा । दीर्घ - दर्शि - हर्ष - दात्री, दीर्घ-दर्शि-प्रहर्षिता ।।८०
दीर्घ-दर्शि-महाऽऽनन्दा, दीर्घ - दर्शि-गृहालया । दीर्घ - दर्शि-गृहीतार्चा, दीर्घ - दर्शि-हृतार्हणा ।।८१
दया दान - वती दात्री, दयालुर्दीन - वत्सला । दयार्द्रा च दया-शीला, दयाढ्या च दयात्मिका ।।८२
दयाऽम्बुधिर्दया-सारा, दया-सागर-पारगा । दया - सिन्धुर्दया-भारा, दया-वत्-करुणा-करी ।।८३
दया-वद्-वत्सला देवी, दया दान-रता-सदा । दया-वद्-भक्ति-सुखिनी, दया-वत् - परितोषिता ।।८४
दया-वत्-स्नेह-निरता, दया-वत्-प्रतिपादिका । दया-वत्-त्राण-कर्त्री च, दया-वन्मुक्ति - दायिनी ।।८५
दया-वद्-भाव-सन्तुष्टा, दया-वत्-परितोषिता । दया-वत्-तारण-परा, दया-वत्-सिद्धि - दायिनी ।।८६
दया-वत्-पुत्र-वद्-भावा, दया-वत्-पुत्र-रूपिणी । दया-वद्-देह-निलया, दया-बन्धु-दयाऽऽश्रया ।।८७
दयालु-वात्सल्य-करी, दयालु-सिद्धि - दायिनी । दयालु - शरणासक्ता, दयालु - देह - मन्दिरा ।।८८
दयालु-भक्ति-भावस्था, दयालु-प्राण - रूपिणी । दयालु-सुखदा दम्भा, दयालु - प्रेम - वर्षिणी ।।८९
दयालु - वशगा दीर्घा, दीर्घाङ्गी दीर्घ-लोचना । दीर्घ - नेत्रा दीर्घ - चक्षुर्दीर्घ - बाहु-लतात्मिका ।।९०
दीर्घ-केशी दीर्घ-मुखी, दीर्घ - घोणा च दारुणा । दारुणासुर - हन्त्री च, दारुणासुर - दारिणी ।।९१
दारुणाहव - कर्त्री च, दारुणाहव - हर्षिता । दारुणाहव - होमाढ्या, दारुणाचल - नाशिनी ।।९२
दारुणाचार - निरता, दारुणोत्सव - हर्षिता । दारुणोद्यत - रूपा च, दारुणारि - निवारिणी ।।९३

दारुणेक्षण - संयुक्ता, दोश्चतुष्क - विराजिता । दश-दोष्का दश - भुजा, दश-बाहु - विराजिता ।।९४
दशास्त्र-धारिणी देवी, दश-दिक्-ख्यात-विक्रमा । दश-रथार्च्चित-पदा, दाशरथि - प्रिया सदा ।।९५
दाशरथि-प्रेम - तुष्टा, दाशरथि - रति - प्रिया । दाशरथि - प्रिय - करी, दाशरथि - प्रियम्वदा ।।९६
दाशरथीष्ट - सन्दात्री, दाशरथीष्ट - देवता । दाशरथि - द्वेषि - नाशा, दाशरथ्यानुकूल्यदा ।।९७
दाशरथि - प्रिय - तमा, दाशरथि - प्रपूजिता । दशाननारि - सम्पूज्या, दशाननारि - देवता ।।९८
दशाननारि - प्रमदा, दशननारि - जन्म - भूः । दशाननारि - रतिदा, दशाननारि - सेविता ।।९९
दशाननारि - सुखदा, दशाननारि - वैरि - हृत् । दशाननारीष्ट - देवी, दश - ग्रीवारि - वन्दिता ।।१००
दश-ग्रीवारि-जननी, दश - ग्रीवारि-भाविनी । दश-ग्रीवारि-सहिता, दश - ग्रीव - सभाजिता ।।१०१
दश - ग्रीवारि - रमणी, दश - ग्रीव - वधूरपि । दश-ग्रीव-नाश-कर्त्री, दश-ग्रीव-वर-प्रदा ।।१०२
दश-ग्रीव-पुरस्था च, दश-ग्रीव-वधोत्सुका । दश-ग्रीव-प्रीति-दात्री, दश - ग्रीव - विनाशिनी ।।१०३
दश - ग्रीवाहव - करी, दश - ग्रीवानपायिनी । दश-ग्रीव-प्रिया - वन्द्या, दश - ग्रीवाहृता तथा ।।१०४
दश-ग्रीवाहित-करी, दश-ग्रीवेश्वर - प्रिया । दश-ग्रीवेश्वर-प्राणा, दश - ग्रीव - वर - प्रदा ।।१०५
दश - ग्रीवेश्वर - रता, दश-वर्षीय-कन्यका । दश-वर्षीय-बाला च, दश - वर्षीय - वासिनी ।।१०६
दश-पाप-हरा दम्या, दश-हस्त-विभूषिता । दश-शस्त्र-लसद्-दोष्का, दश-दिक्-पाल-वन्दिता ।।१०७
दशावतार - रूपा च, दशावतार - रूपिणी । दश-विद्याऽभिन्न-देवी, दश-प्राण - स्वरूपिणी ।।१०८
दश-विद्या-स्वरूपा च, दश-विद्या-मयी तथा । दृक्-स्वरूपा दृक्-प्रदात्री, दृग्-रूपा दृक्-प्रकाशिनी ।।१०९
दिगम्बरा दिगन्तस्था, दिगम्बर - विलासिनी । दिगम्बर - समाजस्था, दिगम्बर - प्रपूजिता ।।११०
दिगम्बर - सहचरी, दिगम्बर - कृतास्पदा । दिगम्बर - हृता - चित्ता, दिगम्बर-कथा-प्रिया ।।१११
दिगम्बर - गुण - रता, दिगम्बर - स्वरूपिणी । दिगम्बर - शिरोधार्या, दिगम्बर - हृताश्रया ।।११२
दिगम्बर - प्रेम - रता, दिगम्बर - रतातुरा । दिगम्बरी - स्वरूपा च, दिगम्बरी - गणार्चिता ।।११३
दिगम्बरी-गण-प्राणा, दिगम्बरी - गण-प्रिया । दिगम्बरी - गणाराध्या, दिगम्बरी - गणेश्वरी ।।११४
दिगम्बर-गण-स्पर्शा, दीर्घिका-पान-विह्वला । दिगम्बरी-कोटि - वृता, दिगम्बरी - गणावृता ।।११५
दुरन्ता दुष्कृति - हरा, दुर्ध्येया दुरति - क्रमा । दुरन्त-दानव - द्वेष्टी, दुरन्त - दनुजान्त - कृत् ।।११६
दुरन्त-पाप-हन्त्री च, दस्त्र-निस्तार - कारिणी । दस्त्र-मानस-संस्थाना, दस्त्र - ज्ञान - विवर्द्धिनी ।।११७
दस्त्र-सम्भोग-जननी, दस्त्र-सम्भोग-दायिनी । दस्त्र-सम्भोग-भवना, दस्त्र - विद्या - विधायिनी ।।११८
दस्त्रोद्वेग - हरा दस्त्र - जननी दस्त्र - सुन्दरी । दस्त्र-भक्ति-विधाज्ञाना, दस्त्र-द्विष्ट - विनाशिनी ।।११९
दस्त्रापकार-दमिनी च, दस्त्र-सिद्धि - विधायिनी । दस्त्र - ताराऽऽराधिता च, दस्त्र-मातु-प्रपूजिता ।।१२०
दस्त्र-दैन्य-हरा चैव, दस्त्र - तात - निषेविता । दस्त्र-पितृ - शत-ज्योतिर्दस्त्र - कौशल - दायिनी ।।१२१
दश-शीर्षारि - सहिता, दश-शीर्षारि-कामिनी । दश-शीर्ष-पुरी देवी, दश - शीर्ष - सभाजिता ।।१२२
दश-शीर्षारि-सु-प्रीता, दश-शीर्ष-वधू-प्रिया । दश - शीर्ष - शिरच्छेत्री, दश-शीर्ष-नितम्बिनी ।।१२३
दश-शीर्ष-हर - प्राणा, दश-शीर्ष-हरात्मिका । दश-शीर्ष-हराराध्या, दश-शीर्षारि - वन्दिता ।।१२४
दश-शीर्षारि-सुखदा, दश-शीर्ष - कपालिनी । दश-शीर्ष-ज्ञान-दात्री, दश - शीर्षारि - देहिता ।।१२५
दश - शीर्ष - वधोपात्त - श्रीरामचन्द्र - रूपता । दश-शीर्ष-राष्ट्र-देवी, दश-शीर्षारि-सारिणी ।।१२६

दश-शीर्ष-भ्रातृ-तुष्टा, दश-शीर्ष-वधू-प्रिया । दश-शीर्ष-वधू - प्राणा, दश-शीर्ष-वधू-रता ।।१२७
दैत्य - गुरु - रता - साध्वी, दैत्य - गुरु - प्रपूजिता । दैत्य-गुरूपदेष्ट्री च, दैत्य-गुरु-निषेविता ।।१२८
दैत्य-गुरु-गत-प्राणा, दैत्य - गुर्त्ताप - नाशिनी । दुरन्त-दुःख - शमनी, दुरन्त - दमनी-तमी ।।१२९
दुरन्त - शोक - शमनी, दुरन्त - रोग - नाशिनी । दुरन्त - वैरि - दमनी, दुरन्त-दैत्य-नाशिनी ।।१३०
दुरन्त - कलुषघ्नी च, दुष्कृति-स्तोम-नाशिनी । दुराशया दुराधारा, दुर्जया दुष्ट - कामिनी ।।१३१
दशनीया च दृश्या च, द्रष्टा च दृष्टि-गोचरा । दूती - याग - प्रिया दूती, दूती-याग-कर-प्रिया ।।१३२
दूती-याग-करानन्दा, दूती - याग-सुख-प्रदा । दूती-याग-करायाता, दूती - याग - प्रमोदिनी ।।१३३
दुर्वासः-पूजिता चैव, दुर्वासो - मुनि - भाविता । दुर्वासोऽर्चित - पादा च, दुर्वासो-मुनि-पूजिता ।।१३४
दुर्वासो-मुनि-वन्द्या च, दुर्वासो-मुनि - देवता । दुर्वासो-मुनि-माता च, दुर्वासो-मुनि - सिद्धिदा ।।१३५
दुर्वासो-मुनि-भावस्था, दुर्वासो - मुनि - सेविता । दुर्वासो-मुनि-चित्तस्था, दुर्वासो-मुनि-मण्डिता ।।१३६
दुर्वासो - मुनि - सञ्चारा, दुर्वासो - हृदयङ्गमा । दुर्वासो - हृदयाराध्या, दुर्वासो-हृत्-सरोजगा ।।१३७
दुर्वासस्तापसाराध्या, दुर्वासस्तापसाश्रया । दुर्वासस्तापस-रता, दुर्वासस्तापसेश्वरी ।।१३८
दुर्वासो-मुनि-कन्या च, दुर्वासोद्भूत-सिद्धिदा । दर - रात्री दर - हरा, दर - युक्ता दरापहा ।।१३९
दरघ्नी दर - हन्त्री च, दर - युक्ता दराश्रया ।।१४०
दर - स्मेरा दरापाङ्गी, दया-दात्री दयाऽऽश्रया । दस्र-पूज्या दस्र - माता, दस्र - देवी दरोन्मदा ।।१४१
दस्र-सिद्धा दस्र-संस्था, दस्र-ताप-विमोचिनी । दस्र-क्षोभ-हरा-नित्या, दस्र-लोक-गतात्मिका ।।१४२
दैत्य - गुर्वङ्गना-वन्द्या, दैत्य - गुर्वङ्गना-प्रिया । दैत्य - गुर्वङ्गना-सिद्धा, दैत्य - गुर्वङ्गनोत्सुका ।।१४३
दैत्य-गुरु-प्रिय-तमा, दैत्य-गुरु-निषेविता । देव - गुरु - प्रसू - रूपा, देव - गुरु - कृतार्हणा ।।१४४
देव - गुरु - प्रेम-युता, देव - गुर्वनुमानिता । देव - गुरु - प्रभावज्ञा, देव - गुरु - सुख - प्रदा ।।१४५
देव-गुरु -ज्ञान-दात्री, देव - गुरु-प्रमोदिनी । दैत्य-स्त्री-गण-सम्पूज्या, दैत्य-स्त्री-गण-पूजिता ।।१४६
दैत्य-स्त्री-गण-रूपा च, दैत्य-स्त्री-चित्त-हारिणी । देव-स्त्री-गण-पूज्या च, देव-स्त्री-गण-वन्दिता ।।१४७
देव-स्त्री-गण-चित्तस्था, देव-स्त्री-गण-भूषिता । देव-स्त्री-गण-संसिद्धा, देव-स्त्री-गण - तोषिता ।।१४८
देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ - चारु-चामर - वीजिता । देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ-चारु-गन्ध-विलेपिता ।।१४९
देवाङ्गना-धृतादर्श - दृष्ट्यर्थ - मुख - चन्द्रमा । देवाङ्गनोत्सृष्ट - नाग - वल्ली-दल-कृतोत्सुका ।।१५०
देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ- दीप-माला-विलोकना । देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ-धूप-घ्राण - विनोदिनी।। १५१
देव-नारी-कर-गत - वासकासव - पायिनी । देव-नारी - कङ्कतिका-कृत्त - केश - निमार्जना ।।१५२
देव-नारी-सेव्य-गात्रा, देव-नारी - कृतोत्सुका । देव-नारी-विरचिता-पुष्प - माला - विराजिता ।।१५३
देव-नारी--विचित्राङ्गी, देव - स्त्री-दत्त-भोजना । देव-स्त्री-गण-गीता च, देव-स्त्री-गीत-सोत्सुका ।।१५४
देव-स्त्री-नृत्य-सुखिनी, देव-स्त्री-नृत्य-दर्शिनी । देव-स्त्री-योजित-लसद्-रत्न - पादु - पदाम्बुजा ।।१५५
देव-स्त्री-गण-विस्तीर्ण - चारु-तल्प-निषेदुषी । देव-नारी-चारु-कराकलिताङ्घ्र्यादि - देहिका ।।१५६
देव-नारी-कर-व्यग्र-ताल-वृन्त-मरुत्-सखा । देव-नारी-वेणु-वीणा-नाद - सोत्कण्ठ - मानसा ।।१५७
देव-कोटि-स्तुति-नुता, देव-कोटि-कृतार्हणा । देव-कोटि-गीत-गुणा, देव-कोटि-कृत-स्तुतिः ।।१५८
दन्त-दष्ट्योद्वेग- फला, देव- कोलाहलाकुला । द्वेष - राग - परित्यक्ता, द्वेष - राग-विवर्जिता ।।१५९

दाम-पूज्या दाम - भूषा, दामोदर - विलासिनी । दामोदर - प्रेम - रता, दामोदर - भगिन्यपि ।।१६०
दामोदर - प्रसूर्दामोदर - पत्नी - पति - व्रता । दामोदराभिन्न - देहा, दामोदर - रति - प्रिया ।।१६१
दामोदराभिन्न - तनुर्दामोदर - कृतास्पदा । दामोदर - कृत - प्राणा, दामोदर - गतात्मिका ।।१६२
दामोदर - कौतुकाढ्या, दामोदर - कलाऽकला । दामोदरा - लिङ्गिताङ्गी, दामोदर - कुतूहला ।।१६३
दामोदर - कृताह्लादा, दामोदर - सु - चुम्बिता । दामोदर - सुताकृष्टा, दामोदर - सुख - प्रदा ।।१६४
दामोदर - सहाढ्या च, दामोदर - सहायिनी । दामोदर - गुणज्ञा च, दामोदर - वर - प्रदा ।।१६५
दामोदरानुकूला च, दामोदर - नितम्बिनी । दामोदर - जल - क्रीडा - कौशला - दर्शन-प्रिया ।।१६६
दामोदर - बल - क्रीडा - त्यक्त-स्वजन-सौहृदा । दामोदर-लसद्-रास-केलि-कौतुकिनी तथा ।।१६७
दामोदर - भ्रातृका च, दामोदर - परायणा । दामोदर - धरा दामोदर - वैरि - विनाशिनी ।।१६८
दामोदरोप - जाया च, दामोदर - निमन्त्रिता । दामोदर - पराभूता, दामोदर - पराजिता ।।१६९
दामोदर - समाक्रान्ता, दामोदर - हताशुभा । दामोदरोत्सव - रता, दामोदरोत्सव - वहा ।।१७०
दामोदर - स्तन्य - दात्री, दामोदर - गवेषिता । दमन्यती - सिद्धि - दात्री, दमयन्ती - प्रसाधिता ।।१७१
दमयन्तीष्ट - देवी च, दमयन्ती - स्वरूपिणी । दमयन्ती - कृतार्चा च, दमनर्षि - विभाविता ।।१७२
दमनर्षि - प्राण - तुल्या, दमनर्षि - स्वरूपिणी । दमनर्षि - स्वरूपा च, दम्भ - पूरित - विग्रहा ।।१७३
दम्भ-हन्त्री दम्भ-दात्री, दम्भ-लोक-विमोहिनी । दम्भ-शीला दम्भ - हरा, दम्भ-वत्-परिमर्दिनी ।।१७४
दम्भ - रूपा दम्भ-करी, दम्भ-सन्तान-दारिणी । दत्त-मोक्षा दत्त-धना, दत्तारोग्याथ दाम्भिका ।। १७५
दत्त-पुत्रा दत्त - दारा, दत्त - हारा च दारिका । दत्त-भोगा दत्त - शोका, दत्त-हस्त्यादि-वाहना ।।१७६
दत्त-मतिर्दत्त-भार्या, दत्त - शास्त्राव - बोधिका । दत्त-पाना दत्त - दाना, दत्त-दारिद्र्य-नाशिनी ।।१७७
दत्त-सौधावनी - वासा, दत्त-स्वर्गा च दासदा । दास्य-तुष्टा दास्य - हरा, दास-दासी-शत-प्रदा ।।१७८
दार - रूपा दार-वासा, दार-वासि-हृदास्पदा । दार-वासि - जनाराध्या, दार-वासि-जन-प्रिया ।।१७९
दार - वासि, विनिर्मिता, दार-वासि-समर्चिता । दार-वास्याहृत-प्राणा, दार-वास्यरि - नाशिनी ।।१८०
दार-वासि-विघ्न-हरा, दार - वासि - विमुक्तिदा । दाराग्नि-रूपिणी दारा, दार-कार्यरि-नाशिनी ।।१८१
दम्पती दम्पतीष्टा च, दम्पती - प्राण - रूपिका । दम्पति - स्नेह - निरता, दाम्पत्य-साधन-प्रिया ।।१८२
दाम्पत्य-सुख - सेना च, दाम्पत्य-सुख-दायिनी । दम्पत्याचार - निरता, दाम्पत्यामोद - मोदिता ।।१८३
दम्पत्यामोद - सुखिनी, दाम्पत्याह्लाद-कारिणी । दम्पतीष्ट - पाद - पद्मा, दाम्पत्य-प्रेम-रूपिणी ।।१८४
दाम्पत्य-भोग-भवना, दाडिमी-फल - भोजिनी । दाडिमी-फल-सन्तुष्टा, दाडिमी - फल-मानसा ।।१८५
दाडिमी-वृक्ष-संस्थाना, दाडिमी-वृक्ष - वासिनी । दाडिमी-वृक्ष-रूपा च, दाडिमी-वन-वासिनी ।।१८६
दाडिमी - फल - साम्योरु-पयोधर-विवर्जिता । दक्षिणा दक्षिणा - रूपा, दक्षिणा-रूप-धारिणी ।।१८७
दक्ष - कन्या दक्ष-पुत्री, दक्ष-माता च दक्ष-सूः । दक्ष-गोत्रा दक्ष-सुता, दक्ष - यज्ञ - विनाशिनी ।।१८८
दक्ष-यज्ञ-नाश-कर्त्री, दक्ष - यज्ञान्त - कारिणी । दक्ष - प्रसूतिर्दक्षेज्या, दक्ष - वंशैक - पावनी ।।१८९
दक्षात्मजा दक्ष - सूनूर्दक्षजा दक्ष - जातिका । दक्ष - जन्मा दक्ष - जनुर्दक्ष - देह - समुद्भवा ।।१९०
दक्ष - जनिर्दक्ष-याग - ध्वंसिनी दक्ष - कन्यका । दक्षिणाचार - निरता, दक्षिणाचार - तुष्टिदा ।।१९१
दक्षिणाचार - संसिद्धा, दक्षिणाचार - भाविता । दक्षिणाचार - सुखिनी, दक्षिणाचार - साधिता ।।१९२

दक्षिणाचार - मोक्षाप्तिर्दक्षिणाचार - वन्दिता । दक्षिणाचार - शरणा, दक्षिणाचार - हर्षिता ।।१९३
द्वार-पाल-प्रिया द्वार - वासिनी द्वार-संस्थिता । द्वार-रूपा द्वार-संस्था, द्वार - देश - निवासिनी ।।१९४
द्वार-कारी द्वार-धात्री, दोष-मात्र - विवर्जिता । दोष-करा दोष - हरा, दोष-राशि-विनाशिनी ।।१९५
दोषाकर - विभूषाढ्या, दोषाकर - कपालिनी । दोषाकर - सहस्राभा, दोषाकर - समानना ।।१९६
दोषाकर - मुखी दिव्या, दोषाकर - कराग्रजा । दोषाकर-सम - ज्योतिर्दोषाकर - सु - शीतला ।।१९७
दोषाकर - 'श्रेणिर्दोष - सदृशापाङ्ग - वीक्षणा । दोषाकरेष्ट - देवी च, दोषाकर - निषेविता ।।१९८
दोषाकर - प्राण - रूपा, दोषाकर - मरीचिका । दोषाकरोल्लसद्-भाला, दोषाकर-सु-हर्षिणी ।।१९९
दोषाकर-शिरो - भूषा, दोषाकर-वधू - प्रिया । दोषाकर - वधू - प्राणा, दोषाकर - वधूर्मता ।।२००
दोषाकर - वधू - प्रीता, दोषाकर - वधूरपि । दोषा-पूज्या तथा दोषा-पूजिता दोष - हारिणी ।।२०१
दोषा-जाप - महाऽऽनन्दा, दोषा-जाप-परायणा । दोषा-पुरश्चार-रता, दोषा - पूजक - पुत्रिका ।।२०२
दोषा-पूजक - वात्सल्य - कारिणी-जगदम्बिका । दोषा-पूजक-वैरिणी, दोषा-पूजक-विघ्न-हृत् ।।२०३
दोषा-पूजक-सन्तुष्टा, दोषा-पूजक-मुक्तिदा । दम-प्रसून-सम्पूज्या, दम - पुष्प - प्रिया सदा ।।२०४
दुर्योधन - प्रपूज्या च, दुःशासन - समर्चिता । दण्ड-पाणि-प्रिया दण्ड-पाणि-माता दया-निधिः ।।२०५
दण्ड-पाणि-समाराध्या, दण्ड-पाणि - प्रपूजिता । दण्ड-पाणि-गृहासक्ता, दण्ड-पाणि-प्रियम्वदा ।।२०६
दण्ड-पाणि-प्रियतमा, दण्ड-पाणि-मनोहरा । दण्ड-पाणि-हृत्-प्राणा, दण्ड-पाणि-सु-सिद्धिदा ।।२०७
दण्ड-पाणि-परासृष्टा, दण्ड-पाणि-प्रहर्षिता । दण्ड-पाणि-विघ्न-हरा, दण्ड-पाणि-शिरो-धृता ।।२०८
दण्ड-पाणि-प्राप्त-चर्या, दण्ड-पाण्युन्मुखी सदा । दण्ड-पाणि-प्राप्त-पदा, दण्ड-पाणि-वरोन्मुखी ।।२०९
दण्ड-हस्ता दण्ड-पाणिर्दण्ड-बाहु-दर्दरान्त-कृत् । दण्ड-दोष्का दण्ड-करा, दण्ड-चित्त-कृतास्पदा ।।२१०
दण्डि-विद्या दण्डि-माता, दण्डि-खण्डक-नाशिनी । दण्डि-प्रिया दण्डि-पूज्या, दण्डि-सन्तोष-दायिनी ।।२११
दस्यु-पूज्या दस्यु-रता, दस्यु-द्रविण-दायिनी । दस्यु-वर्ग-कृतार्हा च, दस्यु - वर्ग - विनाशिनी ।।२१२
दस्यु - निर्नाशिनी दस्यु-कुल-निर्न्नाशिनी तथा । दस्यु-प्रिय-करी दस्यु-नृत्य-दर्शन - तत्परा ।। २१३
दुष्ट-दण्ड - करी दुष्ट-वर्ग-विद्राविणी तथा । दुष्ट - वर्ग - निग्रहार्हा, दूषक - प्राण - नाशिनी ।।२१४
दूषकोत्ताप - जननी, दूषकारिष्ट - कारिणी । दूषक - द्वेषण - करी, दाहिका दहनात्मिका ।।२१५
दारुकारि - निहन्त्री च, दारुकेश्वर - पूजिता । दारकेश्वर - माता च, दारुकेश्वर - वन्दिता ।।२१६
दर्भ-हस्ता दर्भ - युता, दर्भ - कर्म - विवर्जिता । दर्भ - मयी दर्भ - तनुर्दर्भ-सर्वस्व-रूपिणी ।।२१७
दर्भ-कर्माचार - रता, दर्भ - हस्त - कृतार्हणा । दर्भानुकूला दार्भ-भार्या, दर्वी-पात्रानु-दामिनी ।।२१८
दम - घोष - प्रपूज्या च, दम - घोष-वर-प्रदा । दम-घोष-समाराध्या, दावाग्नि - रूपिणी तथा ।।२१९
दावाग्नि - रूपा दावाग्नि-निर्न्नाशित-महा-बला । दन्त-दंष्ट्रासुर-कला, दन्त - चर्चित - हस्तिका ।।२२०
दन्त - दंष्ट्र - स्यन्दना च, दन्त-निर्नाशितासुरा । दधि-पूज्या दधि-प्रीता, दधीचि-वर - दायिनी ।।२२१
दधीचीष्ट-देवता च, दधीचि - मोक्ष - दायिनी । दधीचि-दैन्य-हन्त्री च, दधीचि - दर - दारिणी ।।२२२
दधीचि-भक्ति-सुखिनी, दधीचि-मुनि-सेविता । दधीचि-ज्ञान-दात्री च, दधीचि-गुण - दायिनी ।।२२३
दधीचि-कुल-सम्भूषा, दक्षीचि-भुक्ति-मुक्तिदा । दधीचि-कुल-देवी च, दधीचि - कुल - देवता ।।२२४
दधीचि-कुल-गम्या च, दधीचि-कुल-पूजिता । दधीचि-सुख-दात्री च, दधीचि - दीन - हारिणी ।।२२५

दधीचि-दुःख-हन्त्री च, दधीचि-कुल-सुन्दरी । दधीचि-कुल-सम्भूता, दधीचि - कुल- मालिनी ।।२२६
दधीचि-दान-गम्या च, दधीचि - दान - मानिनी । दधीचि-दान-सन्तुष्टा, दधीचि-दान - देवता ।।२२७
दधीचि-जप-सम्प्रीता, दधीचि - जप - मानसा । दधीचि-जप-पूजाढ्या, दधीचि-जप-मालिका ।।२२८
दधीचि-जप-सन्तुष्टा, दधीचि-जप-तोषिणी । दधीचि-तपसाऽऽराध्या, दधीचि - शुभ- दायिनी ।२२९
दूर्वा दूर्वा - दल - श्यामा, दूर्वा-दल-सम-द्युतिः ।।२३०

॥ फल-श्रुति ॥

नाम्नां सहस्रं दुर्गायाः, दादीनामिति कीर्तितम् । यः पठेत् साधकाधीशः, सर्व-सिद्धिर्लभेत् तु सः ।।१
प्रातर्मध्याह्न-काले च, सन्ध्यायां नियतः शुचिः । तथाऽर्द्ध - रात्रि - समये, स महेश इवापरः ।।२
शक्ति-युक्तो महा-रात्रौ, महा - वीरः प्रपूजयेत् । महा - देवीं मकाराद्यैः, पञ्चभिर्द्रव्य - सत्तमैः ।।३
तत्पठेत् स्तुतिमिमां यः, स च सिद्धि - स्वरूप - धृक् ।।४
देवालये श्मशाने च, गङ्गा - तीरे निजे गृहे । वाराङ्गना - गृहे चैव, श्रीगुरोः सन्निधावपि ।।५
पर्वते प्रान्तरे घोरे, स्तोत्रमेतत् सदा पठेत् । दुर्गा - नाम - सहस्रं हि, दुर्गा पश्यति चक्षुषा ।।६
शतावृत्ति - तमे तस्य, पुरश्चरणमुच्यते । स्तुति-सारो निगदितः, किम्भूयः श्रोतुमिच्छसि ।।७

॥ श्रीकुलार्णवे दुर्गा-दकारादि-सहस्र-नाम-स्तोत्रम् ॥

* * *

कौल-कल्पतरु चण्डी मासिक (हिन्दी) के स्वामित्व तथा तत्सम्बन्धी विवरण

१- प्रकाशन का स्थान	प्रयाग
२- प्रकाशन की अवधि	त्रैमासिक
३- मुद्रक का नाम	श्री ऋतशील शर्मा
पता	परा-वाणी आध्यात्मिक शोध संस्थान, प्रयाग-६
४- प्रकाशक का नाम	श्री ऋतशील शर्मा
राष्ट्रीयता	भारतीय
५- सम्पादक का नाम	श्री ऋतशील शर्मा
राष्ट्रीयता	भारतीय

६- उन व्यक्तियों के नाम और पते जो इस पत्रिका के मालिक या साझेदार हैं या जो उसकी पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार हैं

— श्री ऋतशील शर्मा

मैं, ऋतशील शर्मा, घोषित करता हूँ कि ऊपर दिए गए विवरण मेरी पूरी जानकारी और विश्वास के अनुसार सही हैं।

— ऋतशील शर्मा (प्रकाशक)

दकारादि
श्रीदुर्गा - सहस्र - नामावलि

दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नामों से **'होम'** करने के लिए यहाँ हवनात्मक नामावली दी जा रही है। खोवे में शक्कर मिलाकर अथवा गौ-घृत के द्वारा श्रीदुर्गा जी के प्रत्येक **'नाम'-मन्त्र** से अग्नि में आहुति प्रदान करनी चाहिए। यदि **'हवन'** के स्थान पर **'जप'** करना हो तो, **'स्वाहा'** न कहे केवल **'नमः'** कहे। **'हवन'** के स्थान पर पूजन करना हो तो **'नमः स्वाहा'** के स्थान पर **'पूजयामि नमः'** कहे।

—सम्पादक

ॐ दुं दुर्गायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गति-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गा-चल-निवासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्गानुसञ्चारायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-निवासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-प्रविष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-प्रवेशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-कृतावासायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-जय-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-गृहीतार्च्चायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग—स्थितात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग—स्तुति-परायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-स्मृति-परायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-सदा-स्थाल्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग—रति-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-स्थल-स्थानायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग—विलासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-व्यक्त-वस्त्रायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-मार्ग-प्रवर्तिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-निहन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-निसूदिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दूत्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-वधोन्मत्तायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-वधोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-वधोत्साहायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-वधोद्यतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-वध-प्रेष्णवे नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-मखान्त-कृते नमः स्वाहा
ॐ दुर्गासुर-ध्वसं-तोषायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दानव-दारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-विद्रावण-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-विद्रावण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-विक्षोभण-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-शीर्ष-निकृन्तिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-विध्वंसन-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दैत्य-निकृन्तिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दैत्य-प्राण-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दैत्यान्त-कारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दैत्य-हर-त्राते नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दैत्यासृगुन्मदायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-दैत्याशन-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-चर्माम्बरावृत्तायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्धोत्सव-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्ध-विशारदायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्धासव-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्ध-विमर्दिन्यै नमः स्वाहा

ॐ दुर्ग—युद्ध-हास्य-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्धाट्ट-हासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्ध-महा-मत्तायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्धानुसारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-युद्धोत्सवोत्साहायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-देश-निषेविण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग—देश-वास-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-देश-विलासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग—देशार्च्चन-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग—देश-जन-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-स्थान-संस्थानायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-ध्यान-साधनायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-ध्यानायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमात्म-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमागम-सन्धानायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमागम-संस्तुतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमागम-दुर्ज्ञेयायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-सम्मतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-मान्यायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-सुप्रीतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-हर्षदायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-संस्थानायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-श्रुति-मानितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाचार-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाचार-तोषितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाचार-निर्वृत्तायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाचार-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाचार-वशितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-स्थान-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-प्रेम-निरतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गम-द्रविण-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाम्बुज-मध्यस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्गमाम्बुज-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-मार्ग-गत्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-प्रचारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-पद्म-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाड्यम्बुज-स्थितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-गताऽऽयातायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-कृतास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-रति-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडीश-संस्तुतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडीश्वर-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडीश-चुम्बितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडीश-क्रोडस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाड्युत्थितोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाड्यारोहणायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ग-नाडी-निषेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-स्थानायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-स्थान-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दनुजान्त-कृते नमः स्वाहा
ॐ दरी-कृत-तपस्यायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-कृत-हरार्च्चनायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-जापित-दिष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-कृत-रति-क्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-कृत-हरार्हायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-क्रीडित-पुत्रिकायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-सन्दर्शन-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-रोपित-वृश्चिकायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-गुप्ति-कौतुकाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दरी-भ्रमण-तत्परायै नमः स्वाहा
ॐ दनुजान्त-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दीनायै नमः स्वाहा
ॐ दनु-सन्तान-दारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दनुज-ध्वंसिन्यै नमः स्वाहा

ॐ दूतायै नमः स्वाहा
ॐ दनुजेन्द्र-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दानव-ध्वंसिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दानवानां-भयङ्कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दानव्यै नमः स्वाहा
ॐ दानवाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दानवेन्द्र-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दानवेन्द्र-निहन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दानव-द्वेषिणी-सत्यै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि—प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि—प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि-कृतार्च्चायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि-विभूतिदायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि-महाऽऽनन्दायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि—रति-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि—दान-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि—कृतास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि-स्तुति-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि-स्मृति-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दानवार्याहार-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि—प्रबोधिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दानवारि-धृत-प्रेमायै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-शोक-विमोचिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-निर्मूल-कारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-निर्मूलन-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-दार्य्यरि-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-नाशायै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-ग्रामायै नमः स्वाहा
ॐ दुरासदायै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-हीनायै नमः स्वाहा
ॐ दुःख-धीरायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविणाचार-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ द्रविणोत्सर्ग-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-त्याग-तोषिकायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श-मानदायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श-हर्षाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श—तुष्टिदायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्शन-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्शनातुरायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्शनोत्साहायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श-साधितायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्शन-मतायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श-पुत्रिकायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्पर्श-रक्षिण्यै नमः स्वाहा
ॐ द्रविण-स्तोम-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ द्रविणाकर्षण-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ द्रविणौघ-विसर्जिन्यै नमः स्वाहा
ॐ द्रविणाचल-दानाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ द्रविणाचल-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दीन-बन्धवे नमः स्वाहा
ॐ दीन-विघ्न-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-सेव्यायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-सिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-साध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-गेह-कृतानन्दायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-गेह-विलासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-भाव-प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-भाव-विनोदिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-मानव-चेतःस्थायै नमः स्वाहा

ॐ दीन-मानव-हर्षदायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-दैन्य-विघातेच्छायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-द्रविण-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-साधन-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दीन-दर्शन-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-पुत्रादि-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दीन-सम्पद्-विधायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-ध्यान-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेयर्षि-संसिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-विभावितायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-कृतार्हायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-प्रसाधितायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-हर्ष-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-स्तुतायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-नुतायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय–प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेयानुमानितायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-समुद्गीतायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-कुटुम्बिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-प्राण-तुल्यायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-शरीरिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-कृताऽऽनन्दायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेयांश-सम्भवायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-विभूतिस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेयानुसारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-गीति-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-धन-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-दुःख-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-ज्ञान-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्तात्रेय-भयापहायै नमः स्वाहा

ॐ देव-कन्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-मान्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-दुःख-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-सिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ देव-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ देवेज्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-मान्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-धन्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-विघ्न-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-रम्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-रतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-कौतुक-तत्परायै नमः स्वाहा
ॐ देव-क्रीडायै नमः स्वाहा
ॐ देव-व्रीडायै नमः स्वाहा
ॐ देव-वैरि-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-कामायै नमः स्वाहा
ॐ देव-रामायै नमः स्वाहा
ॐ देव-द्विष्ट-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ देव्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-दानव-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-रतानन्दायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-वरोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रियम्वदायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्राण-तुल्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-नितम्बिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-हृत-मनसे नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-सुखावहायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-क्रोड-रतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-महाऽऽनन्दायै नमः स्वाहा

ॐ देव-देव-प्रचुम्बिकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवोपभुक्तायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवानुसेवितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-गत-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-गतात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-हर्ष-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-महाऽऽमोदायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-विलासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-धर्म-पत्न्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-मनो-गतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-वध्वे नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-देवार्चन-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाङ्क-निलयायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाङ्ग-शायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाङ्ग-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाङ्ग-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाङ्ग-भूषायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाङ्ग-भूषणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रिय-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवाप्रियान्त-कृते नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रिय-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रियात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवार्चक-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवार्चक-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवार्चकोत्साहायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवार्चन-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवार्चकाविघ्नायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-प्रस्वे नमः स्वाहा
ॐ देव-देवस्य-जनन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-विधायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवस्य-रमण्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-देव-हृदाश्रयायै नमः स्वाहा
ॐ देव-देवस्येष्ट-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-तापस-तापिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव—तोषितायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-वरदायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-सिद्धिदायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-संसिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-सम्भवायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-सुप्रीतायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-भाव-हर्षदायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-विघ्न-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ देवता-द्विष्ट-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देवता-पूजित-पदायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-प्रेम-तोषितायै नमः स्वाहा
ॐ देवतागार-निलयायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-सौख्य-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देवता-निज-भावायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-हृत-मानसायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-कृत-पादार्चायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-हृत-भक्तिकायै नमः स्वाहा
ॐ देवता-गर्व-मध्यस्थायै नमः स्वाहा
ॐ देवतायै नमः स्वाहा
ॐ देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दनवे नमः स्वाहा
ॐ दुं दुर्गायै नमो-नाम्न्यै नमः स्वाहा
ॐ दूं फट् मन्त्र-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दूं नमो मन्त्र-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दूं नमो-मूर्तिकात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दुष्ट-भूत-निषेवितायै नमः स्वाहा

ॐ दूर-दर्शि-प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-प्रियम्वदायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-सिद्धि-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-प्रतोषितायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-कण्ठ-संस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-प्रहर्षितायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-गृहीतार्चायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-प्रतर्पितायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-प्राण-तुल्यायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-भ्रान्ति-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्शि-हृदास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दूर-दर्श्यरि-विद्भावायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-प्रमोदिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-प्राण-तुल्यायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-हर्ष-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-प्रहर्षितायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-महाऽऽनन्दायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-गृहालयायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-गृहीतार्चायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-दर्शि-हृतार्हणायै नमः स्वाहा
ॐ दयायै नमः स्वाहा
ॐ दान-वत्यै नमः स्वाहा
ॐ दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दयालवे नमः स्वाहा
ॐ दीन-वत्सलायै नमः स्वाहा
ॐ दयार्द्रायै नमः स्वाहा
ॐ दया-शीलायै नमः स्वाहा
ॐ दयाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दयात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दयाऽम्बुधये नमः स्वाहा
ॐ दया-सारायै नमः स्वाहा
ॐ दया-सागर-पारगायै नमः स्वाहा
ॐ दया-सिन्धवे नमः स्वाहा
ॐ दया-भारायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-करुणा-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दया-वद्-वत्सलायै नमः स्वाहा
ॐ देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दयायै नमः स्वाहा
ॐ दान-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वद्-भक्ति-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दया–वत्-परितोषितायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-स्नेह-निरतायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-प्रतिपादिकायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-त्राण-कर्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दया-वन्मुक्ति-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दया-वद्-भव-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-परितोषितायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-तारण-परायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-सिद्धि-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-पुत्र-वद्-भावायै नमः स्वाहा
ॐ दया-वत्-पुत्र-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दया-वद्-देह-निलयायै नमः स्वाहा
ॐ दया-बन्धवे नमः स्वाहा
ॐ दयाऽऽश्रयायै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-वात्सल्य-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-सिद्धि-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-शरणासक्तायै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-देह-मन्दिरायै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-भक्ति-भावस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-प्राण-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-सुखदायै नमः स्वाहा
ॐ दम्भायै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-प्रेम-वर्षिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दयालु-वशगायै नमः स्वाहा

ॐ दीर्घायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घाङ्ग्यै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-लोचनायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-नेत्रायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-चक्षेषु नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-बाहु-लतात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-केश्यै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-मुख्यै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घ-घोणायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणासुर-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दारुणासुर-दारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दारुणाहव-कर्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दारुणाहव-हर्षितायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणाहव-होमाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणाचल-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दारुणाचार-निरतायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणोत्सव-हर्षितायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणोद्यत-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दारुणारि-निवारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दारुणेक्षण-संयुक्तायै नमः स्वाहा
ॐ दोश्चतुष्क-विराजितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-दोष्कायै नमः स्वाहा
ॐ दश-भुजायै नमः स्वाहा
ॐ दश-बाहु-विराजितायै नमः स्वाहा
ॐ दशास्त्र-धारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-दिक्-ख्यात-विक्रमायै नमः स्वाहा
ॐ दश-रथार्च्चित-पदायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-प्रिय-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-प्रेम-तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-रति-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-प्रिय-कर्यै नमः स्वाहा

ॐ दाशरथि-प्रियम्वदायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथीष्ट-सन्दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथीष्ट-देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-द्वेषि-नाशायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथ्यानुकूल्यदायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-प्रिय-तमायै नमः स्वाहा
ॐ दाशरथि-प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-सम्पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-प्रमदायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-जन्म-भूम्यै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-रतिदायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-सेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि-सुखदायै नमः स्वाहा
ॐ दशाननारि–वैरि-हृते नमः स्वाहा
ॐ दशाननारीष्ट-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवारि-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवारि-जनन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवारि-भाविन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवारि-सहितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-सभाजितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवारि-रमण्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-वध्वे नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-नाश-कर्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-पुरस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-वधोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-प्रीति-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवाहव-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवानपायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-प्रिया-वन्द्यायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवाहृतायै नमः स्वाहा

ॐ दश-ग्रीवाहित-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवेश्वर-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवेश्वर-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीव-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दश-ग्रीवेश्वर-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दश-वर्षीय-कन्यकायै नमः स्वाहा
ॐ दश-वर्षीय-बालायै नमः स्वाहा
ॐ दश-वर्षीय-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-पाप-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दम्यायै नमः स्वाहा
ॐ दश-हस्त-विभूषितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शस्त्र-लसद्-दोष्कायै नमः स्वाहा
ॐ दश-दिक्-पाल-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ दशावतार-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दशावतार-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-विद्याऽभिन्न-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-प्राण-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-विद्या-स्वरूपायै नमः स्वाहा
ॐ दश-विद्या-मय्यै नमः स्वाहा
ॐ दृक्-स्वरूपायै नमः स्वाहा
ॐ दृक्-प्रदात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दृग्-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दृक्-प्रकाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरायै नमः स्वाहा
ॐ दिगन्तस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-विलासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-समाजस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-सहचर्यै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-कृतास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-हृता-चित्तायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-कथा-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-गुण-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-शिरोधार्यायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-हृताश्रयायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-रतातुरायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बर-स्वरूपायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गणार्चितायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गण-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गण-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गणाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गणेश्वर्यै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गण-स्पर्शायै नमः स्वाहा
ॐ दीर्घिका-पान-विह्वलायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-कोटि-वृतायै नमः स्वाहा
ॐ दिगम्बरी-गणावृतायै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्तायै नमः स्वाहा
ॐ दुष्कृति-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्ध्येयायै नमः स्वाहा
ॐ दुरित-क्रमायै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-दानव-द्वेष्ट्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-दनुजान्त-कृते नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-पाप-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-निस्तार-कारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-मानस-संस्थानायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-ज्ञान-विवर्द्धिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-सम्भोग-जनन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-सम्भोग-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-सम्भोग-भवनायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-विद्या-विधायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्रोद्वेग-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-जनन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-सुन्दर्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-भक्ति-विधाज्ञानायै नमः स्वाहा

ॐ दस्र-द्विष्ट-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्रापकार-दमिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्र-सिद्धि-विधायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्र-ताराऽऽराधितायै नमः स्वाहा
ॐ दस्र-मातृ-प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दस्र-दैन्य-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दस्र-तात-निषेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दस्र-पितृ-शत-ज्योतिषे नमः स्वाहा
ॐ दस्र-कौशल-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-सहितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-कामिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-पुर्यै नमः स्वाहा
ॐ देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-सभाजितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-सु-प्रीतायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-वधू-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-शिरश्छेत्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-नितम्बिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-हर-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-हरात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-हराराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-सुखदायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-कपालिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-ज्ञान-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-देहिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-वधोपात्त-श्रीरामचन्द्र-रूपतायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-राष्ट्र-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्षारि-सारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-भ्रातृ-तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-वधू-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दश-शीर्ष-वधू-प्राणायै नमः स्वाहा

ॐ दश-शीर्ष-वधू-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-रता-साध्व्यै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरुपदेष्ट्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-निषेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-गत-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-ताप-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-दुःख-शमन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-दमनी-तम्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-शोक-शमन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-रोग-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-वैरि-दमन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-दैत्य-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुरन्त-कलुषघ्न्यै नमः स्वाहा
ॐ दुष्कृति-स्तोम-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुराशयायै नमः स्वाहा
ॐ दुराधारायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्जयायै नमः स्वाहा
ॐ दुष्ट-कामिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दर्शनीयायै नमः स्वाहा
ॐ दृश्यायै नमः स्वाहा
ॐ द्रष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दृष्टि-गोचरायै नमः स्वाहा
ॐ दूती-याग-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दूत्यै नमः स्वाहा
ॐ दूती-याग-कर-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दूती-याग-करानन्दायै नमः स्वाहा
ॐ दूती-याग-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दूती-याग-करायातायै नमः स्वाहा
ॐ दूती-याग-प्रमोदिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासः-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-भावितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासोऽर्चित-पादायै नमः स्वाहा

ॐ दुर्वासो-मुनि-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-वन्द्यायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-सिद्धिदायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-भावस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-सेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-चित्तस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-मण्डितायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-सञ्चारायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-हृदयङ्गमायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-हृदयाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-हृत्-सरोजगायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासस्तापसाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासस्तापसाश्रयायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासस्तापस-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासस्तापसेश्वर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासो-मुनि-कन्यायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्वासोद्भूत-सिद्धिदायै नमः स्वाहा
ॐ दर-रात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दर-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दर-युक्तायै नमः स्वाहा
ॐ दरापहायै नमः स्वाहा
ॐ दरघ्न्यै नमः स्वाहा
ॐ दर-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दर-युक्तायै नमः स्वाहा
ॐ दराश्रयायै नमः स्वाहा
ॐ दर-स्मेरायै नमः स्वाहा
ॐ दरापाङ्ग्यै नमः स्वाहा
ॐ दया-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दयाऽऽश्रयायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दरोन्मदायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-सिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-संस्थायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-ताप-विमोचिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-क्षोभ-हरा-नित्यायै नमः स्वाहा
ॐ दस्त्र-लोक-गतात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुर्वङ्गना-वन्द्यायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुर्वङ्गना-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुर्वङ्गना-सिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुर्वङ्गनोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-प्रिय-तमायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-गुरु-निषेवितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-प्रसू-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-कृतार्हणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-प्रेम-युतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुर्वनुमानितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-प्रभावज्ञायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-ज्ञान-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-गुरु-प्रमोदिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-स्त्री-गण-सम्पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-स्त्री-गण-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-स्त्री-गण-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दैत्य-स्त्री-चित्त-हारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-चित्तस्थायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-भूषितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-संसिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-तोषितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ-चारु-चामर-वीजितायै नमः स्वाहा

ॐ देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ-चारु-गन्ध-विलेपितायै नमः स्वाहा
ॐ देवाङ्गना-धृतादर्श-दृष्ट्यर्थ-मुख-चन्द्रमायै नमः स्वाहा
ॐ देवाङ्गनोत्सृष्ट-नाग-वल्ली-दल-कृतोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ-दीप-माला-विलोकनायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-हस्तस्थ-धूप-घ्राण-विनोदिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-कर-गत-वासकासव-पायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-कङ्कतिका-कृत्त-केश-निमार्जनायै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-सेव्य-गात्रायै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-कृतोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-विरचिता-पुष्प-माला-विराजितायै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-विचित्राङ्ग्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-दत्त-भोजनायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-गीतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गीत-सोत्सुकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-नृत्य-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-नृत्य-दर्शिन्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-योजित-लसद्-रत्न-पादु-पदाम्बुजायै नमः स्वाहा
ॐ देव-स्त्री-गण-विस्तीर्ण-चारु-तल्प-निषेदुष्यै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-चारु-कराकलिताङ्घ्र्यादि-देहिकायै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-कर-व्यग्र-ताल-वृन्द-मरुत्-सखायै नमः स्वाहा
ॐ देव-नारी-वेणु-वीणा-नाद-सोत्कण्ठ-मानसायै नमः स्वाहा

ॐ देव-कोटि-स्तुति-नुतायै नमः स्वाहा
ॐ देव-कोटि-कृतार्हणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-कोटि-गीत-गुणायै नमः स्वाहा
ॐ देव-कोटि-कृत-स्तुत्यै नमः स्वाहा
ॐ दन्त-दष्ट्योद्वेग-फलायै नमः स्वाहा
ॐ देव-कोलाहलाकुलायै नमः स्वाहा
ॐ द्वेष-राग-परित्यक्तायै नमः स्वाहा
ॐ द्वेष-राग-विवर्जितायै नमः स्वाहा
ॐ दाम-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दाम-भूषायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-विलासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-प्रेम-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-भगिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-प्रस्वे नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-पत्न्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-पति-व्रतायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदराऽभिन्न-देहायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-रति-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदराऽभिन्न-तनवे नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-कृतास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-कृत-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-गतात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-कौतुकाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-कलाऽकलायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-लिङ्गिताङ्ग्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-कुतूहलायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-कृताह्लादायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-सु-चुम्बितायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-सुताकृष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-सुख-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-सहाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-सहायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-गुणज्ञायै नमः स्वाहा

ॐ दामोदर-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदरानुकूलायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-नितम्बिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-जल-क्रीडा-कौशल-दर्शन-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-बल-क्रीडा-त्यक्त-स्वजन-सौहृदायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-लसद्-रास-केलि-कौतुकिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-भ्रातृकायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-परायणायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-धरायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-वैरि-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदरोप-जायायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-निमन्त्रितायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-पराभूतायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-पराजितायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-समाक्रान्तायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-हताशुभायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदरोत्सव-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदरोत्सव-वहायै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-स्तन्य-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दामोदर-गवेषितायै नमः स्वाहा
ॐ दमयन्ती-सिद्धि-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दमयन्ती-प्रसाधितायै नमः स्वाहा
ॐ दमयन्तीष्ट-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दमयन्ती-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दमयन्ती-कृतार्चायै नमः स्वाहा
ॐ दमनर्षि-विभावितायै नमः स्वाहा
ॐ दमनर्षि-प्राण-तुल्यायै नमः स्वाहा
ॐ दमनर्षि-स्वरूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दमनर्षि-स्वरूपायै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-पूरित-विग्रहायै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-लोक-विमोहिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-शीलायै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-वत्-परिमर्दिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्भ-सन्तान-दारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-मोक्षायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-धनायै नमः स्वाहा
ॐ दत्तारोग्यायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-दाम्भिकायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-पुत्रायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-दारायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-हारायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-दारिकायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-भोगायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-शोकायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-हस्त्यादि-वाहनायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-मत्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-भार्यायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-शास्त्राव-बोधिकायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-पानायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-दानायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-दारिद्र्य-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-सौधावनी-वासायै नमः स्वाहा
ॐ दत्त-स्वर्गायै नमः स्वाहा
ॐ दासदायै नमः स्वाहा
ॐ दास्य-तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दास्य-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दास-दासी-शत-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दार-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासायै नमः स्वाहा

ॐ दार-वासि-हृदास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासि-जनाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासि-जन-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासि-विनिर्मितायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासि-समर्चितायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वास्याहृत-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वास्यरि-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासि-विघ्न-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दार-वासि-विमुक्तिदायै नमः स्वाहा
ॐ दाराग्नि-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दारायै नमः स्वाहा
ॐ दार-कार्यरि-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्पत्यै नमः स्वाहा
ॐ दम्पतीष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दम्पती-प्राण-रूपिकायै नमः स्वाहा
ॐ दम्पति-स्नेह-निरतायै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्य-साधन-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्य-सुख-सेनायै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्य-सुख-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्याचार-निरतायै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्यामोद-मोदितायै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्यामोद-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्याह्लाद-कारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पतीष्ट-पाद-पद्मायै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्य-प्रेम-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दाम्पत्य-भोग-भवनायै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-फल-भोजिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-फल-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-फल-मानसायै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-वृक्ष-संस्थानायै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-वृक्ष-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-वृक्ष-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-वन-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दाडिमी-फल-साम्योरु-पयोधर-विवर्जितायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणा-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणा-रूप-धारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-कन्यायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-पुत्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-स्वे नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-गोत्रायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-सुतायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-यज्ञ-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-यज्ञ-नाश-कर्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-यज्ञान्त-कारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-प्रसूत्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्षेज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-वंशैक-पावन्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्षात्मजायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-सूनवे नमः स्वाहा
ॐ दक्षजायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-जातिकायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-जन्मने नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-जनुषे नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-देह-समुद्भवायै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-जनुषे नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-याग-ध्वंसिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्ष-कन्यकायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-निरतायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-तुष्टिदायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-संसिद्धायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-भावितायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-साधितायै नमः स्वाहा

ॐ दक्षिणाचार-मोक्षाप्त्यै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-शरणायै नमः स्वाहा
ॐ दक्षिणाचार-हर्षितायै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-पाल-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-वासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-संस्थितायै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-संस्थायै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-देश-निवासिन्यै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-कार्यै नमः स्वाहा
ॐ द्वार-धात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दोष-मात्र-विवर्जितायै नमः स्वाहा
ॐ दोष-करायै नमः स्वाहा
ॐ दोष-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दोष-राशि-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-विभूषाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-कपालिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-सहस्राभायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-समाननायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-मुख्यै नमः स्वाहा
ॐ दिव्यायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-कराग्रजायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-सम-ज्योतिषे नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-सु-शीतलायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-श्रेण्यै नमः स्वाहा
ॐ दोष-सदृशापाङ्ग-वीक्षणायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकरेष्ट-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-निषेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-प्राण-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-मरीचिकायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकरोल्लसद्-भालायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-सु-हर्षिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-शिरो-भूषायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-वधू-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-वधू-प्राणायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-वधू-मतायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-वधू-प्रीतायै नमः स्वाहा
ॐ दोषाकर-वध्वै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दोष-हारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-जाप-महाऽऽनन्दायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-जाप-परायणायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पुरश्चार-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजक-पुत्रिकायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजक-वात्सल्य-कारिणी-जगदम्बिकायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजक-वैरिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजक-विघ्न-हृते नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजक-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दोषा-पूजक-मुक्तिदायै नमः स्वाहा
ॐ दम-प्रसून-सम्पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दम-पुष्प-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दुर्योधन-प्रपूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दु:शासन-समर्चितायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दया-निधये नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-समाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्रपूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-गृहासक्तायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्रियम्वदायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्रियतमायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-मनोहरायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-हृत-प्राणायै नमः स्वाहा

ॐ दण्ड-पाणि-सु-सिद्धिदायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-परासृष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्रहर्षितायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-विघ्न-हरायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-शिरो-धृतायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्राप्त-चर्यायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाण्युन्मुख्यै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-प्राप्त-पदायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाणि-वरोन्मुख्यै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-हस्तायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-पाण्यै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-वाहवे नमः स्वाहा
ॐ दर्दरान्त-कृते नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-दोष्कायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-करायै नमः स्वाहा
ॐ दण्ड-चित्त-कृतास्पदायै नमः स्वाहा
ॐ दण्डि-विद्यायै नमः स्वाहा
ॐ दण्डि-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दण्डि-खण्डक-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दण्डि-प्रियायै नमः स्वाहा
ॐ दण्डि-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दण्डि-सन्तोष-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-पूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-द्रविण-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-वर्ग-कृतार्हायै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-वर्ग-विनाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-निर्नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-कुल-निर्न्नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-प्रिय-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दस्यु-नृत्य-दर्शन-तत्परायै नमः स्वाहा
ॐ दुष्ट-दण्ड-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दुष्ट-वर्ग-विद्राविण्यै नमः स्वाहा

ॐ दुष्ट-वर्ग-निग्रहार्हायै नमः स्वाहा
ॐ दूषक-प्राण-नाशिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दूषकोत्ताप-जनन्यै नमः स्वाहा
ॐ दूषकारिष्ट-कारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दूषक-द्वेषण-कर्यै नमः स्वाहा
ॐ दाहिकायै नमः स्वाहा
ॐ दहनात्मिकायै नमः स्वाहा
ॐ दारुकारि-निहन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दारुकेश्वर-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दारुकेश्वर-मात्रे नमः स्वाहा
ॐ दारुकेश्वर-वन्दितायै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-हस्तायै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-युतायै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-कर्म-विवर्जितायै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-मय्यै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-तनवे नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-सर्वस्व-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-कर्माचार-रतायै नमः स्वाहा
ॐ दर्भ-हस्त-कृतार्हणायै नमः स्वाहा
ॐ दर्भानुकूलायै नमः स्वाहा
ॐ दार्भ-भार्यायै नमः स्वाहा
ॐ दर्वी-पात्रानु-दामिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दम-घोष-प्रपूज्यायै नमः स्वाहा
ॐ दम-घोष-वर-प्रदायै नमः स्वाहा
ॐ दम-घोष-समाराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दावाग्नि-रूपिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दावाग्नि-रूपायै नमः स्वाहा
ॐ दावाग्नि-निर्न्नाशित-महा-बलायै नमः स्वाहा
ॐ दन्त-दंष्ट्रासुर-कलायै नमः स्वाहा
ॐ दन्त-चर्चित-हस्तिकायै नमः स्वाहा
ॐ दन्त-दंष्ट्र-स्यन्दनायै नमः स्वाहा
ॐ दन्त-निर्नाशितासुरायै नमः स्वाहा
ॐ दधि-पूज्यायै नमः स्वाहा

ॐ दधि-प्रीतायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-वर-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचीष्ट-देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-मोक्ष-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दैन्य-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दर-दारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-भक्ति-सुखिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-मुनि-सेवितायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-ज्ञान-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-गुण-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-सम्भूषायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-भुक्ति-मुक्तिदायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-देव्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-गम्यायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-पूजितायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-सुख-दात्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दीन-हारिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दुःख-हन्त्र्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-सुन्दर्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-सम्भूतायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-कुल-मालिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दान-गम्यायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दान-मानिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दान-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-दान-देवतायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-जप-सम्प्रीतायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-जप-मानसायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-जप-पूजाढ्यायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-जप-मालिकायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-जप-सन्तुष्टायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-जप-तोषिण्यै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-तपसाऽऽराध्यायै नमः स्वाहा
ॐ दधीचि-शुभ-दायिन्यै नमः स्वाहा
ॐ दूर्वायै नमः स्वाहा
ॐ दूर्वा-दल-श्यामायै नमः स्वाहा
ॐ दूर्वा-दल-सम-द्युतये नमः स्वाहा

* * *

फल-श्रुति

दकारादि श्रीदुर्गा-सहस्र-नामों के द्वारा जप, हवन, पूजन करने से सभी प्रकार के सङ्कट नष्ट होते हैं। देव-स्थान में हाथ जोड़कर जो लोग इन नामों का श्रद्धा से पाठ करते हैं, उनके लिए कोई वस्तु दुर्लभ नहीं होती। वे दीर्घायु, सुखी, विद्वान् और वक्ता होते हैं।

'चण्डी' :: विशेष प्रस्तुति

दश महा-विद्या-रहस्य

(१)

श्री काली-तत्त्व

'काली' महा-शक्ति है। यह **'पर-ब्रह्म'** की स्फुरणा है। इसे **ब्रह्म की इच्छा** कहा गया है। इसी तत्त्व को **ईक्षा, कामना** और **तप** भी बताया है।

'वेदान्त-सूत्र' में **भगवान् वेद-व्यास जी** ने **'ईक्षतेर्ना शब्दम्'** इस सूत्र के प्रवचन में इसे **ईक्षा** (ब्रह्म की ईक्षा) कहकर प्रकृति से भी **'परा-चित्'** कहा है। यह **'आद्या-शक्ति'** है। सभी देवियों और देवों की मूल है। सर्व-प्रथम मूर्ति यही हुई है। यही गुण-संयोजिका शक्ति है। पाँचों महा-भूत और तन्मात्राओं का मेल यही करती है। जड़ में चैतन्य लाने की चाबी इसी के हाथ में है। अर्थात् **ब्रह्म-चैतन्य,** जो प्रकाश मात्र है, इसी के द्वारा व्यवहार्य होता है। यही उसकी साधिका है। **'काल'** का आविर्भाव इसी से होता है। रूप-कल्पना का मूलाधार यही है। **ब्रह्म (परमात्मा)** रूपवान् होता है, तो प्रथम इसी रूप में आता है।

'ब्रह्म-तत्त्व', अनिर्वचनीय कहा गया है। वह किसे देखने में आया? यदि किसी के अनुभव में आया भी, तो किस रूप से? आखिर, कोई आकृति होगी, वह क्या होगी? सुनिए, वह **'अप्रज्ञात'** और **'अलक्षण'** भी **'तम'** (तिमिर, अन्धकार) या काला रूप ही था। **आद्य-तत्त्व** का प्रायः सभी ऐसा ही वर्णन करते हैं। 'श्रुति' भी यही कहती है—**'नासदासीन्न सदासीत्, तम एवासीद् यावतम्'** इत्यादि।

'तम' का स्वरूप काला है। काला सब रङ्गों का मूल है। सभी रङ्ग काले रङ्ग में समा जाते हैं। प्रकाश अन्धकार से निकलता है और वह अन्धकार में ही चमकता है तथा अन्धकार में ही लीन हो जाता है। यह स्पष्ट ही सिद्ध है कि प्रकाश अन्धकार से छोटा भी है। प्रकाश स्वल्प-देश-व्याप्त है और तम बहु-देश-व्याप्त है, अनन्त है। अतः ज्योति का आश्रय तिमिर ही है। आधेय से आधार बड़ा होना ही चाहिए। इसी कारण **'काली'** का स्वरूप काला है, महान् है, अनन्त है और सर्व-ज्योतियों का आधार है।

इस **'काली-तत्त्व'** को समस्त ज्योतियों का उद्‌गम-स्थान समझिए। अब आप आश्चर्य के साथ पूछेंगे कि काला रङ्ग प्रकाश का मूल कैसे? इस सम्बन्ध में विज्ञान भी आपका समाधान करेगा कि चाँदी का रूप उज्ज्वल है, पर घिसने से उसमें श्यामता लग जाती है। कोयला काला है, पर जलकर अन्त में श्वेत हो जाता है। अब हम यह भी कहते हैं कि प्रकाश के भीतर भी अन्धकार रहता है। जैसे चन्द्र के भीतर जो कालिमा है, वह तम-स्वरूप ही है। (यह प्रतीकोपासना में और विशेषकर **आद्या की उपासना** में तो बहुत गहरा प्रमाण है), पर छोटे रूप में है। इस उदाहरण को प्रति-संहार का रूप देकर समझना चाहिए। काला रूप शोभा और प्रकाश का उद्‌गम है। इसका ज्वलन्त प्रमाण **'मूर्ति-रहस्य'** में देखिए। **'काली'** का स्वरूप बतलाते हुए **भगवान् वेद-व्यास जी** कहते हैं—

'स्फुरद्- दशन- दंष्ट्रा सा, भीम-रूपाऽपि भूमिप!
रूप-सौभाग्य-कान्तीनां, सा प्रतिष्ठा परा श्रियाम्॥'

अर्थात् हे राजन्! वह चमकीले दाँत और दाढ़ोंवाली तथा महा-भयङ्कर रूपवाली है, तो भी रूप, सौभाग्य

तथा कान्ति और शोभाओं की परम प्रतिष्ठा है। भावार्थ यह कि काली भयङ्कर है, तो भी कान्ति, तेज और शोभा-सौभाग्य की निधान है।

पर-ब्रह्म (परमात्मा) की सिसृक्षा अर्थात् **सृष्टि की इच्छा** यही है। यही तीन रूप से विभक्त होती है। **इच्छा, क्रिया** और **ज्ञान**—इन तीनों रूपों से यह ब्रह्म में इस प्रकार रहती है, जैसे सूर्य-मण्डल में स्फूर्ति। ध्यान से देखने पर सूर्य-मण्डल में कुछ झिलमिलाहट करती हुई गोल-गोल रेखाएँ मिलती, घूमती, थहराती हुई प्रतीत होती हैं। वैसे ही यह भी **पर-ब्रह्म** के अन्दर विलास करती है। यही '**स्पन्द**' है।

पर-ब्रह्म की प्रथम स्फुरणा यही है। इसे वैष्णव भी मानते हैं। '**श्रीमद्-भागवत**' के तृतीय स्कन्ध में **श्रीशुकदेव जी** कहते हैं—

'स्तोन्तः शरीरेऽपि ते भूत-सूक्ष्मः कालात्मिकां
शक्तिमुदीरयाणः।'

अर्थात् ब्रह्म अपने अन्दर भूत और सूक्ष्म-तन्मात्राओं को लिए हुए पहले कालात्मिका शक्ति को उद्भावित करता है।

इससे यही स्पष्ट हुआ कि '**काली-शक्ति**' ही सर्व-प्रथम प्रकट हुई। इसी से इसे '**आद्या-शक्ति**' कहते हैं। यह शक्ति **ब्रह्म का रूप** है, ब्रह्म से भिन्न नहीं है।।

सृष्टि का हेतु भी यही है। '**महा-निर्वाण-तन्त्र**' में भी **शिव जी** ने स्पष्ट कहा है कि—**हे आद्ये!**

सृष्टेरादौ त्वमेकाऽसि, तमो-रूपमगोचरम्।
त्वत्तो जातं जगत् सर्वं, पर-ब्रह्म-सिसृक्षया॥

यहाँ '**त्वत्तः**'- पद सिसृक्षा का विशेष्य है, जिससे यह समझना चाहिए कि पर-ब्रह्म की सिसृक्षा-रूप तुमसे ही यह जगत् उत्पन्न हुआ। लोग इसे '**महा-काल**' की **शक्ति** कहते हैं। कहो, कोई बात नहीं। ठीक है, पर '**महा-काल**' इसका स्वरूप है, यह कहना भी वही बात है। इसका प्रमाण '**महा-निर्वाण तन्त्र**' में देखिए—

'तव रूपं महा-कालो, जगत्-संहार-कारकः।'

अर्थात् '**महा-काल**' तुम्हारा ही रूप है, तो वह उसकी शक्ति है ही, परन्तु वह (**महा-काल**) इसके अधीन है। संहार-शक्तिवाला है, इसलिए '**महा-काल**' कहलाया। यह विवेचन धारण करने योग्य है। इसी अर्थ को '**निर्वाण-तन्त्र**' की यह सूक्ति स्पष्ट करती है—

कलनात् सर्व-भूतानां, महा-काल- प्रकीर्तितः।
महा-कालस्य कलनात्, त्वमाद्या कालिका मता॥

अतएव स्पष्ट है कि '**महाकाल**' की कल्पना भी यही करती है। इसलिए इसे '**आद्या कालिका**' कहा गया है। यह विशेषता भी धारणा के योग्य है कि आदि में भी तम-रूप तुम्हारा स्वरूप ही है, क्योंकि '**महा-काल**' को भी प्रकट करनेवाली तुम्हीं हो। पर वह '**महा-काल**', जो जगत् का संहारक है, उसका भी ग्रास तुम कर जाती हो, इसलिए तुम्हीं '**आद्या काली**' हो अर्थात् '**महा-काल**' की भी '**काल**' तुम हो, अतः '**काली**' हो और **आदि-रूपा** हो, इसलिए '**आद्या**' हो। मध्य में तुम नाना रूपा हो जाती हो। तुम विचित्र विश्व के रूप में परिणत हो जाती हो, फिर अन्त में इसी तिमिर-रूप में एक ही अवशेष रहती हो, इसलिए तुम्हारा आदि और अन्त एक-सा है। इस भावार्थ को '**महा-निर्वाण तन्त्र**' (चतुर्थ उल्लास) के ये दो पद्य प्रकट करते हैं—

काल-संग्रसनात् काली, सर्वेषामादि-रूपिणी,
कालत्वादादि-भूतत्वादाद्या कालीति गीयते॥१
पुनः स्वरूपमास्थाय, तमो- रूपं निराकृतिः,
वाचा-रूपं मनो-गम्यं, त्वमेवैकाऽवशिष्यते॥२

'योग-वाशिष्ठ' के निर्वाण-प्रकरण में इसका बड़ा विस्तृत वर्णन हुआ है। वहाँ **वशिष्ठ जी रामचन्द्र जी** को '**काली**' का स्वरूप बताते हुए कहते हैं कि—'**हे राम! 'काली' की नाना प्रकार नर्तन-अभिनयादि जो चेष्टाएँ हैं, वे ही ब्रह्मादि की जरा-मरण-रीतियाँ हैं।**' वहाँ भी इसे **व्योम-रूप** कहकर ही '**श्यामा**' बताया है। जैसे—'**साऽऽकाश-रूपिणी श्यामा**' इत्यादि। इसके नामों का निर्वचन भी सफल (सार्थक) किया है।

इस प्रकार एक दृष्टि से '**आद्या-काली**' ब्रह्म के अस्तित्व का प्रमाण है। **महर्षि वशिष्ठ** ने '**आद्या-काली**' को **ब्रह्म की आदि-छाया** माना है। छाया अपने आश्रय के अस्तित्व का प्रमाण होती है, सो ब्रह्म की सत्ता का प्रमाण '**श्यामा (आद्या) काली**' ही है। यदि यह नहीं, तो **ब्रह्म** नहीं। **वशिष्ठ जी** ने कहा है—

भिन्नाञ्जन-तमः श्यामा, यामिनीवाकृतिं गता।
तमः श्रीर्देह-युक्तव, साकारेवाम्बर-द्युतिः॥
काल-रात्रिरियं सेति, तथा काली भगवती।
सेयमित्यादि।'......... बहुत प्रमाण हैं।

यहाँ यह प्रश्न उठता है कि '**काली**' की मूर्ति ऐसी भयङ्कर क्यों है? ब्रह्म तो शान्त सच्चिदानन्द शुद्ध है। उसकी शक्ति भी ऐसी ही शान्त होनी चाहिए। समझनेवालों के लिए तो उत्तर सीधा-सादा है कि शान्ति क्रान्ति से प्रकट होती है, क्रान्ति शान्ति से नहीं।

विश्व में कहीं क्रान्ति के बिना शान्ति नहीं हुई, न होगी। किसी जगह भी देखिए, जहाँ क्षोभ होगा—वहीं शान्ति का उपदेश होगा। सङ्घर्ष— क्रान्ति के बिना मिट नहीं सकता। सङ्घर्ष के मिटे बिना शान्ति सम्भव नहीं। इस सिद्धान्त को आगे रखकर समझ सकेंगे कि '**काली**' विश्व-संहार के लिए विश्व से पूर्व ही रहती है और क्रान्ति करने का लक्ष्य बतलाती है।

'**काली**' का स्वरूप रुद्ध धर्मों का ध्येय बताता है। जैसे '**काली**' साँवली है, तो भी **रूपवती** और **कोटि-सूर्य-प्रतीकाशा** है। **लाल नेत्रवाली** है, तो भी इसे **करुणा-पारावार** कहते हैं। **भीषण** और **कराल-मुखी** है, तो भी **सौन्दर्य-निधान** है। **कृशा** है, तो भी **बल का प्रतीक** है। स्वयं **दिगम्बरा** है, तो भी **सर्व-सम्पदाओं की दाता** है, जैसा कि '**कर्पूर-स्तव-राज**' में महा-काल स्वयं कहते हैं—'**ते लक्ष्मी-लास्य-लीला-कमल-दल-दृशः काम-रूपा भवन्ति।**'

अर्थात् आपके साधक **लक्ष्मी के निवास** और **कामदेव** के प्रतीक बन जाते हैं अब यह देखना है कि '**काली**' की सारी व्यवस्था और इसका ध्यान किस-किस विशेषता को लिए हुए है।

१ श्मशान-वासिनी—सर्व-प्रथम '**काली**' का निवास देखें। यह श्मशान में है। इसका क्या भाव है? '**श्मशान**'— उस निर्वाण-भूमि और मोक्ष-साधन का प्रतीक है, जहाँ सुख-दुःख भूलकर चित्त शान्ति से स्थिर होकर परमात्मा में लीन हो जाता है। यही भाव ग्राह्य है। '**श्मशान**' में आने-जाने का काम तो गृहस्थों को पड़ता है और यह अनुभव भी होता ही है कि '**श्मशान**' में आते ही पुरुष की मति वैराग्य पर तथा साम्य-भाव पर अवश्य आ जाती है, चाहे यह स्थिति थोड़ी ही देर क्यों न रहे। सम्भव है कि कोई हठ से भले ही इस बात को स्वीकार न करे, परन्तु वस्तुतः उसे इसकी सत्यता माननी होगी। जब वहाँ एक सुन्दर शरीर को, जो वर्षों से लालित-पालित हुआ है और जिसकी वृद्धि और पुष्टि के लिए महान् प्रयत्न करने पड़े थे, मिनटों में भस्म-सात् कर दिया जाता है, तो क्या उस दृश्य को देखकर हृदय में विरक्ति पैदा न होगी? ममता के त्याग का इसके अतिरिक्त और उदाहरण क्या होगा? सभी शास्त्र ममता के सम्बन्ध में एक ध्वनि से यह कहते हैं—

'न ममेति पदे मोक्षो, ममेत्यत्र निबन्धनम्।'

अर्थात् '**मम**' या '**मेरा**' शरीर का भाव मोक्ष-दायक नहीं है। '**मम**' या '**मेरा**' मानना ही इस संसार में बन्धन का कारण है।

ऐसी ममता का, जहाँ स्वतः ही त्याग होता है, उस '**श्मशान**'-भूमि में निवास करती हुई '**काली**' यही समझाती है कि—'**मैं वही हूँ, जहाँ तुम सांसारिक ममता और मोह को छोड़ दोगे, तभी मेरी प्रकृति का परिचय होगा। मैं निर्मम योगी पुरुषों का लक्ष्य हूँ। मेरे पास आकर ही वे अद्वैत ब्रह्म-ज्ञान पाते हैं।**

इसी सम्बन्ध में दूसरी भावना यह है कि '**श्मशान**' **शून्य-स्थान है। शून्य में रहना ही** '**काली**' **का लक्षण है—'शून्यानां शून्य-साक्षिणी'** इत्यादि। अथवा शून्य

'खं' आकाश है। **'शून्य'** से ही **'शक्ति'** का विकास होता है। इसलिए हमारे सभी तन्त्र शून्यता में इसका साधन बताते हैं—**'विविक्ते विजने देशे, श्मशाने शून्य-सदने'** इत्यादि। **श्मशान** में सबकी एकता का भी भाव होता है। वह यही कहते हैं कि 'अजी, यहाँ तो सब एक ही है। क्या राजा—क्या रङ्क, सभी खाक में मिल जाते हैं। यहाँ कोई भेद नहीं; भेद तो संसार में है।'

देखिए जरा, इस भाव की गहराई पर ध्यान दीजिए। यह कितना कीमती भाव है, जिससे **साम्य-बुद्धि** का उदय होकर मोक्ष का अधिकार प्राप्त होता है। जहाँ बिना किसी आयास के उक्त भाव प्राप्त हो जाता है, उस भूमि को सर्व-श्रेष्ठ मानने में कौन सिर हिलाएगा? वह भूमि यही कहती है—**'मुझको देखो, मैं सबको समान समझती हूँ। वैसे ही तुम भी भेद-भाव छोड़कर मानवता से मानवों को और प्राणी होने के नाते प्राणि-मात्र से साम्य-भाव रक्खो। तब इस महा-माया प्रकृति को पहचान सकोगे।'** यह **'शक्ति'**— साम्य-भाव से ही प्राप्त हो सकती है।

२ श्यामा—श्यामा रङ्ग की भावना यह है कि जिसमें सबका समावेश हो, वह रङ्ग स्वीकार करना चाहिए।

व्यापक नियम सभी के लिए होते हैं। मन को ऐसे लक्ष्य का साधक बनाओ, जहाँ द्वैत न हो, दूसरा प्रतीत न हो—तो यह **'शक्ति'** तुम्हें प्राप्त हो सकती है।

३. मुक्त-केशी—खुले और बिखरे हुए केश 'शिखा-ज्ञान' का सङ्केत करते हैं।

ज्ञान की कोटियाँ असंख्य हैं, जो बालों की तरह सब तरफ फैली हुई हैं। **ज्ञान** बहुत विस्तृत भी है और सूक्ष्म भी है, किन्तु सब ज्ञान-कोटियों का मूल एक ही है। जैसे सब बालों का समावेश एक मस्तक में है। यह शास्त्र-सम्मत बात है कि सब प्रकार के ज्ञान की कोटियों का समावेश (समन्वय) जिस एक तत्त्व में होता है, वही **परमात्मा परम ब्रह्म** है। यह भाव साधकों को द्वैत-भाव से मोड़कर **अद्वैत** की ओर प्रवृत्त कर देता है।

भगवती 'काली' अपने खुले और बिखरे केशों से यही दिखलाती हैं कि—**'सारे ज्ञान की कोटियों का समावेश मुझ एक में ही होता है और मुझसे ही ज्ञान का प्रकाश होता है, इसलिए मुझ एक को ही सर्व-ज्ञान का आधार समझो।'**

४ शवासना— 'शव' के 'आसन' से भगवती **'काली'** हमें यह भावना देती हैं कि **'मैं विश्व की चेतना** हूँ। जब मैं विश्व से निकल जाती हूँ, तब यह मुर्दे की तरह शवाकार पड़ा रहता है।

अथवा **'शिव अद्वितीय तुरीय तत्त्व परमात्मा को कहते हैं। वह भी मेरे द्वारा ही व्यवहार्य होता है। मेरे बिना वह निर्गुण रहता है, इसकी चित् मैं ही हूँ।'**

साधक को यह भाव बहुत तुष्ट करता हुआ शीघ्र ही लक्ष्य पर पहुँचाता है कि **'सारा संसार इस भगवती के बिना निरा जड़ है। यही चेतना है, इसी से सारी क्रियाएँ होती हैं और यही एक है। यही एक-मात्र तत्त्व है, अन्य कोई तत्त्वान्तर नहीं है।'**

इस प्रकार **निश्चयात्मिका सम्वित्** प्राप्त हो जाती है। **निश्चयात्मक ज्ञान** ही अविद्या का नाश करनेवाला मूल साधन है। वह उक्त भाव से सहज ही प्राप्त हो जाता है। सच भी है कि बिना **'शक्ति'** के **'शिव'** क्या है?—कुछ नहीं! यह बात **श्री शङ्कराचार्य** की **'सौन्दर्य-लहरी'** के प्रथम पद्य में खूब समझाई गई है।

शिवः शक्त्या युक्तो यदि, भवति शक्तः प्रभवितुम्।
न चेदेवं देवो न खलु, कुशलः स्पन्दितुमपि॥

इत्यादि। **शक्त्या विना शिवे शुष्के, नाम धाम न विद्यते**—इत्यादि अनेक प्रमाण हैं। यह भाव भी वीजांकुर-न्याय से अद्वैत भाव में ले जानेवाला है।

५ ललज्जिह्वा अर्थात यह लटकती हुई जीभवाली है। अपनी लपलपाती हुई जिह्वा से **भगवती काली** हमें यह बात सिखाती हैं कि—**'साधको! संसार में यह रसेन्द्रिय ही सब इन्द्रियों में प्रबल है। इसके वश हुआ प्राणी ही अनेक दुःखों का पात्र बनता है। यदि इसको**

वश में कर लोगे, तो सारी सिद्धियों के अधीश्वर और मुक्ति-मार्ग के श्रेष्ठ अधिकारी होकर तत्-सत् पद को प्राप्त हो जाओगे।'

भगवती काली की लपलपाती हुई जिह्वा रजो-गुण का लक्षण लिए है। रसनेन्द्रिय पर विजय प्राप्त करने वाले रजो-गुण पर कब्जा कर लेते हैं। यह **'योग'**-शास्त्र का आदेश है कि—

'रसनां वशयन् योगी, रज आक्रमते ध्रुवम्।'

६ मुण्ड-मालावृताङ्गी—'मुण्ड-माला' का भाव बहुत गहरा है। **'मुण्ड'** के उपरि-भाग को अर्थात् **'शिर'** को उत्तमाङ्ग कहते हैं। जैसे देश की राजधानी जहाँ होती है, वह नगर बड़ा और प्रधान होता है, वैसे ही ज्ञान-तन्तुओं का केन्द्र-भवन (पावर हाउस) मस्तिष्क है। यहीं सब विचार-शक्तियाँ रहती हैं। विचार ही सब कर्मों का मूल है और विचार-द्वारा ही यह जगत् आविर्भूत होता है। इस कारण उत्तमाङ्ग **'शिर'** को ब्रह्माण्ड माना गया है।

अतः **भगवती काली 'मुण्ड-माला' से यह भाव प्रकट करती हैं कि मैं अनेक ब्रह्माण्डों की विधात्री, पालयित्री एवं संहार-कर्त्री हूँ। एक-एक मुण्ड एक-एक ब्रह्माण्ड-गोलक का प्रतीक है। ऐसे अनेक मुण्ड अनेक ब्रह्माणों के प्रतीक समझिए। मेरा रूप सम्वित्-ज्ञानात्मक है। ज्ञानेन्द्रियाँ मेरी ही अंशांश कलाएँ हैं। शरीर-वियोग के बाद ये मुझमें आ जाती हैं, मुझसे ही शरीर में भेजी जाती हैं।'**

भक्त लोग यह भी कहते हैं कि भगवती भक्तों को यह दिखाती हैं कि—**'मैं भक्तों का ज्ञान चाहे जैसे नष्ट नहीं होने देती। मुण्ड की रक्षा करती हुई मुण्ड-गत ज्ञानेन्द्रियों को अपनाती हूँ। ऐसे ही भक्तों को अपनाती हुई सामीप्य देती हूँ'** इत्यादि।

७ चतुर्भुजा—भगवती काली चार भुजाएँ धारण करती हैं। इससे यह समझाया है कि **'ज्ञान-प्राप्ति'** के चार फल हैं—**१ धर्म, २ अर्थ, ३ काम** और **४ मोक्ष**। ये मिलकर चतुर्वर्ग कहलाती हैं। पुरुषार्थ भी इन्हीं का नाम है। **भगवती काली चार भुजाओं से भक्तों को चारों पदार्थ देती हैं।**

यहाँ कई अविद्या-ग्रस्त वैष्णवादि लोग संसार के भोले जीवों को यह कहकर बहका देते हैं कि 'देवी मोक्ष नहीं दे सकतीं। वे तो तामसी देवता हैं। मोक्ष तो कृष्ण (विष्णु) ही दे सकते हैं।' इस कथन से संसार के क्षत्रिय, वैश्य और ब्राह्मण भी, जो पढ़े-लिखे नहीं हैं या कम पढ़े हैं—जिन्होंने शास्त्रों का अनुशीलन तो क्या, उनका विचार भी नहीं किया है, भ्रान्त हो जाते हैं। ऐसे भ्रान्त-जनों को यह विचार करना चाहिए कि **मुक्ति का स्वरूप** क्या है और उसे कौन दे सकता है? विचार करने पर वास्तविक बात शीघ्र समझ में आ जाती है और उन बहकानेवालों की पोल खुल जाती है।

'दुर्गा-सप्तशती', अध्याय १ का प्रमाण कितना प्रसिद्ध और जगन्मान्य है—

'सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी।
संसार-बन्ध-हेतुश्च, सैव सर्वेश्वरेश्वरी।'

इस प्रमाण को कोई झूठा सिद्ध नहीं कर सकता। और भी है— **'विद्याऽपि सा भगवती, परमा हि देवि!'**

अब यह विचारना रह गया कि **मुक्ति का स्वरूप** गुण-भूत तन्मात्रादि से **शुद्ध चैतन्य-रूप** प्राप्त करना है। **चैतन्य, चित्, सम्वित्, विद्या, शक्ति, तेज, बल, धाम** आदि **भगवती** के ही नाम हैं और ये सभी गुण इसी की रचना हैं। भगवती की प्रेरणा से ही ये सब गुण क्रियान्वित होते हैं। **विष्णु, ब्रह्मा, शिवादि देव** भी **भगवती काली** के गुणों के अवतार हैं। सत्त्व के अवतार **विष्णु**, रजो-गुण के **ब्रह्मा** तथा तमो-गुण के अवतार या रूप **रुद्र** हैं। जिन गुणों के ये अवतार हैं, वे प्रकृति के ही हैं। **'गीता'** में भगवान् कहते हैं—

सत्वं रजस्तम इति, प्रकृतेस्तु गुणास्त्रयः।

'प्रकृति' माया का नाम है। **'माया'** भगवती की ही एक शक्ति है। **'देवी-भागवत'**, (स्कन्ध ७) में कहा है—

मन्माया-शक्ति-संक्लृप्तं, जगत् सर्वं चराचरम्।
स्व-शक्तेश्च समायोगादहं वीजात्मतो गता॥
अहमेवासमेवाग्रे, तान्यत् किञ्चिन्नगाधिप!
तदात्म-रूपं चित् सम्वित्, परं-ब्रह्मैक-नामकम्।
तस्य-काचित् स्वतः सिद्धा, शक्तिर्मायेति विश्रुता॥

सत्त्वादि गुण '**माया**' से उद्भूत हुए हैं, उन्हीं गुणों के अवतार **ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि** हैं और इनके भी अवतार **राम, कृष्णादि** हैं। ये अवतार तो मुक्ति दें और **देवी भगवती**, जिसे सब शास्त्र **पर-शक्ति, महा-माया, चित्-सम्विद्-रूपिणी** गाते हैं, केवल तामसी हैं—मोक्ष नहीं देतीं! ऐसा कहने और माननेवालों के मन में कितना गहरा अज्ञान जमा है! उनके मस्तिष्क में कैसी अविद्या बैठी है! बलिहारी है इस बुद्धि की!!

जरा **राम, कृष्णादि** अवतारों का भी तो कथन देखो। **भगवान् श्री राम लक्ष्मण** को प्रबोध करते हुए कहते हैं (अध्यात्म-रामायण—'**राम-गीता**')—

तस्मात् स्वतन्त्रता न किमप्यपेक्षते, विद्या विमोक्षाय विभाति केवला।

जिन्हें सभी वैष्णव ही नहीं, समस्त भारतीय मुक्ति-दाता मानते हैं, वे '**श्रीराम**' स्वयं श्रीमुख से केवल **विद्या-भगवती** को ही **मुक्ति का हेतु** मानते हैं। '**विद्या**' का अर्थ पढ़ना-पढ़ाना ही न मान बैठना। '**विद्या**'—**श्रीआद्या आदि दश महा-शक्तियों** का नाम है। ये '**ज्ञान**' **की दश मूर्तियाँ** हैं। कहा भी है—

'**विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि**' और '**विद्याहमविद्याहमणाहमित्यादि**' अथर्वोपनिषद्। और भी—'**विद्या मायेति विश्रुता**' इत्यादि।

सारांश यह हुआ कि मोक्ष **भगवती की इच्छा** ही से मिलता है। **श्रीराम** आदि अवतार भी अपने भक्तों को अन्त में इन्हीं के पास लाते हैं और इन्हीं से उनका भव-बन्धन छुड़वाने की प्रार्थना करते हैं।

उक्त प्रमाण-धाराओं को विचार में लाकर देखें, तो ज्ञात होता है कि '**मुक्ति**' की अधिष्ठात्री एक **भगवती** ही हैं। ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि में '**चित्-शक्ति**' से ही चैतन्यता आती है। वही **मोक्ष की हेतु** है, वही '**विद्या**' है। यह '**विद्या**' अपनी चार भुजाओं से बताती है कि चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) मेरे हाथ हैं। मुझे प्राप्त कर लेनेवाले चारों पुरुषार्थ प्राप्त कर लेते हैं।

कृपाण, मुण्ड, वर और **अभय—इन चारों से भगवती काली देवी सर्व-जीवन के प्रधान लक्ष्यों को व्यक्त करती हैं।**

(१) '**कृपाण**' : '**खड्ग**' द्वारा यह सङ्केत है कि इसके द्वारा **भगवती काली** धड़ से मुण्ड को काटकर अलग कर देती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि '**अज्ञान**' में छिपा हुआ '**ज्ञान**' है। उस '**ज्ञान**' को प्राप्त करने के लिए तुम भी **तेजस्तत्त्व** या यों कहो कि शुद्ध-तत्त्व से '**अविद्या**' को काट दो और '**ज्ञान**' को अपनाओ। '**कृपाण**' **तेजस्तत्त्व है, जो प्रकाश का दाता है**। प्रकाश-धर्म '**सत्त्व**' का है और '**सत्त्व**'— ज्ञान-रूप है।

(२) नीचे के दूसरे बाँएँ हाथ में '**मुण्ड**' है। '**मुण्ड**'— '**अर्थ**'-तत्त्व है अर्थात् दूसरी बाँईं भुजा दूसरा पदार्थ '**अर्थ**'-रूप है। इस प्रकार '**मुण्ड**' का अर्थ भक्ष्य-भोग्य फल, चेतना-प्रधान ज्ञानेन्द्रिय प्रायः बल-पुष्टि देनेवाला मस्तक है।

'**मुण्ड**' से यह भी शिक्षा मिलती है कि '**जैसे मैंने पूर्ण शरीर में से सार-भूत वस्तु ले ली है, वैसे तुम भी सत्त्व के द्वारा अविद्या को काट कर सार-भूत 'ज्ञान' ग्रहण करो, व्यर्थ वस्तुओं के चक्र में तृष्णा मत करो।**' यहाँ '**अर्थ**'-शब्द से धनादि अनेक वस्तुएँ ग्रहण की हैं, परन्तु प्रयोजन में ये सभी वस्तुएँ अन्तर्भूत हो जाती हैं। यहाँ '**अर्थ**' से प्रयोजन लिया गया है, जो सर्वतोमुखी है।

(३) नीचे की दाहिनी भुजा में '**वर**'-मुद्रा है। **यह भुजा काम का स्वरूप है**। इसमें साधक भक्तों के वर या अभीष्ट सिद्धियाँ हैं। यही '**वर**'-**मुद्रा** से सूचित किया है। **वर की मुद्रा** अर्थात् सीधा खुला हाथ यह सङ्केत करता है कि '**क्या चाहते हो?**'

इससे तीसरे साध्य फल '**काम**' की पूर्ति होती है। '**काम**' का अर्थ इन्द्रिय-प्रीति ही नहीं है, किन्तु सुख-पूर्वक सफलता के साथ उत्कृष्ट जीवन से तात्पर्य है। इस '**काम**' में अणिमादि सिद्धियाँ अन्तर्भूत हैं।

(४) '**अभय**'-मुद्रा चौथी भुजा द्वारा व्यक्त होती है, जो ऊपर की पहली दाहिनी भुजा है। '**अभय**'—**मोक्ष का स्वरूप है।**' '**अभय**' अर्थात् भय-रहित होना ही मोक्ष का सङ्केत है। भय का मिट जाना '**अभय**' है। संसार में तो भय-ही-भय है। '**द्वितीयाद् वै भयं भवति**' (श्रुति)—एक से दो हुए और भय हुआ, इस श्रुति के अनुसार, '**अभय**' मुक्ति-धाम (मोक्ष) है। एक रहना अद्वय-सिद्धान्त का मूल है। चौथा पुरुषार्थ '**मोक्ष**' है। वही **अभय-पद** है। भगवती कहती हैं—'**इस क्रम से तुम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष मुझसे पा सकते हो।**'

यहाँ यह क्रम देखने और समझने का है। '**धर्माचरण**' करते हुए धर्मानुकूल ही '**अर्थ-सिद्धि**' करो। उस अर्थ के द्वारा **वर** (अभीष्ट), '**काम**' (भोग-योगादि) प्राप्त करो। फिर '**मोक्ष**' (अभय-पद) प्राप्त करो। यही क्रमिक उन्नति है।

८ घोर-दंष्ट्रा, करालास्या—इन दोनों विशेषणों का भाव भयङ्करता का प्रतिपादक है। **भगवती काली** भयानक डाढ़ें और डरावने मुखवाली हैं। **इससे भगवती यह सिखाती हैं कि उपासना में या ब्रह्म-तत्त्व की प्राप्ति में भय को जीतने की आवश्यकता है।** भय को जीतकर ही मानव मेरे मार्ग की यात्रा में सफल हो सकता है। सिद्धि का प्रथम लक्ष्य यही है कि भय न हो। '**भय**' और '**लज्जा**'—ये दो ही उपासना के महा-विघ्न हैं। इन्हें जीतनेवाला साधक तुरन्त सिद्धि पा लेता है।

'**कानों में शव-युग्म का धारण करना**' और '**हाथों की मेखला कटि पर पहनना**'—ये सभी भय की बातें हैं। इनके अतिरिक्त भी काली के अङ्ग-अङ्ग में भयङ्कर भूषण हैं। उनसे यही समझना चाहिए कि भगवती के साधन-क्रम में स्थान-स्थान पर, पग-पग पर '**भय**' है। उसे क्षमता और धैर्य के साथ, श्रद्धा और विश्वास के द्वारा समझते हुए, जीकर लक्ष्य पर पहुँचो और **अद्वैत-रूप** बनो तथा संसार की झंझटों से छुटकारा प्राप्त करो।

९ दिगम्बरा—नग्नता से यह सिखाया है कि प्राणी-मात्र को परमार्थ में बाह्याडम्बर (वस्त्रादि) की आवश्यकता नहीं है। प्राणी तो नङ्गा ही आया है, यों ही जाएगा। दूसरी बात यह कि आवरण दूर करके ही असली रूप को पा सकते हो। अविद्या का आवरण जीव पर छाया है, उसे हटाओगे, तब जीव का असली रूप जान सकोगे। '**भगवद्-गीता**', अध्याय ५ में भगवान् ने स्वयं यही कहा है—

'**अज्ञानेनावृतं ज्ञानं, तेन मुह्यन्ति जन्तवः।**'

अर्थात्—'**ज्ञान अज्ञान से ढँका है। इसी कारण प्राणी मोह में भटकते फिरते हैं।**'

भगवती काली अपनी '**दिगम्बरता**' के द्वारा अविद्या को दूर करने का उपदेश देती हैं।

तीसरी बात यह है कि ऐश्वर्य-भूषण-वस्त्रादि सब सांसारिक हैं, तृष्णा के पोषक हैं और ममता के फैलाने वाले हैं। शाश्वत-सुख की प्राप्ति के लिए इन झूठे आडम्बरों की आवश्यकता नहीं है। इस भाव से भी '**दिगम्बरता**'—जगत् की उपकारिणी है।

चौथी बात यह है कि '**वस्त्र**' आशा-वासना-रूप हैं। भगवती कहती हैं कि '**मैं वासना-रहित हूँ। मुझे वासनाओं की कोई अपेक्षा नहीं है।** इसी प्रकार मनुष्य को भी वासना-रहित होना चाहिए। '**वासना**' **ही बन्धन का हेतु है।** वासना-त्यागी ही **ब्रह्म-ज्ञान** प्राप्त कर सकता है, इत्यादि।

१० हसन्मुखी—भगवती काली अट्टहास करती हैं। यह अट्टहास वे प्रलय करने के बाद करती हैं। किसी को आक्रमण कर विजय प्राप्त कर लेने के बाद '**हास**' होता है, तो किसी को लक्ष्य प्राप्त होने पर '**हर्ष**' होता है—यह स्वभाव है। **भगवती पराम्बा अपनी हासच्छटा**

से यह दिखाती हैं कि 'मेरे भावुकों! भयावह दर्शनों में भी मेरे समान हँसते रहो' अर्थात् प्रसन्नता से रहो।

दुःख और सुख में प्रसन्न रहनेवाला अपने साध्य में सफल होता है। **'हास'** ही विलास का साधन है। **'हास'** हृदय की विशालता का मूल है। इसलिए बड़े-बड़े वैद्य तथा डाक्टर भी हँसते रहनेवाले का जीवन सुखी मानते हैं। हँसते रहनेवाला आदमी तन्दुरुस्त रहता है। **भगवती काली** भी कहती हैं कि—**'कार्य सिद्ध करके हँसो, प्रसन्न रहो एवं संसार में दुःख में भी हँसते रहो, सफलता प्राप्त करोगे।'**

११ त्रिनेत्रा—सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि—ये **तीन ज्योतियाँ** हैं। मूल में तो ज्योति एक ही हैं, पर उसके व्यवहारानुमोदित तीन रूप हैं—**उष्ण, शीत** और **ताप्य**। उष्ण—**सूर्य**, शीत—**चन्द्र** और ताप्य—**वह्नि**। सत्त्व, रजः, तमः—ये तीन नेत्र हैं। **सत्त्व**—ज्ञान-प्रधान तीसरा ललाट का नेत्र है। रजस् और तम् दोनों दाहने-बाँएँ नेत्र हैं। इन नेत्रों से **भगवती काली** यह उपदेश करती हैं कि **'मैं त्रिगुणा हूँ, प्रकृति हूँ। मैं इनसे सबको समान रूप से देखती हूँ। तुम भी इन तीनों गुणों का समान-स्वरूप जब आत्म-सात् करेगे, तब साम्यावस्था को प्राप्त होगे। तभी माया-बन्धन दूर होगा।'**

भगवती काली के ये तीन नेत्र साधकों के **दैविक, दैहिक** और **भौतिक—तीनों तापों** तथा **आध्यात्मिक, आधि-दैविक** और **आधि-भौतिक दोषों** को दूर करते हैं। ये तीन नेत्र **भगवती काली** की प्रधान विभूतियों—शिवादि को ही प्राप्त हैं, राम-कृष्णादि (विष्णु-ब्रह्मादि) को नहीं। **तीसरा नेत्र विशिष्ट ज्ञान-ज्योति है, जो 'शक्ति' का विशेष लक्षण है। इस नेत्र की कृपा से भगवती काली के साधक भी शिवादि की तरह ज्ञानी हो जाते हैं।**

१२ दश-भुजा—दश संख्या **पूर्णता** की द्योतक है। एक से ९ तक की संख्याएँ पूर्ण नहीं हैं। यह बात व्यवहार में भी सिद्ध है। **'ऊन'** और **'पूर्ण'**—इन दो व्यवहारों में सारी संख्या गर्भित है, जैसे—१-३-५-७-९ अपूर्ण, **ऊन** और **विषम** हैं। २-४-६-८-१० **पूर्ण** (पूरी) और **सम हैं**। मूल शून्य (0) से एक संख्या बनी, फिर २-३ आदि ९ तक बनीं। इसके बाद १ संख्या फिर व्यवहार-योग्य न हो सकी, तब मूल **'शून्य'**-संख्या एक के आगे आती है। तब वह १ संख्या दस की बोधक हो जाती है। इसीलिए **'शून्य'** को **पूर्ण** कहते हैं।

शून्यवाली संख्या सदा पूर्ण होती है। इसी रहस्य की द्योतक दश-संख्यक भुजाएँ, दश-संख्यक पैर और दश-संख्यक मुख महा-काली के हैं। इस सन्दर्भ में **'सप्तशती-रहस्य'** का ध्यान देखें—**'दश-वक्त्रा, दश-भुजा, दश-पदाञ्जन-प्रभा।'** इन विशेषणों में **दश दिशाओं, दश इन्द्रियों एवं दश महा-विद्याओं** के सङ्केत निहित हैं। दशों दिशाओं में, दशों इन्द्रियों में, दशो विद्याओं में यही **महा-काली-तत्त्व** परिपूर्ण है। इसी के वे दश अवान्तर परिच्छेद, अंश, अवतार, स्वरूप, भेद, मूर्तियाँ—कुछ भी कहिए—हैं। इसी कारण **भगवती काली** को विद्याओं की **'आद्या'** और **'विद्या-राज्ञी'** कहते हैं।

हस्त-पाद-मुख की दश-संख्या यह बतलाती है कि—**'मेरा साधक दशों दिशाओं में व्याप्त, प्रभावशाली, प्रख्यात, सिद्ध तथा दशेन्द्रियों का विजेता एवं दशो महा-विद्याओं की सिद्धि करने और करा देनेवाला होता है।**

■ ■ ■ ■

श्रीकाली-कल्पतरु

श्रीकाली-तत्त्व की विस्तृत जानकारी के लिए पढ़िए **'श्रीकाली-कल्पतरु'**। शीघ्र ही यह नए रूप में पुनः प्रकाशित हो रहा है। **—सम्पादक**

‘चण्डी’ : : विशेष प्रस्तुति

हिन्दी

तन्त्र–दीपनी

संग्रह-कर्ता

श्री रामगोपाल शर्मा

•

देव-नागरी-लिपि एवं अनुवाद-कर्ता सम्पादक

‘कुल-भूषण’ पण्डित रमादत्त शुक्ल

•

सहायक सम्पादक

‘कुल-वाणी-मर्मज्ञ’ पण्डित मधुसूदनप्रसाद शुक्ल

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक :

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

श्री चण्डी-धाम, प्रयाग-राज (उ० प्र०)—२११ ००६ ☎ २५०२७८३

'तन्त्र-दीपनी'

के

मूल संग्रह-कर्ता

श्रीरामगोपाल शर्मा

द्वारा

'पाण्डुलिपि' के प्रथम पृष्ठ पर उल्लिखित :

मङ्गलाचरण

।। ॐ नमः श्रीगुरु - पादुकाभ्यो नमः ॐ ।।

ज्ञान-काल-भिया सुनिश्चिल-धिया माया-मयेऽम्भोनिधौ,
नान्यत् त्रातुमलं विनांघ्रि-कमलं श्रीनाथ-धन्वन्तरेः।
तारा तारण-हेतवे नहि तरिर्विज्ञाय मूर्ध्नि स्वयम्,
धत्तेऽक्षोभ्य-गुरुं तदीय-चरण-द्वन्द्वे मनो मेऽवतात्।।

❋

निगमागोचर-तन्वां भावित भुवन-त्रयी मन्वाम्,
किङ्कर-सिद्ध-कदम्बां जगदम्बां नौम्यनालम्बाम्।
कलौ विषय-तादात्म्य-व्याकुलाशेष-चेतसाम्,
ज्ञानाय तन्यते सिद्धि-साधनी 'तन्त्र-दीपनी'।।

❋

श्रीनाथांघ्रि-सहायेन, रामगोपाल-शर्मणा।
तन्त्राणां सारमाकृष्य, ज्ञात्वा साधक-सम्मतिम्।।

❋

श्रीरामगोपाल शर्मा

(मूल संग्रह-कर्ता : 'तन्त्र-दीपनी')

३. यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः — मध्यमा-अनामा और अंगुष्ठ-अग्र से।

४. रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि नमः — मध्यमा-अनामा के मध्य-पर्व पर अंगुष्ठाग्र रखकर। **'गायत्री'** और **'मूल-मन्त्र'** से तीन बार उत्तोलन करे।

५. वं जलात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः — तत्त्व-मुद्रा से। **'अञ्जलि'** से नमस्कार कर—

६. ऐं वाग्भवात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः — मन्त्र से ताम्बूल (पान) प्रदान करे।

इसके बाद **'वाग्भव बीज'** (ऐं) का १०८ बार **'जप'** करे। उस **'जप'** को **'गुरु-देव'** के **'दाहिने हाथ'** में निम्न मन्त्र से समर्पित करे–

ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्ता त्वं, गृहाणास्मत्-कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव! त्वत्-प्रसादान्महेश्वर!।।

अब **'गुरु-देव'** को नमस्कार कर उनकी स्तुति करे–

ॐ अखण्ड-मण्डलाकारं, व्याप्तं येन चराचरम्। तत्-पदं दर्शितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

ॐ अज्ञान-तिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जन-शलाकया। चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

इसके बाद **'श्रीगुरु-पादुका-पञ्चक'** स्तोत्र का पाठ करे–

ॐ ब्रह्म - रन्ध्र - सरसीरुहोदरे, नित्य - लग्नमवदातमद्भुतम्।
कुण्डली - विवर - काण्ड - मण्डितं, द्वादशार्ण - सरसीरुहं भजे।।१।।
तस्य कन्दलित-कर्णिका-पुटे, क्लृप्त-रेखमकथादि-रेखया।
कोण-लक्षित-हलक्ष-मण्डली-भाव-लक्ष्यमबला-मयं भजे।।२।।
तत्-पुटे पटु-तड़ित्-कडारिम-स्पर्द्धा-मान-मणि-पाटल-प्रभम्।
चिन्तयामि हृदि चिन्मयं वपुर्विन्दु-नाद-मणि-पीठ-मण्डलम्।।३।।
ऊर्ध्वमस्य हुत-भुक्-शिखा-त्रयं, तद्-विलास-परिवृंहणास्पदम्।
विश्व-घस्मर-महोत्सवोत्कटं, व्यामृषामि युगमादि-हंसयोः।।४।।
तत्र नाथ-चरणारविन्दयोः, कुंकुमासव-झरी-मरन्दयोः।
द्वन्द्वमिन्दु-मकरन्द-शीतलं, मानसं स्मरति मङ्गलास्पदम्।।५।।
निषक्त-मणि-पादुका-नियमिताघ-कोलाहल-स्फुरत्-किशलयारुणं नख-समुल्लसच्चन्द्रकम्।
परामृत-सरोवरोदित-सरोज-सद्-रोचिषं, भजामि शिरसि स्थितं गुरु-पदारविन्द-द्वयम्।।६।।
पादुका-पञ्चक-स्तोत्रं, पञ्च-वक्त्राद् विनिर्गतं। षडाम्नाय-फलं प्राप्तं, प्रपञ्चे चाति-दुर्लभम्।।७।।

'पादुका-पञ्चक' के पाठ के बाद **'गुरुदेव'** को पुनः नमस्कार करे–

ॐ सर्व-श्रुति-शिरो-रत्न-विराजित-पदाम्बुजम्। वेदान्ताम्बुज-सूर्याय, तन्मे श्रीगुरवे नमः।।

ॐ चैतन्यं शाश्वतं दिव्यं, व्योमातीतं निरञ्जनम्। बिन्दु-नाद-कलातीतं, तस्मै श्री गुरवे नमः।।

(२) कुण्डलिनी का ध्यानादि

'गुरु-वन्दना' के बाद करोड़ों सूर्य के समान देदीप्यमान, करोड़ों चन्द्रमा के समान सुशीतल, कमल-नाल के पतले रेशे के समान महीन, बिजली के समान लहरदार **'कुण्डलिनी'** को **'मूलाधार'** से जगाकर **'ब्रह्म-पथ'** से **'सहस्रार'** में लाकर **'शिव'** से संयोग कराए। **'शिव'** और **'शिवा'**-रूपी **'कुण्डलिनी'** के संयोग से उत्पन्न **'अमृत'** से अपनी देह के अङ्ग-प्रत्यङ्ग भीग गए हैं– ऐसी भावना कर **'कुण्डलिनी'** को पुनः **'मूलाधार'** में ले आए।

(३) तान्त्रिक सन्ध्या*

शयन-कक्ष से बाहर आकर **'नित्य-कर्म'** से निपट कर **'मूल-मन्त्र'** से अभिमन्त्रित जल से मुख-प्रक्षालन करे। हाथ-पैर धोकर, वस्त्र बदल कर **'वैदिकी सन्ध्या'** करने के बाद **'तान्त्रिक सन्ध्या'** करे। शाक्त साधक– **'ॐ आत्म-तत्त्वाय स्वाहा, ॐ विद्या-तत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिव-तत्त्वाय स्वाहा'** इन तीन मन्त्रों से **तीन बार आचमन** करे। अन्य केवल **'आंचमन'** मात्र करे। फिर पात्रस्थ जल में **अंकुश-मुद्रा** से **तीर्थों का आवाहन** करे–

ॐ गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति! नर्मदे सिन्धु कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

(४) अघमर्षण (पाप-मोचन)

गङ्गादि तीर्थ-शक्तियों से सम्पन्न जल को बाँईं हथेली में लेकर 'आकाश-बीज' **(हं)**, 'वायु-बीज' **(यं)**, 'अग्नि-बीज' **(रं)**, 'पृथ्वी-बीज' **(लं)** तथा 'सुधा-बीज' **(वं)**—**'हं-यं-रं-लं-वं'** से तीन बार अभि-मन्त्रित करे। **'मूल-मन्त्र'** का उच्चारण करते हुए उस टपकते हुए जल-बिन्दु से **'तत्त्व-मुद्रा'** के द्वारा शिर पर सात बार अभि-सिञ्चन करके शेष जल को बाँईं हथेली से दाहिनी हथेली में लेकर तेजो–रूप का ध्यान करके **'इडा नाड़ी'** (बाँएँ नासिका-रन्ध्र) से शरीर के अन्दर ले जाकर शरीर के अन्दर स्थित **'पापों का प्रक्षालन'** करे और **'पापों के प्रक्षालन'** से काले पड़ गए जल को पाप-रूप समझकर **'पिङ्गला नाड़ी'** (दाँएँ नासिका-रन्ध्र) से बाहर लाकर **'फट्'**-मन्त्र से सामने स्थापित चट्टान पर पटक दे। यह **'अघमर्षण'**-क्रिया अर्थात् **'पाप-पुरुष का नाश'** है।•

हाथ धोकर तथा आचमन करके **''ह्रीं हंसः''** अथवा **''ॐ घृणि सूर्याय आदित्य''** मन्त्र से **'भगवान् सूर्य'** को **'अर्घ्य'** प्रदान करे। फिर **''ॐ सूर्य-मण्डलस्था अमुक-देवतायै नमः''** से अथवा **'इष्ट-देवता के गायत्री-मन्त्र'** से तीन बार **'जल'** समर्पित कर उस **'गायत्री-मन्त्र'** का यथा-शक्ति जप करे।

---

* **'गुरु-मण्डल-अर्चन** के विस्तृत विधान हेतु देखें– कल्याण मन्दिर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित **'श्रीगुरु-तत्त्व-दर्शन'** एवं **'श्रीगुरु-साधना'** पुस्तकें। कुछ आचार्यों के अनुसार **'गुरु-पूजन-क्रम'** में **'गुरुदेव'** ही **'शिव'** और **'गुरु-शक्ति'** ही **'कुल-कुण्डलिनी'** हैं। **वैदिक सन्ध्या** की विधि के लिए **'गायत्री कल्पतरु'** (मूल्य ३० रुपए) दृष्टव्य है। ऐसी भी मान्यता है कि **'वैदिकी सन्ध्या'** करने का अधिकार **'उपनयन-संस्कार'** से सम्पन्न **'द्विजों'** को ही है। शूद्र एवं **'उपनयन-संस्कार'** से हीन व्यक्ति केवल **'तान्त्रिक सन्ध्या'** करे।

• 'तन्त्र-साधना' में **सन्ध्या-वन्दन, तर्पण, अर्चन, हवन** आदि सभी कृत्यों में **'मूल-मन्त्र'** से अभिप्राय उस **'मन्त्र'** से है, जिस **'मन्त्र'** की **'दीक्षा'** साधक को मिली है। वह इन समस्त कृत्यों में अपने ही **'इष्ट-देवता'** के **'दीक्षा-भिन्न'** अन्य **'मन्त्रों'** का उपयोग नहीं कर सकता। उदाहरण-स्वरूप यदि किसी साधक को **भगवती बाला त्रिपुरा** के **'त्र्यक्षरी मन्त्र'** की **'दीक्षा'** मिली है, तो वह सभी अर्चन-क्रम में इसी **'त्र्यक्षरी मन्त्र'** का उच्चारण करेगा। **'भगवती बाला त्रिपुरा'** के **'षडक्षरी'** अथवा **'चतुर्दशाक्षरी'** आदि अन्य **'मन्त्रों'** का नहीं।

हथेली में रखे हुए अभि-मन्त्रित जल को वस्तुतः न तो **'नासिका-रन्ध्र'** से खींचकर शरीर के भीतर लाया जाता है और न बाहर निकाला जाता है। **'अघमर्षण'** में **'हठ-योग'** की **'जल-नेती'** जैसी क्रिया की आवश्यकता नहीं है। यह **'भावना-प्रधान' चिन्तन-मूलक क्रिया** है। **'नासिका-रन्ध्र'** से अभिमन्त्रित जल को खींचकर शरीर के अन्दर ले जाकर **'पाप-राशि'** को धोने और **'पाप-राशि'** के प्रक्षालन से काले पड़ गए **'कल्पित जल'** को **'नासिका-रन्ध्र'** से बाहर लाने की केवल **'भावना'** ही की जाती है। फिर **'भावना'** द्वारा **'जल'** को झटके से बाहर **'कल्पित शिला'** पर पटक दिया जाता है।

(५) विविध गायत्री-मन्त्र

१. विष्णु-गायत्री–**ॐ त्रैलोक्य-मोहनाय विद्महे स्मराय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।**

२. राम-गायत्री–**ॐ दाशरथाय विद्महे सीता-वल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।**

३. गोपाल-गायत्री–**ॐ कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।**

४. वासुदेव-गायत्री–**ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।**

५. नृसिंह-गायत्री–**ॐ वज्र-नखाय विद्महे तीक्ष्ण-दंष्ट्राय धीमहि तन्नो नरसिंहः प्रचोदयात्।**

६. शिव-गायत्री–**ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महा-देवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।**

७. सूर्य-गायत्री–**ॐ आदित्याय विद्महे मार्तण्डाय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।**

८. भुवनेश्वरी-गायत्री–**ॐ नारायण्यै विद्महे भुवनेश्वर्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।**

९. भैरवी-गायत्री–**ॐ त्रिपुरायै विद्महे भैरव्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।**

१०. बाला-भैरवी-गायत्री–**ॐ वागीश्वर्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौस्तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्।**

११. त्रिपुरा-सुन्दरी-गायत्री –**ॐ ऐं त्रिपुरा देवि विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौस्तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्।**

१२. छिन्नमस्ता-गायत्री–**ॐ वैरोचिन्यै विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।**

१३. काली-गायत्री–**ॐ कालिकायै विद्महे श्मशान-वासिन्यै धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात्।**

'कुमारी-तन्त्र' में बताया है कि **'काली-गायत्री'** का दश बार जप करने से **'ब्रह्म-हत्या'-**जैसे पाप खण्ड-खण्ड हो जाते हैं। इसके समान न तो कोई **'विद्या'** है, न इसके **'जप'** के समान कोई अन्य **'जप'** है।

'कुलोड्डीश तन्त्र' में **'त्रिपुर-सुन्दरी गायत्री'** का उद्धार (प्रमाण) यह है–'देवी-प्रणव' **(ऐं)** के बाद **'ङेऽन्ता'** (चतुर्थ्यन्त) **'त्रिपुर-सुन्दरी'** (अर्थात् त्रिपुर-सुन्दर्यै) बोलकर **''विद्महे''** तत्पश्चात् **'कामेश्वर्यै धीमहि''** के बाद **''तन्नः क्लिन्ने प्रचोदयात्''** पद बोले।

१४. **तारा-गायत्री–ॐ तारायै विद्महे महोग्रायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।**

१५. तारा-गायत्री के भेद– (१) 'तारार्णव' में **'महोग्रा तारा'** की **'गायत्री'** बताई गई है– **ॐ महोग्रायै विद्महे तारायै धीमहि तन्नो देवी धियो यो नः प्रचोदयात्।**

(२) उग्रतारा-गायत्री–**ॐ नारायण्यै विद्महे उग्र-तारायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।**

(३) 'एक-जटा' की गायत्री– **हे भगवत्येकजटे विद्महे विकट-दंष्ट्रे धीमहि तन्नस्तारे प्रचोदयात्।**

१६. शक्ति गायत्री–**ॐ सर्व-सम्मोहिन्यै विद्महे विश्व-जनन्यै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्।**

१७. दुर्गा-गायत्री–**ॐ नारायण्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्।**

१८. गणेश-गायत्री–**ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्र-तुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।**

(६) गायत्री के ध्यान

तीनों सन्ध्याओं में **'गायत्री'** के **'ध्यान'** भिन्न-भिन्न हैं। **प्रातः-कालीन गायत्री का ध्यान है** – उदित होनेवाले **'सूर्य'** के समान वर्णवाली, दोनों हाथों में **'पुस्तक'** और **'जप-माला'** धारण करनेवाली, **'कृष्ण मृग-चर्म'** पहननेवाली **'ब्राह्मी शक्ति'** का ध्यान प्रातः-काल आकाश में तारे रहते समय करे।

मध्याह्न-कालीन ध्यान – **'श्याम-वर्णा'**, चारों हाथों में **'शङ्ख-चक्र-गदा'** और **'पद्म'** धारण करनेवाली **'सूर्य-मण्डलस्था देवी'** का ध्यान करे।

सायं-कालींन ध्यान–वर-दायिनी गायत्री-रूपा, **शुक्ल-वर्णा, श्वेत-वस्त्रा, वृषारूढा, त्रिनेत्रा, पाश-शूल** एवं **नर-कपाल**-धारिणी **सूर्य-मण्डलस्था देवी** का ध्यान करे।

भगवती त्रिपुर-सुन्दरी की **'सन्ध्या'** में ध्यान कुछ भिन्न है। यथा–

प्रातः-कालीन ध्यान– **'मूलाधार-कमल'** में **'अग्नि-मण्डलोपरि'**-संस्थिता, **'वाग्-वीज'**-रूपिणी, **'विद्युत्-पुञ्ज'** के समान कान्ति-मती, **'पुष्प, वाण, इक्षु, धनु, पाश, अंकुश'**-हस्ता, **'इच्छा-मय'** मूर्ति, **'गुरु'** और **'विद्याक्षरा'**-रूपिणी।

मध्याह्न-कालीन ध्यान– **'हृदय-कमल'** की **'कर्णिका'** के मध्य में **'सूर्य-मण्डल'**-वासिनी, **'काम-बीजात्मिका'**-आलता के रस के समान **'अरुण-वर्णा'**, **'पुष्प-वाण, पुष्प-इक्षु-चाप, पाश** और **अंकुश'**-धारिणी, अपनी **'षट्-त्रिंशत्' (३६) तत्त्व'-रूपिणी 'शक्तियों'** से परिवेष्टिता भगवती का ध्यान करे।

सायं-काल–**'आज्ञा-पद्म'** के मध्य में **'चन्द्र-मण्डल'**-वासिनी, **'चन्द्रमा'** के समान 'कान्तिवाली', **'शक्ति-बीज'**-स्वरूपिणी, **'धनु-वाण, पाश, अंकुश'**-हस्ता, **'ह-क्ष-वर्ण-मयी' 'नित्या-देवी-गण'** से परिवेष्टिता देवी का ध्यान करे।

इस प्रकार **'इष्ट-देवी'** की **'गायत्री'** का **ध्यान** करके **मानसिक उपचारों** से पूजन करने के बाद यथा-शक्ति **'मूल-मन्त्र'** का जप करके **'जप-फल'** देवी को समर्पित करके सम्पूर्ण जगत् को **'देवी-मय'** माने।

(७) स्नान-विधि

नदी आदि जलाशय में वैदिक स्नान करके **'तान्त्रिक स्नान'** करे। इसकी विधि निम्नानुसार है–

"ॐ अद्येत्यादि .... अमुक-गोत्रः श्री अमुक-देव-शर्मा अमुक-देवता-प्रीतये स्नानमहं करिष्ये" – यह सङ्कल्प कर जल में **'चतुरस्र'** की कल्पना करे। उसमें–

'ॐ पृथिव्यां यानि तीर्थानि, करैः स्पृष्टानि ते रवे! तेन सत्येन मे देव! तीर्थं देहि दिवाकर!

उक्त मन्त्र पढ़कर उस **'चतुरस्र'** में **'अंकुश मुद्रा'** से **'तीर्थों का आह्वान'** करे। 'सुधा-बीज' **(वं)** से **'धेनु-मुद्रा'** द्वारा उसका **'अमृतीकरण'** करे। कवच **(हुं)** से **'अवगुण्ठन'** एवं अस्त्र **(फट्)** से **'संरक्षण'** कर जल-राशि पर **मूल-मन्त्र** का आठ बार 'जप' करे। जल को सूर्य-मण्डलस्थ देव के चरण-कमल से निःसृत जल मानकर **मूल-मन्त्र** के अन्त में **'अमुक-देवतां-अभिषिञ्चामि'** यह वाक्य जोड़कर **'कलश-मुद्रा'** से अपने शिर पर तीन बार अभिसिञ्चन कर **'मूल-मन्त्र'** से अपने शरीर पर शुद्ध मिट्टी का लेप करे। अँगुलियों से नाक-कान आदि के छिद्रों को बन्द कर जल में तीन बार डुबकी लगाए। तदनन्तर **'वैदिक स्नान'**, **'सन्ध्या'** आदि करने के बाद **'सूर्य'** को **अर्घ्य** देकर **'तान्त्रिक अघमर्षणादि'** से लेकर **'जल-धारा-दान'** आदि तक के कृत्य सम्पादित करे। फिर **'तर्पण'** करे–

ॐ देवाँस्तर्पयामि नमः। ॐ ऋर्षीँस्तर्पयामि नमः। ॐ पितॄँस्तर्पयामि नमः। ॐ गुरुं, परम-गुरुं, परापर-गुरुं, परमेष्ठि-गुरुं तर्पयामि नमः।

वैष्णव मन्त्र के विषय में–नारद, पर्वत, जिन, निशच, उद्धव, दारुक, विश्वक्सेन, शैलेय और गुरु –इनमें से प्रत्येक का तीन-तीन बार तर्पण करे। 'तर्पण'-वाक्य–**'ॐ नारदं तर्पयामि नमः'** इत्यादि। तदनन्तर **'मूलं अमुक-देवतां तर्पयामि नमः'** से (देवता के द्वितीयान्त नामोच्चारण-पूर्वक) **'तर्पण'** करे।

उक्त वाक्य **'विष्णु'**-मन्त्र के लिए हैं। (अन्य देवता के विषय में **'मूलं अमुक-देवतां तर्पयामि'** से **'तर्पण'**

करे।) **'शक्ति'-मन्त्र** के सम्बन्ध में **'मूलं अमुक-देवीं तर्पयामि स्वाहा'** – से तर्पण करे। इस प्रकार पच्चीस अथवा दस बार 'तर्पण' करे। (**'विशुद्धेश्वर तन्त्र'** के अनुसार **'शक्ति'-मन्त्र** के विषय में **तीन बार 'तर्पण'** करने का विधान है)। इसके बाद **आवरण-देवताओं** का एक-एक बार **'तर्पण'** करे। यदि इसमें असमर्थ हो, तो **'मूल-मन्त्र'** का उच्चारण कर केवल **'इष्ट-देवता'** का **'तर्पण'** करे।

अब जल से बाहर आकर दो धौत वस्त्र (धोती और उत्तरीय) धारण कर आचमन करने के बाद– **'ह्रीं हंसः इदमर्घ्यं सूर्याय स्वाहा'** इस मन्त्र से **सूर्य को अर्घ्य** प्रदान करे।

तारादि देवता के पक्ष में – **'ह्रीं हंसः मार्तण्ड-भैरवाय प्रकाश-शक्ति-सहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा'** – इस मन्त्र से अर्घ्य देना चाहिए।

श्रीविद्या के विषय में – **'ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं सः मार्तण्ड-भैरवाय प्रकाश-शक्ति-सहिताय ग्रह-राशि-नक्षत्र-तिथि-योग-करण-परिवार-सहिताय इदमर्घ्यं दत्वा उद्यदादित्य-मण्डल-वर्तिने नित्य-चैतन्योदिताय देवाय स्वाहा'** से अर्घ्य प्रदान करे। **देवी-पक्ष** में तत्-तत् देवी के नाम उच्चारण-पूर्वक अर्घ्य दे। तत्-तत् **गायत्री-मन्त्र** से सूर्य-मण्डल-वासिनी को ३-३ अर्घ्य देकर **'गायत्री मन्त्र' का सौ बार** अथवा **दस बार** जप करे। सूर्य-मण्डल में देवता की भावना कर **मूल-मन्त्र का यथा-शक्ति 'जप'** करे तथा **'संहार-मुद्रा'** से देवता को हृदय में लाकर **तीर्थ को नमस्कार** कर **'याग-स्थान' (पूजा-घर)** में प्रवेश करे।

(८) सामान्य अर्घ्य-स्थापन

नदी आदि से घर आकर हाथ-पैर धोकर आसन पर बैठे। **'अस्त्र-मन्त्र' ('फट्')** से अर्घ्य-पात्र को धोकर मूल-मन्त्र पढ़ते हुए उसमें जल भरे। **'ॐ गङ्गे च यमुने चैव०'** मन्त्र से **'तीर्थों का आह्वान'** करे और फिर उसी जल से **'पूजा-द्वार'** का **'अभ्युक्षण'** कर **'द्वार-देवताओं का गन्ध-पुष्प आदि से पूजन'** करे।

'पूजा-द्वार' के शिरो भाग में **'ॐ विघ्नाय नमः'** से **गणेश** जी की, **'ॐ महा-लक्ष्म्यै नमः'** से **महा-लक्ष्मी जी** की एवं **'ॐ सरस्वत्यै नमः'** से **सरस्वती जी** की पूजा करे। दक्षिण में **'ॐ विघ्नाय नमः'** से **गणेश** जी, वाम में **'ॐ क्षेत्रेशाय नमः'** से **क्षेत्रेश** जी और उनके बगल में **'ॐ गङ्गायै नमः'** से **गङ्गा** जी का पूजन करे। **'ॐ अस्त्राय नमः'** से पूजा-द्वार की देहली का पूजन करे। यदि अशक्त हो, तो **'ॐ द्वार-देवताभ्यो नमः'** से द्वार-देवताओं की सामूहिक रूप से पूजा करे।

भगवती त्रिपुरा आदि के अर्चन-क्रम में **गणेश, क्षेत्रपाल, बटुक, योगिनी, गङ्गा, यमुना, लक्ष्मी** और **वाणी** का पूजन करे।

भगवान् विष्णु की पूजा में **नन्द, सुनन्द, चण्ड, प्रचण्ड, बल, प्रबल, भद्र, सुभद्र** की पूजा करे।

दक्षिण पैर आगे बढ़ा कर, वाम-शाखा का स्पर्श करते हुए तथा दाहिने अङ्गों को कुछ सिकोड़कर **'पूजा-मण्डप'** (गृह) में प्रवेश करे। नैऋत्य में – **'ॐ वास्तु-पुरुषाय नमः'** से वास्तु-पुरुष और **'ॐ ब्रह्मणे नमः'** से ब्रह्मा का अर्चन करे। मूल-मन्त्र का उच्चारण करते हुए दिव्य दृष्टि से (अर्थात् टकटकी बाँध कर) देखकर दिव्य विघ्नों का उत्सारण करे। **'हूँ फट्'** से चारों ओर जल छिड़क कर अंतरिक्षचारी विघ्नों का और बाँएँ पैर से पृथ्वी पर तीन-बार आघात करके पृथ्वी में रहनेवाले विघ्नों का उत्सारण करे। **'हुँ फट्'** का सात बार जप करके हाथ में **'विकिर'** लेकर चारों ओर निम्न-लिखित मन्त्र पढ़ते हुए बिखेर दे–

ॐ अपसर्पन्तु ते भूताः, ये भूताः भुवि संस्थिताः। ये भूताः विघ्न-कर्त्तारस्ते, नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

लावा, चन्दन, सरसों, भस्म, दूब, कुश और अक्षत सभी विघ्न-राशि का नाश करनेवाले '**विकिर**' हैं।

आसनोपवेशन*–'**ह्रीं आधार-शक्ति-कमलासनाय नमः**' मन्त्र से आसन की पूजा करके विनियोग पढ़े –

'**ॐ अस्य आसन-मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठः ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसन-परिग्रहे विनियोगः।**'

विनियोग के बाद निम्न-लिखित मन्त्र पढ़े–

लं पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि! त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां नित्यं, पवित्रमासनं कुरु॥

फिर '**लं पृथ्व्यै नमः**' से पूजन कर स्वस्तिकादि-क्रम से आसन पर बैठे तथा हाथ जोड़कर बाँईं ओर '**ॐ गुरुभ्यो नम :**' से गुरुदेव, दाहिनी ओर '**ॐ गणेशाय नमः**' से गणेश जी और मध्य में '**ॐ अमुक-देवतायै नमः**' से इष्ट-देवता को प्रणाम करे। हाथ में गन्ध-युक्त दो पुष्प लेकर मसल कर फेंक दे तथा चुटकी बजाकर **दिग्-बन्धन** करे। 'सुधा-बीज' (**वं**) से चारों और परिधि खींचकर यह भावना करे कि मैं अग्नि-प्राकार के अन्दर बैठा हूँ। तत्पश्चात् '**भूत-शुद्धि**' करे।

(९) 'भूत-शुद्धि' और 'षट्-चक्र-निरूपण'

पूर्व में उल्लिखित '**सामान्य पूजा-सूत्रों**' के अनुसार विधि-वत् '**भूत-शुद्धि**' सम्पादन के लिए '**षट्-चक्रों**' का ज्ञान आवश्यक है। अतएव सर्व-प्रथम 'स्वच्छन्द-संग्रह-तन्त्र' में **भगवान् शिव** द्वारा उपदिष्ट '**षट्-चक्र**' का निरूपण किया जाता है।

सुषुम्णा नाड़ी के अधो-ऊर्ध्व सिरे पर रक्त और श्वेत वर्ण के '**सहस्त्र-दल-कमल**' हैं। इन दोनों कमलों के मध्य-वर्त्ती **सुषुम्णा नाड़ी** के अन्दर '**षट्-चक्र**' स्थित हैं।

अधोवर्ती '**सहस्त्र-दल-कमल**' से अंगुल ऊपर '**पीत-वर्ण**' का '**मूलाधार-चक्र**' है। इसके चार दल हैं। पृथ्वी-तत्त्व-प्रधान इसके चारों दलों में क्रमशः '**वं-शं-षं-सं**' वर्ण स्थित हैं। यह अधो-मुख है। इसके मुख को बन्द करके मृणाल-तन्तु-वत् सूक्ष्म '**कुण्डलिनी**' इसी चक्र में स्थित है। यहीं '**चित्रा नाड़ी**' है।

'**मूलाधार-चक्र**' से ढाई अंगुल ऊपर लिङ्ग-मूल के समीप ६ दलवाला '**स्वाधिष्ठान-चक्र**' है। यह सूर्य के समान वर्णवाला है। इसके ६ दलों में '**बं-भं-मं-यं-रं-लं**'–ये ६ वर्ण स्थित हैं। यह जल-तत्त्व-प्रधान है।

इसके ८ अंगुल ऊपर नाभि-प्रदेश में दस दलवाला '**मणिपूर-चक्र**' है। अग्नि-वर्ण-प्रधान इस चक्र के दलों में '**ड**'-**कार** से '**फ**'-**कार** तक के १० वर्ण (**डं-ढं-णं-तं-थं-दं-धं-नं-पं-फं**) स्थित हैं।

'**मणिपूर-चक्र**' से १४ अंगुल ऊपर सायं-कालीन मेघों के समान सिन्दूरी वर्ण का '**अनाहत**'-नामक चक्र स्थित है। इसके १२ दल हैं, जिन पर '**क**'-**कार** से '**ठ**'-**कार** तक १२ वर्ण (**कं-खं-गं-घं-ङं-चं-छं-जं-झं-ञं-टं-ठं**) स्थित हैं। यह वायु-तत्त्व-प्रधान है। हृदय-प्रदेश-वर्ती इस चक्र में ही 'जीव' का वास है।

'**अनाहत**' से ऊपर कण्ठ-क्षेत्र में '**विशुद्ध-चक्र**' है। इसके १६ दल हैं। यह धूम्र-वर्ण का है। इसके दलों में '**अ-आ**' आदि १६ स्वर-वर्ण अङ्कित हैं।

'**विशुद्ध-चक्र**' से ६ अंगुल ऊपर, दोनों भौंहों के बीच में श्वेत-वर्णवाला '**आज्ञा-चक्र**' है। इस कमल के दोनों दलों में '**ह**' और '**क्ष**' अङ्कित हैं। इसे '**हंस-तीर्थ**' कहते हैं।

---

* **आसनोपवेशन** — भगवती काली और तारादि के अर्चन के क्रम में '**आसन-शोधन**' की विस्तृत प्रक्रिया है, जो तत्-तत् पद्धति ग्रन्थों में द्रष्टव्य है।

'आज्ञा-चक्र' से ऊपर 'सहस्त्र-दल-कमल' है। लाल रङ्ग के केशरोंवाले इस कमल में गुणातीत निरञ्जन (सदा-शिव) का वास है।

भूत-शुद्धि—साधक अपनी गोद में ऊपर को हथेली किए हुए दोनों हाथ रखे। **'मूलाधार-चक्र'** का ध्यान कर **'हुं'-बीज** से **'कुण्डलिनी'** को जगाए। इसके बाद **'पृथ्वी-तत्त्व'** के साथ उसे **'हंसः'**-मन्त्र से **'स्वाधिष्ठान'-चक्र** में लाए। **'स्वाधिष्ठान-चक्र'** में **'कुण्डलिनी'** को लाने पर एक तत्त्व दूसरे तत्त्व के द्वारा एक दूसरे में लय होते हैं। अतएव यहाँ साधक **'पृथ्वी-तत्त्व'** को गन्ध और घ्राण-इन्द्रिय-सहित **'जल-तत्त्व'** में, **जल-तत्त्व** को स्वाद-इन्द्रिय-सहित **'अग्नि-तत्त्व'** में, **अग्नि-तत्त्व** को दृष्टि, स्वरूप और नेत्र-इन्द्रिय के सहित **'वायु-तत्त्व'** में, स्पर्श तथा स्पर्शेन्द्रिय-सहित **वायु-तत्त्व** को **'आकाश-तत्त्व'** में तथा **आकाश-तत्त्व** और **शब्द-गुण** को **'अहङ्कार'** में, **अहङ्कार** को **'महत्-तत्त्व'** में, **'महत्-तत्त्व'** को **'प्रकृति'** में तथा **प्रकृति** को **'ब्रह्म'** में लय करे।

इस प्रकार तत्त्वों का लय करने के बाद साधक अपने मन में यह कल्पना करे कि उदर के भीतर बाँएँ पार्श्व में अँगूठे के बराबर ऊँचा एक काला पुरुष स्थित है। वह क्रुद्ध है। उसकी आँखें लाल हैं। उसके डाढ़ी भी है। वह हाथों में ढाल-तलवार लिए हुए है और अपना मुँह नीचे की ओर किए हुए है। यह साक्षात् **'पाप-मूर्त्ति'** है। **'पाप-पुरुष'** का चिन्तन करके साधक अपने बाँएँ नथुने में धूम्र-वर्ण के **'वायु-बीज' (यं)** की कल्पना करे। १६ बार **'वायु-बीज'** का जप कर वायु-खींचे और इससे **'पाप-पुरुष'** के शरीर को भावना द्वारा सुखाए। नाभि में रक्त-वर्ण **'अग्नि-बीज' (रं)** का ध्यान करते हुए, **'अग्नि-बीज'** का ६४ बार जप करे और उससे उत्पन्न अग्नि से **'पाप-पुरुष'** को भस्मसात् करे। मस्तक में **'वरुण-बीज' (वं)** का ध्यान करते हुए **रेचक (प्राणायाम)** करे। ३२ बार जप-पूर्वक रेचक करे तथा यह भावना करे कि **'वरुण-बीज'** से निःसृत जल से **पाप-पुरुष** की राख भीग गई है। इसके बाद साधक यह कल्पना करे कि **'वरुण-बीज'** से टपकी हुई जल-राशि से उसका सारा शरीर आप्लावित हो गया है तथा उसका शरीर **देव-मय** हो गया है। फिर वह **'मूलाधार-चक्र'** में पीत-वर्ण **'लं' (पृथ्वी-बीज)** का ध्यान करे और ३२ बार उसका 'जप' करते हुए अपनी **देवता-मय देह** को दृढ़ करे। फिर **'हंसः'** मन्त्र से जीवात्मा को हृदय में लाकर **'कुण्डलिनी'** और सभी २४ तत्त्वों को पुनः यथा-स्थान स्थापित करे।

'पुरश्चरण-चन्द्रिका' में **भूत-शुद्धि की अन्य प्रणाली** लिखी है। यथा – कन्द से उद्भूत, ज्ञान-रूप नाल से शोभित, अणिमादि ऐश्वर्य-रूप अष्ट-दलों से युक्त, वैराग्य-रूप कर्णिका-विशिष्ट अपने हृदय-पद्म को **प्रणव (ॐ)** से विकसित कर, उसी कर्णिका के ऊपर जीवात्मा का और **'मूलाधार'** में **'कुण्डलिनी' का ध्यान** कर **'सोऽहं'**-मन्त्र का जप करते हुए **'सुषुम्णा'-मार्ग** से परमात्मा के साथ जीवात्मा का योग करे।

इसके बाद **'हंसः आं ह्रीं क्रों'** मन्त्र का जप करते हुए हृदय पर हाथ रख कर प्राणों की प्रतिष्ठा कर अपने को देवता-स्वरूप समझे। फिर **'मातृका-न्यास'** करे। यथा–

(१०) अन्तर्मातृका-न्यास

अन्तर्मातृका-न्यास—'मूलाधार' आदि **'षट्-चक्रों'** में तत्-तत् चक्र-स्थित वर्णों का चिन्तन ही **अन्तर्मातृका-न्यास** है।

विनियोग–ॐ अस्य मातृका-मन्त्रस्य श्रीब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीमातृका सरस्वती देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकं, मातृका-न्यासे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–ॐ श्रीब्रह्मणे-ऋषये नमः शिरसि। ॐ गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। ॐ श्रीमातृका-

सरस्वती-देवतायै नमः हृदि। ह्लेभ्यो बीजेभ्यो नमः गुह्ये। स्वरेभ्यः शक्तिभ्यः नमः पादयोः। अव्यक्त-कीलकाय नमः नाभौ। मातृका-न्यास-विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास और षडङ्ग-न्यास—

अं कं खं गं घं ङं आं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
इं चं छं जं झं ञं ईं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
उं टं ठं डं ढं णं ऊं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
एं तं थं दं धं नं ऐं	अनामिकाभ्यां हुम्	कवचाय हुम्
ओं पं फं बं भं मं औं	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः	करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

ध्यान—

ध्याये तां शुक्ल-रूपां सकल-लिपि-मयीं लोचनाम्भोज-युग्माम्,
शुक्लालङ्कार-भूषां शशि-मुकुट-जटा-टोप-युक्तां प्रसन्नाम्।
पुस्त-स्त्रक्-पूर्ण-कुम्भान् वरमपि दधतीं शुक्ल पट्टाम्बराढ्याम्,
वाग्-देवीं पञ्च-वक्त्रां कुच-भर-नमितां चिन्तयामि चेतसा॥*

अर्थात् भगवती वाग्-देवी शुक्ल यामि चेतसा (गौर) वर्णा हैं। उनका शरीर समस्त वर्णाक्षरों से युक्त है। उज्ज्वल आभूषणों से देदीप्यमती हैं। केश-पाश पर शशि-किरीट है। प्रसन्न-मुद्रा में हैं। चारों हाथों में पुस्तक, स्त्रक्-पूर्ण कुम्भ (सुधा-कलश) और वर-मुद्रा धारण किए हुए हैं। सरोज-वदना भगवती कुच-भार से झुकी हुई हैं।

न्यास—बिन्दु-युक्त 'अ'-कारादि १६ स्वरों का 'कण्ठ-मूल'-स्थित '**विशुद्धि-चक्र**' में, बिन्दु-युक्त '**क**'- से '**ठ**'-कारादि १२ वर्णों का '**हृदय**' ('**अनाहत-चक्र**') में, बिन्दु-युक्त '**ड**'- से '**फ**'-कारादि १० वर्णों का '**नाभि**' ('**मणिपुर-चक्र**') में, बिन्दु-युक्त '**ब**'- से '**ल**'-कारादि ६ वर्णों का **लिङ्ग-मूल** ('**स्वाधिष्ठान-चक्र**') में, बिन्दु-युक्त '**व**'-कारादि चार वर्णों का '**मूलाधार**' में तथा '**ह**'-कार और '**क्ष**'-कार का भ्रू-मध्य-स्थित '**आज्ञा-चक्र**' में न्यास करे। यथा–**ॐ अं नमः, ॐ आं नमः, ॐ इं नमः, ॐ ईं नमः, ॐ उं नमः, ॐ ऊं नमः, ॐ ऋं नमः, ॐ ॠं नमः, ॐ लृं नमः, ॐ लॄं, ॐ एं नमः, ॐ ऐं नमः, ॐ औं नमः, ॐ औं नमः ॐ अं नमः, ॐ अः नमः**–कण्ठ-मूले (विशुद्धि-चक्रे)।

* उक्त ध्यान में '**तन्त्रसार**' के अनुसार '**पाठ-भेद**' इस प्रकार हैं—

(१) ध्यायेत्तां शुक्ल-रूपां (शारत्-पूर्णेन्दु-शुभ्रां), (२) लोचनाम्भोज-युग्मां (लोल-रक्त-त्रिनेत्राम्), (३) भूषां (भासां), (४) जटा-टोप-युक्तां (जटा-भार-हारां), (५) प्रसन्नाम् (प्रदीप्ताम्), (६) पुस्त (विद्या), (७) पट्टाम्बराढ्यां (पट्टाभिराढ्यां), (८) पञ्च-वक्त्रां (पद्म-पत्रां)।

(ख) **वृहद् तन्त्रसार** (मूल) और '**कौल-कल्पतरु**' **पण्डित देवीदत्त शुक्ल** विरचित '**वाम-मार्ग**' में एक और '**ध्यान**' दिया गया है—

सहस्त्रारे हिम-निभे, सर्व-वर्ण-विभूषिते। अकथादि-त्रिरेखात्म, 'हलक्ष'-त्रय-भूषिते॥
तन्मध्ये पर-बिन्दुश्च, सृष्टि-स्थित-लयात्मकम्। एवं समाहित-मना, ध्यायेत् न्यासोऽयमन्तरः॥

(ग) '**तन्त्र-दीपनी**' में दिए गए उक्त ध्यान में एक और त्रुटि है। '**ध्याये**' और '**चिन्तयामि**' दो क्रिया-पदों का एक साथ प्रयोग किया गया है। इनमें से एक 'पद' पद-पूर्ति के लिए जोड़ा गया प्रतीत होता है।

ॐ कं नमः, ॐ खं नमः, ॐ गं नमः, ॐ घं नमः, ॐ ङं नमः, ॐ चं नमः, ॐ छं नमः, ॐ जं नमः, ॐ झं नमः; ॐ ञं नमः, ॐ टं नमः, ॐ ठं नमः–हृदये (अनाहत-चक्रे)।

ॐ डं नमः, ॐ ढं नमः, ॐ णं नमः, ॐ तं नमः, ॐ थं नमः, ॐ दं नमः, ॐ धं नमः, ॐ नं नमः, ॐ पं नमः, ॐ फं नमः–नाभौ (मणिपुरे)।

ॐ बं नमः, ॐ भं नमः, ॐ मं नमः, ॐ यं नमः, ॐ रं नमः, ॐ लं नमः – लिङ्ग-मूले (स्वाधिष्ठान-चक्रे)।

ॐ वं नमः, ॐ शं नमः, ॐ षं नमः, ॐ सं नमः–मूलाधारे।

ॐ हं नमः, ॐ क्षं नमः–भ्रू-मध्ये (आज्ञा-चक्रे)।

(११) बाह्य मातृका-न्यास

'बाह्य मातृका-न्यास'–विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, कर-न्यास और षडङ्ग-न्यास पूर्व-वत् हैं। **'ध्यान'** इस प्रकार है—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्त-मुख-दोःपन्मध्य-वक्षः-स्थलाम्।
भास्वन्मौलि-निबद्ध-चन्द्र-शकलामापीन-तुङ्ग-स्तनीम्॥
मुद्रामक्ष-गुणं सुधाढ्य-कलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः।
विभ्राणां विशद-प्रभां त्रि-नयनां वाग्-देवतामाश्रये॥

वाग्-देवी का पूरा शरीर–मुख, बाहु, मध्य वक्षः-स्थल आदि पचास वर्णाक्षरों से सङ्घटित है। उनका केश-पाश चन्द्र-कला से प्रकाशमान है। उनके उच्च पयोधर हैं। कर-कमलों में मुद्रा, अक्ष-माला, सुधा-पूर्ण कलश और पुस्तक हैं। त्रिनेत्रा देवी की उज्ज्वल प्रभा चारों ओर व्याप्त है। ऐसी वाग्-देवता का मैं आश्रय लेता हूँ।

'ध्यान' के बाद **'न्यास'** करे। **'मातृका-न्यास'** के विषय में तन्त्र में यह क्रम बताया गया है–

ललाट में अनामिका और मध्यमा से। मुख में तर्जनी-मध्यमा और अनामिका से। नेत्रों में अंगुष्ठ और अनामा से। कानों में अँगूठे के पृष्ठ भाग से।

नासा-पुटों में कनिष्ठा और अंगुष्ठ से। गण्ड-स्थलों में तर्जनी-मध्यमा और अनामा से। दोनों ओठों में मध्यमा से। दोनों दन्त-पंक्तियों में अनामा से। मस्तक में मध्यमा से। मुख (जिह्वा) में अनामा और मध्यमा से। हाथ-पैर-पार्श्व-पीठ में कनिष्ठा, अनामा और मध्यमा से, नाभि में कनिष्ठा-अनामा, मध्यमा और अंगुष्ठ से। उदर में सभी अँगुलियों से। वक्ष-अंस द्वय (कन्धों), ककुत्-स्थल, हृदय से हाथ तक, हृदय से पैर तक, हृदय से उदर तक और हृदय से मुख तक के स्थानों में हथेली (कर-तल) से 'न्यास' करे। ये ही **'मातृका-न्यास'** की मुद्राएँ हैं। इन्हें जाने बिना जो व्यक्ति **'न्यास'** करता है, उसका न्यास व्यर्थ होता है।*

न्यास—अं नमः—ललाटे। आं नमः—मुख-वृत्ते। इं नमः—दक्ष-नेत्रे। ईं नमः—वाम-नेत्रे। उं नमः—दक्ष-कर्णे। ऊं नमः—वाम-कर्णे। ऋं नमः—दक्ष-नासा-पुटे। ॠं नमः—वाम-नासा-पुटे। ऌं नमः—दक्ष-गण्डे। ॡं नमः—वाम-गण्डे। एं नमः—ओष्ठे। ऐं नमः—अधरे। ओं नमः—ऊर्ध्व-दन्त-पंक्तौ। औं नमः—अधो-दन्त-पंक्तौ। अं नमः—ब्रह्म-रन्ध्रे। अः नमः—मुखे। कं नमः—दक्ष-बाहु-मूले। खं नमः—दक्ष-कूर्परे (कुहनी)। गं नमः—दक्ष-

* **'मातृका-न्यास'** की मुद्राओं का ज्ञान और अभ्यास साधक-मात्र के लिए आवश्यक और महत्व-पूर्ण है। **'केशव-कीर्त्यादि-न्यास', 'श्रीकण्ठादि-न्यास', 'देवी-कलादि-न्यास', 'गणेश-कलादि-न्यास'**—'मातृका-न्यास' की उक्त **'न्यास-मुद्राओं'** से ही किए जाते हैं।

मणि-बन्धे। घं नमः—अंगुलि-मूले। ङं नमः—अंगुलि-अग्रे। चं नमः—वाम-बाहु-मूले। छं नमः—वाम-कूपरि। जं नमः—वाम-मणिबन्धे (कलाई)। झं नमः—वाम-अंगुलि-मूले। ञं नमः—वाम-अंगुलि-अग्रे।

टं नमः—दक्ष-पाद-मूले। ठं नमः—दक्ष-जानुनि। डं नमः—दक्ष-गुल्फे। ढं नमः—दक्ष-पाद-अंगुलि-मूले। णं नमः—दक्ष-पाद-अंगुलि-अग्रे। तं नमः—वाम-पाद-मूले। थं नमः—वाम-जानुनि। दं नमः—वाम गुल्फे। धं नमः—वाम-पाद-अंगुलि-मूले। नं नमः—वाम-पाद-अङ्गलि-अग्रे। पं नमः—दक्षिण-पार्श्वे। फं नमः—वाम-पार्श्वे। बं नमः—पृष्ठे। भं नमः—नाभौ। मं नमः—उदरे। 'यं'-त्वगात्मने नमः हृदि। रं-असृगात्मने नमः—दक्षांसे। लं-मांसात्मने नमः—ककुदि। 'वं'-मेदात्मने नमः—वामांसे। 'शं'—अस्थ्यात्मने नमः—हृदयात् दक्ष-करे। 'षं'-मज्जात्मने नमः—हृदयात् वाम-करे। 'सं'-शुक्रात्मने नमः—हृदयात् दक्ष-पादे। 'हं'-जीवात्मने नमः—हृदयात् वाम-पादे। ळं-परमात्मने नमः—हृदयात् उदरे। 'क्षं'-ज्ञानात्मने नमः—हृदयात् मुखे।

(१२) संहार-न्यास

ध्यान—

अक्ष-स्त्रजं हरिण-पोतमुदग्र-टङ्कं, विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रि-नेत्राम्।
अर्द्धेन्दु-मौलिमरुणामरविन्द-वासां, वर्णेश्वरीं प्रणमत स्तन-भार-नम्राम्।।

जो अपने चारों हाथों में अक्ष-माला, हरिण-शिशु, मृदङ्ग और पुस्तक लिए हैं। तीन नेत्र हैं। ललाट पर अर्ध-चन्द्र है। लाल कमल पर आसीन हैं। पयोधर-भार से झुकी हुई वर्णेश्वरी देवी को प्रणाम करता हूँ।

ध्यान करके—**क्षं नमः हृदयादि मुखे**—इस क्रम से '**न्यास**' करे। '**मातृका**'-**न्यास** बिन्दु-सहित होता है और बिन्दु-रहित भी। '**यामल**' में लिखा है – '**भूत-शुद्धि**' और **मातृका-न्यास** किए बिना पूजा भक्ति-हीन पूजा के समान निष्फल होती है।

'**गौतमीय-तन्त्र**' के अनुसार सामान्य न्यास के सम्बन्ध में अंगुलि-नियम यह है—मानसिक रूप से न्यास करे, पुष्प के द्वारा अथवा अंगुष्ठ और अनामा से 'न्यास' करे। साधारण न्यास में ही इस नियम का पालन करे, विशेष न्यास में नहीं। '**श्यामादि विद्या**' के विषय में विशेष '**मातृका-न्यास**' उनके प्रकरण में दिया जाएगा।*

(१३) प्राणायाम

'**ज्ञानार्णव**' में कहा गया है कि '**प्राणायाम**' के नियम से '**भूत-शुद्धि**' करे। 'कनिष्ठा-अनामा और अंगुष्ठ' द्वारा वाम और दक्षिण नासा-पुट को धारण करने का नाम '**प्राणायाम**' है।

'**प्राणायाम**' दो प्रकार है – (१) सगर्भ, (२) निगर्भ। 'मन्त्र-जप'-पूर्वक किया गया '**प्राणायाम**' **सगर्भ** और 'मात्रा'-द्वारा किया जानेवाला **निगर्भ** कहलाता है। बाँईं जानु पर बाँयाँ हाथ फेरने में जो समय लगता है, उस अवधि का नाम '**मात्रा**' है।

प्राणायाम की विधि—देवता के मूल-मन्त्र के '**बीज**' अथवा 'प्रणव' (ॐ) का १६ बार जप करता हुआ वाम नासा-पुट से वायु भरे (यह '**पूरक**' है)। अंगुष्ठ और कनिष्ठा-अनामा से दोनों नासा-पुटों को बन्द करके चौंसठ

---

* '**तन्त्र-सार**' में '**विशुद्धेश्वर-तन्त्र**' के उद्धरण से कहा गया है कि इन मातृकाओं के आदि में **ॐ, ऐं** आदि लगाकर '**न्यास**' करने के अलग-अलग फल हैं। वाक्-सिद्धि के लिए इनके आदि में '**ऐं**', श्री-वृद्धि के लिए '**श्रीं**', वशीकरण के लिए '**क्लीं**' लगाकर न्यास करे। (यथा–'**ऐं अं नमः ललाटे, ऐं आं नमः मुखे आदि।**) 'प्रणव' (**ॐ**) लगाकर '**न्यास**' करना मुक्ति-दायक है।

बार 'जप' करे (यह '**कुम्भक**' है)। फिर बत्तीस बार जप करता हुआ दाहिने नासा-पुट से वायु को निकाल दे (यह '**रेचक**' है)। फिर सोलह बार जप करते हुए दाहिने नासा-पुट से '**पूरक**', चौंसठ बार जप से '**कुम्भक**' तथा बत्तीस बार जप से '**रेचक**' करे। पुनः सोलह बार जप द्वारा वाम नासा-पुट से '**पूरक**', चौंसठ बार जप से '**कुम्भक**' और बत्तीस बार जप द्वारा दक्ष नासा-पुट से '**रेचक**' करे।

(१४) पीठ-न्यास

हृदय में '**ॐ आधार-शक्तये नमः।**' इसी प्रकार – **प्रकृतये नमः, कूर्माय नमः, अनन्ताय नमः, पृथिव्यै नमः, क्षीर-सागराय नमः, श्वेत-द्वीपाय नमः, मणि-मण्डपाय नमः, कल्प-वृक्षाय नमः, मणि-वेदिकायै नमः, रत्न-सिंहासनाय नमः।**

दाहिने कंधे पर – **धर्माय नमः**। बाँएँ कंधे पर – **ज्ञानाय नमः**। बाँईं जाँघ पर – **वैराग्याय नमः**। दाहिनी जाँघ पर – **ऐश्वर्याय नमः**। मुख में – **अधर्माय नमः**। वाम-पार्श्व में – **अज्ञानाय नमः**। नाभि में — **अवैराग्याय नमः** तथा दक्ष-पार्श्व में — **अनैश्वर्याय नमः**।

पुनः हृदय में – **अं अनन्ताय नमः, पं पद्माय नमः, अं सूर्य-मण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः, उं सोम-मण्डलाय षोडश-कलात्मने नमः, मं वह्नि-मण्डलाय दश-कलात्मने नमः, सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।**

हृदय पद्म के पूर्वादि केशरों में '**पीठ-शक्ति**' तथा मध्य में '**पीठ का न्यास**' करे।

इसके बाद **ऋष्यादि-न्यास, कर-न्यास, षडङ्ग-न्यास** फिर अपने-अपने कल्प में बताए गए अन्य '**न्यास**' करके अपने सामने बाँईं ओर **अर्घ्य** स्थापित करे।

(१५) विशेष अर्घ्य-स्थापन

त्रिकोण, वृत्त और **भू-पुर** बनाकर '**ऐं ह्रीं व्यापक-मण्डलाय नमः**' से उसकी पूजा करे। उस पर त्रि-पादिका स्थापित करे। '**मं वह्नि-मण्डलाय दश-कलात्मने नमः**' से त्रि-पादिका की पूजा करे। '**फट्**'-मन्त्र से प्रक्षालित **अर्घ्य-पात्र** उस पर स्थापित करके '**अं अर्क-मण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः**' से '**अर्घ्य-पात्र**' का पूजन करे। मूल-मन्त्र पढ़ते हुए उसे जल से पूरित करे। '**उं सोम-मण्डलाय षोडश-कलात्मने नमः**' से जल की पूजा कर उसमें '**दूर्वा-अक्षत-बिल्व-पत्र-चन्दन**' आदि डालकर '**अर्घ्य**'**-पात्र के** '**आग्नेय-ईशान-वायव्य-नैर्ऋत्य**' **कोणों** तथा **चार दिशाओं** में '**षडङ्ग-न्यास**' कर '**हुम**' से अवगुण्ठन, '**फट्**' से संरक्षण, 'सुधा-बीज' (**वं**) पढ़कर '**धेनु-मुद्रा**' से अमृतीकरण कर '**अर्घ्य-पात्र**' को '**मत्स्य-मुद्रा**' से आच्छादित करे और **दश बार मूल-मन्त्र का जप** करे। '**ॐ गङ्गे च यमुने०**' – इस मन्त्र के द्वारा '**सूर्य-मण्डल**' से जल में **तीर्थों का आह्वान** कर जल के तेजो-मय रूप का ध्यान करे और '**अर्घ्य-पात्र**' से कुछ जल लेकर '**प्रोक्षणी-पात्र**' में डाले तथा उससे स्वयं अपना तथा समस्त पूजा-सामग्री का संप्रोक्षण करे।

(१६) ऋषि, छन्द, देवता-निरूपण

'**ऋष्यादि-न्यास**' किए बिना पूजन करना दोष-कारक है, जैसा कि तन्त्र में कहा गया है–'ऋषि, छन्द और देवता का न्यास किए बिना यदि पूजा की जाती है, तो देवता रुष्ट हो जाता है और पूजा का फल नहीं मिलता।'

ऋषि-निरूपण–भगवान् शिव से प्राप्त करके जिस शुद्धात्मा ने तपस्या कर मन्त्र का साक्षात्कार किया, उसे '**ऋषि**' कहते हैं। गुरु-स्थानीय होने के कारण ऋषि का न्यास शिर में किया जाता है।

छन्द–सब प्रकार से '**मन्त्र-तत्त्व**' को आच्छादित रखने की विधि को 'छन्द' कहते हैं। 'छन्द' सभी अक्षरों और पदों से घटित होता है, अतएव 'छन्द' का न्यास मुख में किया जाता है।

देवता–सभी जीवों को प्रेरणा देनेवाला उनके हृदय में स्थित '**देवता**' है। अतः 'देवता' का न्यास '**हृदय-कमल**' में किया जाता है।

'**ऋषि और छन्द**' का ज्ञान न होने पर मन्त्र का फल नहीं मिलता। मन्त्र का **विनियोग** न जानते हुए उसका प्रयोग करने से मन्त्र दुर्बल हो जाता है।

'शिर' में **ऋषि**, 'मुख' में **छन्द**, 'हृदय' में **देवता**, 'गुह्य'-देश में **बीज**, 'पाद-द्वय' में **शक्ति** और 'सर्वाङ्ग' में **कीलक** का न्यास करे।

आगमोक्त न्यास-फल—'कुलार्णव' में लिखा है कि जो व्यक्ति आगमोक्त विधान से नित्य-प्रति न्यास करता है, उसे देवता-भाव और मन्त्र-सिद्धि की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति न्यास-रूपी कवच से आच्छादित होकर मन्त्र का '**जप**' करता है, उसके दर्शन-मात्र से विघ्न दूर हो जाते हैं। जो व्यक्ति अज्ञान-वश न्यास नहीं करता, उसे नाना प्रकार के विघ्नों का सामना करना पड़ता है।

अङ्ग-न्यास—अङ्ग-न्यास में अङ्गुलि नियम इस प्रकार है – तीन-दो-एक-दश-तीन और दो अंगुलियों से '**न्यास**' करे—यह सामान्य नियम है।

'**यामल**' में लिखा है– मध्यमा-अनामा और तर्जनी से हृदय में, मध्यमा और तर्जनी से मस्तक में, अङ्गुष्ठ द्वारा शिखा में, सभी अंगुलियों द्वारा कवच में, तर्जनी-मध्यमा और अनामा से नेत्र में तथा तर्जनी और मध्यमा द्वारा कर-तल में न्यास करे। इसे '**अङ्ग-न्यास**' कहते हैं।

यदि देवता '**त्रि-नेत्र**' है, तो तर्जनी-मध्यमा और अनामा द्वारा और यदि द्वि-नेत्र है, तो तर्जनी तथा मध्यमा द्वारा न्यास करे — **हृदयाय नमः, शिरसे स्वाहा, शिखायै वषट्, कवचाय हुम्, नेत्र-त्रयाय वौषट्** एवं **अस्त्राय फट्**—इस क्रम से 'न्यास' करे। **शारदा-तिलक** में लिखा है कि जहाँ **पञ्चाङ्ग-न्यास** का विधान है, वहाँ नेत्र छोड़कर शेष पाँच स्थानों में '**न्यास**' करे।

विष्णु की साधना में अङ्गुष्ठ-हीन कर-तल से हृदय और मस्तक में '**न्यास**' करे। अङ्गुष्ठ-मध्य-गत मुष्टि द्वारा शिखा में, दोनों हाथों की सभी अँगुलियों से कवच में और तर्जनी एवं मध्यमा द्वारा नेत्र में न्यास कर **नाराच-मुद्रा** से दोनों बाहु-मुष्टि ऊपर उठाकर अङ्गुष्ठ और तर्जनी से मस्तक के चारों ओर कर-तल में ध्वनि करे।

'**शारदा-तिलक**' में लिखा है कि '**पीठ-न्यास**' के क्रम से पुष्पादि द्वारा शरीर में '**धर्म**' से लेकर उस देवता की '**पीठ-शक्ति**' तक की पूजा करे। फिर उसके ऊपर देवता की पूजा करे। इससे शरीर में '**पीठ-पूजा**' आवश्यक है। जहाँ **अङ्ग-न्यास** के मन्त्र निर्दिष्ट नहीं हैं, वहाँ देवता के नाम के आदि अक्षर द्वारा '**न्यास**' करे।

'**ब्रह्म-यामल**' में कहा गया है कि सभी देवताओं के नाम का आदि अक्षर उसका '**बीज**' है। इस प्रकार '**न्यास**' आदि करने के पश्चात् देवता के कल्प के अनुसार मुद्राएँ दिखाकर और उसके बाद '**मानस-पूजा**' कर '**शङ्ख-स्थापन**' करे। '**सनत्कुमार संहिता**' में कहा गया है कि '**मानस-पूजा**' किए बिना '**बाह्य पूजा**' नहीं करनी चाहिए।

(१७) पीठ-पूजा

'**पीठ**' के उत्तर में वायव्य से ईशान कोण तक '**गुरु-पंक्ति**' का पूजन करे। यथा–**ॐ गुरुभ्यो नमः। ॐ परम-गुरुभ्यो नमः। ॐ परापर-गुरुभ्यो नमः। ॐ परमेष्ठि-गुरुभ्यो नमः।**

भगवती त्रिपुरा आदि के पूजन में **विशेष 'गुरु-पूजा'** आगे दी जाएगी।

'पीठ' के दक्षिण में–**'ॐ गणेशाय नम'** से गणेश जी का पूजन करे।

'पीठ' के मध्य में – **'ॐ आधार-शक्तये नमः, ॐ प्रकृतये नमः, ॐ कूर्माय नमः, ॐ शेषाय नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ क्षीर-समुद्राय नमः, ॐ श्वेत-द्वीपाय नमः, ॐ मणि-मण्डपाय नमः, ॐ कल्प-वृक्षाय नमः, ॐ मणि-वेदिकायै नमः, ॐ रत्न-सिंहासनाय नमः'** से पूजा करे।

अग्नि-कोण में—**'ॐ धर्माय नमः'**, नैऋत्य में—**'ॐ ज्ञानाय नमः'**, वायव्य में—**'ॐ वैराग्याय नमः'** और ईशान में— **'ॐ ऐश्वर्याय नमः'**।

पूर्व आदि चारों दिशाओं में – **'ॐ अधर्माय नमः'**, दक्षिण में **'ॐ अज्ञानाय नमः'**, पश्चिम में **'ॐ अवैराग्याय नमः'** और उत्तर में **'ॐ अनैश्वर्याय नमः'**।

पुनः मध्य में — **ॐ अनन्ताय नमः, ॐ पद्माय नमः, ॐ अं सूर्य-मण्डलाय द्वादश-कलात्मने नमः, ॐ उं सोम-मण्डलाय षोडश-कलात्मने नमः, ॐ रं वह्नि-मण्डलाय दश-कलात्मने नमः, ॐ सं सत्वाय नमः, ॐ रं रजसे नमः, ॐ तं तमसे नमः, ॐ आं आत्मने नमः, ॐ अं अन्तरात्मनें नमः, ॐ पं परात्मने नमः, ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।**

फिर पूर्वादि केशरों में कल्पोक्त **पीठ-शक्तियों की पूजा** करके मध्य में **पीठ-यन्त्र का पूजन** करे।

पूर्वादि दिशाओं का नियम **'यामल'** में यह बताया गया है–पूज्य और पूजक का मध्य स्थान **पूर्व**, उसका **दक्षिण—दक्षिण**, उसका **उत्तर—उत्तर** और उसके पीछे का भाग—**पश्चिम** समझे।

उत्तर-दक्षिण आदि दिशाओं का निर्धारण देवता के **वाम-दक्षिण** से होता है, साधक के **उत्तर-दक्षिण** से नहीं।

(१८) इष्ट-देवता का आवाहनादि पूजन

'आगम-कल्पद्रुम' में लिखा है कि साधक **'मूल-मन्त्र'** का उच्चारण कर **'सुषुम्णा'-पथ** से चैतन्य-रूप तेज को स्व-स्थान (हृदय-मन्दिर) से लाकर नासिका-रन्ध्र द्वारा निकालते हुए कर-स्थित मातृका-कमल में पुष्प-राशि पर संयोजित करे। फिर यन्त्र के मध्य में तेज की स्थापना करके **'इष्ट-देवता' का आह्वान** करे।

'मत्स्य-सूक्त' में लिखा है कि जहाँ पर **यन्त्र** का उल्लेख न हो (अर्थात् यन्त्र नहीं बताया गया हो), वहाँ पर **'षट्-कोण'-विशिष्ट कर्णिका** अङ्कित कर उसके बाहर **'अष्ट-दल-कमल'** और **चतुर्द्वार-शोभित यन्त्र** बना ले। पुनः ध्यान कर आवाहन आदि (**आवाहन, सन्निरोधन, सान्निध्यीकरण** आदि) कर **'प्राण-प्रतिष्ठा'** करे।

'वृहच्छ्री-क्रम-तन्त्र' में **'प्राण-प्रतिष्ठा'** का मन्त्रोद्धार यह बताया गया है–

'ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः अमुष्य प्राणाः इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः अमुष्य जीवः इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः अमुष्य सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः अमुष्य वाङ्-मनः-त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।'

प्रयोग के समय **'अमुष्य'** के स्थान पर साध्य के षष्ठ्यन्त नाम की योजना करनी चाहिए।

'प्राण-प्रतिष्ठा' का यह सर्व-साधारण मन्त्र है। **विशेष 'प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र'** तत्-तत् पटल में देखने चाहिए।

'वृहन्मत्स्य-सूक्त' में लिखा है – **'यन्त्र'** का स्पर्श करते हुए **'प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र'** का तीन बार जप करे। तत्पश्चात् षोडशोपचार अथवा दशोपचार से देवता का पूजन करे।'

'मन्त्र-लीलावती' के अनुसार **षोडश-उपचार** इस प्रकार हैं — (१) आसन, (२) स्वागत, (३) पाद्य, (४) अर्घ्य, (५) आचमनीय, (६) मधुपर्क, (७) पुनराचमनीय, (८) स्नानीय, (९) वस्त्र, (१०) अलङ्कार, (११) गन्ध, (१२) पुष्प, (१३) धूप, (१४) दीप, (१५) नैवेद्य, (१६) नमस्कार। इनका अभाव होने पर गन्ध से नैवेद्य तक पञ्चोपचारों से पूजन करे। **'विष्णु'**-विषय में - (१) अर्घ्य, (२) पाद्य, (३) आचमनीय, (४) मधुपर्क, (५) स्नानीय, (६) गन्ध, (७) पुष्प, (८) धूप, (९) दीप और (१०) नैवेद्य-से **'दशोपचार'** कहे गए हैं।

'पुष्प-दान'-पर्यन्त उपचार देने के बाद **'षडङ्ग-पूजन'** करे। **'पुष्प-दान'** में विशेष नियम यह है कि **'पुष्प'** और **'पत्र'** अधो-मुख नहीं दिए जाने चाहिए। अधो-मुख दिए जाने पर दुःख होता है। **'पुष्पाञ्जलि'** में यह नियम नहीं है। फिर **'मूर्धा-हृदय-गुह्य-पैर'** और **'सर्वाङ्ग'** में **'पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान'** के उपरान्त कल्पोक्त 'मूल-मन्त्र' से **'आवरण-पूजन'** करना चाहिए। फिर **'धूप'** और **'दीप'** प्रदान करे।

इसके लिए पहले **'ॐ जय-ध्वनि मन्त्र-मातः स्वाहा'**–इस मन्त्र से घण्टे का पूजन करे। बाँएँ हाथ से घण्टे को बजाते हुए **धूप-पात्र** को निम्न मुख करके **'धूप'** और **दीप-पात्र** को ऊर्ध्व-मुख करके तत्-तत् मन्त्र से **'दीप'** प्रदान करे। मूल-मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलियाँ देकर **'नैवेद्य'** समर्पित करे।

नैवेद्य—नैवेद्य लाकर **'फट्'**-मन्त्र द्वारा जल से उसका अभ्युक्षण करे। **'चक्र-मुद्रा'** से संरक्षण कर नैवेद्य पर 'मूल-मन्त्र' का आठ बार जप कर **'धेनु-मुद्रा'** से अमृतीकरण करे। 'मूल-मन्त्र' का उच्चारण करते हुए नैवेद्य समर्पित करे। **'नैवेद्य-पात्र'** के सम्बन्ध में **'यामल'** में कहा गया है कि 'सोने-चाँदी-ताँबे के पात्र में, पत्थर अथवा मिट्टी के बने शुद्ध पात्र में नैवेद्य समर्पित करे। **कमल-पत्र** नैवेद्य-समर्पण हेतु प्रशस्त है। निवेदनीय सभी द्रव्यों को **'अर्घ्य-पात्र'** के जल से प्रोक्षित करके ही प्रदान करे। अतः सभी द्रव्य **'अर्घ्य-जल'** से उत्सर्ग करते हुए प्रदान किए जाने चाहिए। अन्य पात्रों में रखे गए जल से द्रव्य समर्पित करने पर देवता उसे ग्रहण नहीं करते। इसके बाद **पुनराचमनीय** और **ताम्बूल** प्रदान करे।

'विष्णु'-विषय में **'नैवेद्य'** का जो विशेष विधान है, वह उनके प्रकरण में आगे दिया जाएगा।

तदनन्तर देवता को परिवार-सहित गन्ध आदि समर्पित करके **'नृत्य-गीत'** से सन्तुष्ट कर **'जय-जय'** बोलते हुए **'विशेषार्घ्य'** प्रदान कर **पुष्पाञ्जलि** दे। **'उपचार-दान'** की विधि **'कुलार्णव'** में यह बताई गई है– 'पहले मूल-मन्त्र का उच्चारण करे। फिर द्रव्य का नाम ले और तब **'अमुक-देवतायै'** कहे। पाद्य में **'नमः'**, अर्घ्य में **'स्वाहा'**, गंध में **'नमः'**, पुष्प में **'वौषट्'** तथा अन्य उपचारों में **नमः** इत्यादि की योजना करे। यथा–**'मूलं एतत् पाद्यं अमुक-देवतायै नमः'**।

इसके बाद **'प्राणायाम'** करे। मूल-मन्त्र का १००८ अथवा १०८ बार **'जप'** करके पुनः **'प्राणायाम'** करे। फिर **'जप-समर्पण'** करे–

ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्ता त्वं, गृहाणास्मत्-कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव! त्वत्-प्रसादान्महेश्वर!॥

'देवी'-पक्ष में **'गोप्ता'** के स्थान पर **'गोप्त्री'** एवं **'देव'** के स्थान पर **'देवी'** और **'महेश्वर'** के स्थान पर **'महेश्वरि'** कहे। तदनन्तर **'स्तुति'** कर **'साष्टाङ्ग प्रणाम'** करे। **'पैरों-हाथों-घुटनों'** और **'वक्ष-मस्तक-नेत्र-वाक्य'** तथा **'मन'**–इन अङ्गों से किए जानेवाले प्रणाम को **'अष्टाङ्ग प्रणाम'** कहते हैं। **'घुटनों-भुजाओं-मस्तक-वाक्य'** और **'मन'** से **'पञ्चाङ्ग प्रणाम'** होता है। हाथ में शङ्ख लेकर सर्वत्र देवता की **'प्रदक्षिणा'** करे।

'शक्ति'-देवता को **'त्रिकोणाकार नमस्कार'** करे। देवता की दक्षिण दिशा से वायु-कोण पर्यन्त जाकर फिर

दक्षिण की ओर आ जाए। **'शिव' की प्रदक्षिणा 'अर्द्ध-चन्द्राकार'** करे। **'सोम-सूत्र'** (जल निकलने के स्थान) का उल्लङ्घन न करे।

अन्य देवताओं के बारे में नियम यह है कि दाहिना हाथ फैलाकर, नम्र-शिर हो, दक्षिण पार्श्व दिखाते हुए तीन बार देवता का वेष्टन कर **'प्रदक्षिणा'** करे।

जो व्यक्ति एक हाथ से देवता को **'प्रणाम'** करता है अथवा **'एक बार प्रदक्षिणा'** करता है या असमय में देवता का दर्शन करता है, उसका पूर्व-सञ्चित पुण्य नष्ट हो जाता है।

विसर्जन—इसके बाद यह भावना करे कि समस्त **'आवरण-देवता'**—इष्ट-देवता के शरीर में विलीन हो रहे हैं। फिर **'क्षमस्व'** कहकर **'विसर्जन'** करे। **'संहार-मुद्रा'** से एक फूल उठाकर उसे सूँघे। पुष्प के सुवास के साथ देवता को अपने हृदय में ले आए।

फिर **'ईशान कोण'** में **'मण्डल'** बनाकर उसमें **'निर्माल्य'** अर्पण कर **'विष्णु'**-विषय में — **'ॐ विश्वक्-सेनाय नमः'**, **'शक्ति'**-विषय में — **'ॐ शेषिकायै नमः'**, **'शिव'**-विषय में — **'ॐ चण्डेश्वराय नमः'**, **'गणेश'**-विषय में — **'ॐ उच्छिष्ट-गणेशाय नमः'** तथा **'कालिकादि'**-विषय में — **'ॐ उच्छिष्ट-चाण्डालिन्यै नमः'** कहकर निर्माल्य पुष्पों से पूजन करे।

इसके बाद **'नित्य-हवन'** करे। **'सोम-भुजगावली'** में लिखा है–'बिना **'जप'** किए मन्त्र सिद्ध नहीं होता और बिना **'हवन'** किए उसका फल नहीं मिलता है।'

'नील-तन्त्र' में **'नित्य-हवन'** की विधि बताई गई है – विधि-वत् अग्नि लाकर, **'नमः'** – पूर्वक **'क्रव्यांश'** का परित्याग कर अग्नि को कुण्ड अथवा स्थण्डिल में स्थापित करे। **'स्तुति'** करे। **'व्याहृति-त्रय'** से तीन बार आहुति दे। तदनन्तर **'षडङ्ग हवन'** करे। अग्नि में **'इष्ट-देवता का आह्वान'** कर **'मूल-मन्त्र'** से १६ आहुतियाँ देकर देवता को पुनः **'बिन्दु-मण्डल'** में ले आए। **'अग्नि'** से क्षमा-याचना कर **'विसर्जन'** करे।

इसके बाद **'चरणोदक**-पान'-पूर्वक कुछ **'नैवेद्य'** ग्रहण करे। योग्य व्यक्ति को कुछ **'नैवेद्य'** प्रदान कर सुख से विहार करे।

'मत्स्य-सूक्त' में लिखा है कि मत्स्य-मांस आदि कोई भी वस्तु देवता को निवेदित किए बिना नहीं खाना चाहिए। **'इष्ट-देवता'** को अनिवेदित अन्न विष्ठा-तुल्य और जल आदि द्रव्य मूत्र के समान समझना चाहिए।

'भैरव-तन्त्र' में लिखा है – 'पूजा-स्थान के बाहर होने पर, यथा-विधान देवता को हृदय में समर्पण कर उसके निर्माल्य को ग्रहण करे तथा पवित्र स्थान में बैठकर नैवेद्य का भोजन करे।'

निर्माल्य के पुष्पादि को मस्तक पर धारण कर, निवेदित **'चन्दन'** का सर्वाङ्ग में लेपन करे। **'नैवेद्य'** भक्तों को देकर, स्वयं **नैवेद्य-भोजन** करे। देवता की पूजा से बचे शङ्ख में स्थित जल को शरीर में लगाने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

'रुद्र-यामल' में कहा गया है–'हे महादेवि! भगवती त्रिपुरा के नैवेद्य की इच्छा देवताओं को भी होती है। अतएव साधक को चाहिए कि वह **'ब्रह्मा-विष्णु-महेश'**, **'इन्द्र, सूर्य, गणेश, यम, अग्नि, वरुण, वायु, कुबेर एवं ईशान' को भगवती त्रिपुरा का प्रसाद** प्रदान करे।' यहाँ त्रिपुरा उपलक्षण है। सभी देवियों का प्रसाद देवताओं को दिया जाना चाहिए।

* * *

तीसरा उल्लास

(१) विष्णु-मन्त्र

अब **भगवान् विष्णु** के सर्वार्थ-साधक महा-मन्त्रों का निरूपण करता हूँ, जिनके स्मरण मात्र से योगि-जन संसार-सागर से पार उतर जाते हैं।

मन्त्रोद्धार—तार (प्रणव–ॐ) के बाद दीर्घ आकार-समन्वित 'न, र' (अर्थात् **'नारा'**)। इसके बाद पवन अर्थात् **'य'** और इसके बाद **'णाय'**। इनके योग से अष्टाक्षर मन्त्र **'ॐ नमो नारायणाय'** बनता है, जो सर्वार्थ-साँधक है।

उक्त मन्त्र के आदि में **'प्रणव'** है और यह मन्त्र **'प्रणव'**-रूप है। **'रुद्र-यामल'** में कहा गया है कि ब्रह्माण्ड की सृष्टि-स्थिति और लय की आधार-भूता होने के कारण परमा शक्ति **'उमा'** ही **'प्रणव'**-रूपा हैं।

'प्रणव' में स्वरों की बहुलता है। अतः प्रणव (ॐ) की प्रकृति-प्रधानता स्पष्ट है। **भगवान् विष्णु** के **'प्रणव'**-स्वरूप सभी मन्त्रों की अधिष्ठातृ देवता **भगवती दुर्गा** हैं।

'मातृकोदय' में कहा गया है – **'अ'-कार** से **'क्ष'-कार**-पर्यन्त सभी वर्ण **'शिव'**-रूप हैं। ये वर्ण समष्टि-व्यष्टि-रूप से ३६ तत्त्वों के विग्रह हैं। इन वर्णों में **'अ'-कार** से विसर्ग तक १६ वर्ण स्वर हैं, जो शक्ति-स्वरूप हैं। **'शिव-शक्ति'**-मय ये वर्ण वस्तुतः शक्ति के ही अर्थ का प्रतिपादन करते हैं क्योंकि शक्ति-रूप स्वर-वर्णों को अन्य वर्णों की अपेक्षा नहीं होती। इस कारण वे स्वतन्त्र हैं, जबकि व्यञ्जन-रूप **शिव** को (उच्चारण के लिए) स्वरों की अपेक्षा होती है। इस तरह **शिव** स्वरों के अधीन हैं।

वैष्णव-आचमन–'गौतमीय-तन्त्र' में **वैष्णव-आचमन** की यह विधि लिखी है कि— **'ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः'**–इन तीन नामों से तीन बार जल का पान करे। **'ॐ गोविन्दाय नमः'** एवं **'ॐ विष्णवे नमः'** इस मन्त्र से हाथ धोए। **'ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः'** से ओष्ठ-मार्जन, **'ॐ वामनाय नमः, ॐ श्रीधराय नमः'** से मुख-मार्जन और **'ॐ हृषीकेशाय नमः'** से हाथ धोकर **'ॐ पद्मनाभाय नमः'** से पैर धोए। **'ॐ दामोदराय नमः'** से मस्तक पर जल छिड़के। फिर **'ॐ सङ्कर्षणाय नमः'** से मुख का, **'ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः'** से दोनों नासा-पुटों का, **'ॐ अनिरुद्धाय नमः, ॐ पुरुषोत्तमाय नमः'** से दोनों आँखों का, **'ॐ अधोक्षजाय नमः, ॐ नृसिंहाय नमः'** से दोनों कानों का, **'ॐ अच्युताय नमः'** से नाभि का, **'ॐ जनार्दनाय नमः'** से वक्ष-स्थल का, **'ॐ उपेन्द्राय नमः'** से मस्तक का और **'ॐ हरये नमः, ॐ विष्णवे नमः'** से दोनों भुजाओं का स्पर्श करे।

पूजा-प्रयोग–सर्व-देवोपयोगी पद्धति से प्रातः-कृत्य करके **'मातृका-न्यास, प्राणायाम'** आदि करे। फिर **'पीठ-न्यास'** करे। **विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया, योगा, प्रह्वी, सत्या, ईशाना** एवं **अनुग्रहा** पीठ-शक्तियाँ हैं। **'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्व-भूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्म-संयोग-योग-पीठात्मने नमः'** यह 'पीठ-मन्त्र' है।

प्रयोग—**ॐ विमलायै नमः, ॐ उत्कर्षिण्यै नमः, ॐ ज्ञानायै नमः, ॐ क्रियायै नमः, ॐ योगायै नमः, ॐ प्रह्वै नमः, ॐ सत्यायै नमः, ॐ ईशानायै नमः** – इन ८ शक्तियों की स्थापना पूर्वादि केशरों में प्रदक्षिणा-क्रम से कर **'ॐ अनुग्रहायै नमः'** से मध्य में नवम शक्ति की स्थापना करे। उस पर उपर्युक्त 'पीठ-मन्त्र'– **'ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्व-भूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्म-संयोग योग-पीठात्मने नमः'** से पीठ–स्थापना करे।

ऋष्यादि-न्यास — **ॐ साध्य-नारायणाय ऋषये नमः** – शिरसि। **ॐ गायत्री-छन्दसे नमः** – मुखे। **ॐ विष्णवे देवतायै नमः**–हृदये।

कर-न्यास—**क्रुद्धोल्काय नमः** – अंगुष्ठाभ्यां नमः। **महोल्काय नमः** – तर्जनीभ्याम् स्वाहा। **वीरोल्काय नमः** – मध्यमाभ्यां वषट्। **द्यूल्काय नमः** –अनामिकाभ्यां हुम्। **सहस्रोल्काय नमः**–कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि-न्यास — **क्रुद्धोल्काय नमः**–हृदयाय नमः। **महोल्काय नमः** – शिरसे स्वाहा। **वीरोल्काय नमः**-शिखायै वषट्। **द्यूल्काय नमः** – कवचाय हुम्। **सहस्रोल्काय नमः**–अस्त्राय फट्।

अङ्ग-न्यास —**'ॐ'**–हृदयाय नमः। **'नं'** – शिरसे स्वाहा। **'मं'** – शिखायै वषट्। **'नां'** – कवचाय हुं। **'रां'** –नेत्राभ्यां वौषट्। **'यं'**–अस्त्राय फट्। **'णां'**–नमो दक्ष-पार्श्वे। **'यं'**–नमः वाम-पार्श्वे।

इसके बाद–**'ॐ सुदर्शनायास्त्राय फट्'**–इस मन्त्र से **'दिग्-बन्धन'** कर मुद्राएँ दिखाकर ध्यान करे।

ध्यान–

ॐ उद्यत्-कोटि-दिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजम्,
चक्रं विभ्रतमिन्दिरा-वसुमती-संशोभि-पार्श्व-द्वयम्।
कोटीराङ्गद-हार-कुण्डल-धरं पीताम्बरं कौस्तुभोद्–
दीप्तं विश्व-धरं स्व-वक्षसि लसत्-श्रीवत्स-चिह्नं भजे॥

उदित होनेवाले करोड़ों सूर्यों के समान देदीप्यमान, चारों भुजाओं में शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म-धारी, दोनों पार्श्वों में लक्ष्मी तथा वसुमती से सुशोभित, इन्द्रनील-मणि, अङ्गद, हार-कुण्डल-धारी, पीत-वस्त्र, कौस्तुभ-मणि से उज्ज्वल, वक्षः-स्थल पर **'श्री'-वत्स**-चिह्न से विभूषित, विश्व को धारण करनेवाले भगवान् विष्णु का मैं भजन करता हूँ।*

उक्त प्रकार **'ध्यान'** कर मानसिक उपचारों से पूजन करने के बाद **'शङ्ख-स्थापन'** करे।

वैष्णव-पात्रों के बारे में **'गौतमीय-तन्त्र'** में लिखा है कि ताम्र-निर्मित पात्र विष्णु को बहुत प्रिय है। अन्य सभी प्रकार के पात्रों में **'शङ्ख-पात्र'** प्रधान है। मिट्टी के पात्र, सोना और चाँदी के पात्र भी प्रशस्त हैं।

'विमला' आदि शक्ति-सहित **'पीठ-पूजन'** कर पुनः 'ध्यान' करे। फिर मूल-मन्त्र से कल्पित मूर्ति का आवाहनादि पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान-पर्यन्त कर्म कर **'आवरण-पूजा'** आरम्भ करे।

अग्नि-कोण में — **'ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः।'** नैर्ऋत्य कोण में – **'ॐ महोल्काय शिरसे स्वाहा।'** वायु-कोण में – **'ॐ वीरोल्काय शिखायै वषट्।'** ईशान में – **'ॐ द्यूल्काय कवचाय हुम्।'** दिशाओं में– **'ॐ सहस्रोल्काय अस्त्राय फट्।'**

केशरों में पूर्वादि क्रम से – **'अं नमः। नं नमः। मों नमः। नां नमः। रां नमः। यं नमः। णां नमः। यं नमः'** से पूजन कर दलों में पूर्वादि दिशाओं में अर्थात् पूर्व में–**'ॐ वासुदेवाय नमः।'** दक्षिण में– **'ॐ सङ्कर्षणाय नमः।'** पश्चिम में – **'ॐ प्रद्युम्नाय नमः।'** उत्तर में – **'ॐ अनिरुद्धाय नमः'** से। आग्नेय आदि कोणों में अर्थात् अग्नि-कोण में –**'ॐ शान्त्यै नमः'**, नैर्ऋत्य में –**'ॐ श्रियै नमः'** से। वायु-कोण में –**'ॐ सरस्वत्यै नमः'** से और ईशान कोण में **'ॐ रत्यै नमः'** से पूजन करे।

अष्ट-दल-पत्र में – **'ॐ चक्राय नमः, शङ्खाय नमः, गदायै नमः, पद्माय नमः, कौस्तुभाय नमः, मूषलाय नमः, खड्गाय नमः, वन-मालायै नमः'** से पूर्वादि-क्रम से पूजन करे। उनके बाहर अग्र-भाग में

* 'हिन्दी-तन्त्रसार' (पृष्ठ १३८) में यह 'ध्यान' द्वादशाक्षर-मन्त्र-न्यास के बाद बताया गया है।

'**ॐ गरुडाय नमः**' से, दाहिनी ओर – '**ॐ शङ्ख-निधये नमः**' से, बाँईं ओर '**ॐ पद्म-निधये नमः**' से, पश्चिम में '**ॐ ध्वजाय नमः**' से, आग्नेय कोण में '**ॐ विघ्नाय नमः**' से, नैऋत्य में – '**ॐ आर्यायै नमः**' से, वायु-कोण में –'**ॐ दुर्गायै नमः**' से और ईशान में–'**ॐ सेनान्यै नमः**' से पूजन करे। फिर उनके बाहर '**इन्द्र**'-आदि दिक्-पालों और उनके '**वज्र**' आदि अस्त्रों से पूजा कर '**धूप-दीप-दान**'-पूर्वक '**नैवेद्य**' निवेदित करे। यथा–

पहले '**नैवेद्य**' को लाकर देवता को मूल-मन्त्र से '**पाद्य-अर्घ्य**' और '**आचमनीय**' प्रदान करे। फिर '**फट्**'-मन्त्र से '**नैवेद्य**' का '**प्रोक्षण**' कर '**चक्र-मुद्रा**' से उसका **संरक्षण** करे। तब वायु-बीज '**यं**' से नैवेद्य के दोषों को सुखाकर अग्नि-बीज '**रं**' से उन दोषों को भस्म करे। फिर '**वं**' मन्त्र से नैवेद्य को बाँएँ हाथ से निःसृत सुधा-रस से परिपूर्ण और अमृत-मय समझते हुए उसके ऊपर **मूल-मन्त्र का आठ बार 'जप'** करे। 'मूल-मन्त्र' से देवता को '**पञ्च-पुष्पाञ्जलि**' प्रदान करे। '**धेनु-मुद्रा**' से '**नैवेद्य**' का अमृतीकरण कर गंध-पुष्प से उसका पूजन करे। हाथ जोड़कर देवता से '**नैवेद्य-ग्रहण हेतु प्रार्थना**' करे। देवता के मुख से तेज निःसृत हो रहा है, ऐसी भावना कर '**ॐ नमो नारायणाय स्वाहा**' – इस मन्त्र से नैवेद्य पर जल छोड़कर और '**मूल-मन्त्र**' का उच्चारण कर '**एतन्नैवेद्यं अमुक-देवतायै नमः**' से नैवेद्य हेतु निवेदन करते हुए नैवेद्य को उठाकर – '**ॐ निवेदयामि भगवते यूषाणेदं हविर्हरि!**'–इस मन्त्र से नैवेद्य समर्पित करे।

तदनन्तर–'**अमुक-देवतायै एतज्जलममृतोपस्तरणमसि**' से जल देकर बाँएँ हाथ से **ग्रास-मुद्रा** और दाहिने हाथ से '**प्राण**'-आदि पञ्च-मुद्राएँ दिखाए। यथा–

ॐ प्राणाय स्वाहा–अँगूठे से अनामा और कनिष्ठा को स्पर्श करे।

ॐ अपानाय स्वाहा–अँगूठे से तर्जनी और मध्यमा को स्पर्श करे।

ॐ व्यानाय स्वाहा–अँगूठे से मध्यमा एवं अनामा का स्पर्श करे।

ॐ उदानाय स्वाहा–अँगूठे से तर्जनी, मध्यमा और अनामा का स्पर्श करे।

ॐ समानाय स्वाहा–अँगूठे से सभी अँगुलियों का स्पर्श करे।

इसके बाद अँगूठे से अनामिका के अग्र-भाग का स्पर्श करते हुए '**ठौं' नमः पराय अन्तरात्मने अनिरुद्धाय नैवेद्यं कल्पयामि**' से 'नैवेद्य-मुद्रा' दिखाकर '**मूल-मन्त्र**' का उच्चारण करते हुए–'**ॐ अमुक-देवतां तर्पयामि**' – इस मन्त्र से चार बार '**तर्पण**' करे। फिर – '**अमुक-देवतायै एतज्जलं ॐ अमृतापिधानमसि**'–इस मन्त्र से जल प्रदान कर आचमनीय आदि जल प्रदान करे। सभी प्रकार की '**विष्णु**'-**पूजा** में '**नैवेद्य-समर्पण**' की यही विधि है। फिर समस्त देवोपयोगी '**सामान्य-पूजा-पद्धति**' के क्रम से विसर्जनान्त सभी कर्म सम्पादित करे।

'**सोलह लाख**' जप से इस मन्त्र का '**पुरश्चरण**' होता है। '**जप**' के बाद दशांश-संख्यक घृत-मधु और शर्करा-युक्त कमल पुष्पों से '**हवन**' करे।

(२) श्री रामचन्द्र-मन्त्र

अग्नि (**र**), अनन्त (**आ**) और इन्दु (ँ) – इन तीनों के संयोग से बने बीज – '**राँ**' के बाद – '**रामाय नमः**'-पद जोड़ने से '**राँ रामाय नमः**' –यह षडक्षर मन्त्र साधकों के लिए समस्त कामनाओं को पूरी करनेवाली मणि के समान है। पूजा-क्रम–'**प्रातः-कृत्य**' से लेकर '**वैष्णव-पीठ-न्यास**' कर '**ऋष्यादि-न्यास**' करे। यथा—

ऋष्यादि-न्यास–ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। **गायत्री-छन्दसे नमः** मुखे। **श्रीरामाय देवतायै नमः** हृदि।

कराङ्ग-न्यास–रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। रूं मध्यमाभ्यां वषट्। रैं अनामिकाभ्यां हुम्। रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। रः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार–'**रां हृदयाय नमः**' आदि से '**षडङ्ग-न्यास**' करे।

मन्त्र-न्यास—**रां नमः** ब्रह्म-रन्ध्रे। **रां नमः** भ्रू-मध्ये। **मां नमः** हृदि। **यं नमः** नाभौ। **नं नमः** लिङ्गे। **मः नमः** पादयोः।

ध्यान—

कालाम्भोधर-कान्ति-कान्तमनिशं वीरासनाध्यासनम्। मुद्रां ज्ञान-मयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि॥
सीतां पार्श्व-गतां सरोरुह-करां विद्युन्निभां राघवम्। पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादि-विविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

अर्थात् वर्षा-कालीन श्याम मेघ के समान श्याम-वर्ण, कोमल अङ्ग, वीरासन में बैठे हुए, एक हाथ में ज्ञान-मुद्रा और दूसरा हाथ घुटने पर रखे हुए हैं। उनके पार्श्व में विद्युत् की सी आभावाली एवं पद्म-हस्ता सीताजी विराजमाना हैं। वे मुकुट और अङ्गद आदि आभूषणों से अलंकृत हैं। सीताजी की ओर निहारनेवाले भगवान् राम का मैं भजन करता हूँ।

उक्त प्रकार '**ध्यान**' कर '**मानस**'-**उपचारों से** '**पूजा**' कर '**शङ्ख-स्थापन**' करे। फिर '**पीठ-पूजा**' कर वैष्णवोक्त '**पीठ-शक्ति**' और '**पीठ-यन्त्र**' की अर्चना कर पुनः '**ध्यान**' और **आवाहनादि** से '**पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान**'-पर्यन्त कर्म समाप्त कर '**आवरण-पूजा**' प्रारम्भ करे। यथा—

देवता के वाम भाग में – '**ॐ श्रीसीतायै नमः।**' आगे की ओर – '**ॐ शार्ङ्गाय नमः**' से। वाम और दक्षिण पार्श्व में क्रमशः–'**ॐ शरेभ्यो नमः**', '**ॐ चापेभ्यो नमः**' से पूजा करे।

इसके बाद केशरों में आग्नेय आदि कोणों में '**रां हृदयाय नमः**' आदि से **षडङ्गों की पूजा** करे।

तदनन्तर दलों में पूर्वादि क्रम से – '**ॐ हनुमते नमः, ॐ सुग्रीवाय नमः, ॐ भरताय नमः, ॐ विभीषणाय नमः, ॐ लक्ष्मणाय नमः, ॐ अङ्गदाय नमः, ॐ शत्रुघ्नाय नमः** एवं **ॐ जाम्बवते नमः**' से पूजन कर दलों के अग्र-भाग में **सृष्टि, जयन्त** आदि का पूजन करे। यथा – '**ॐ सृष्ट्यै नमः, ॐ जयन्ताय नमः, ॐ विजयाय नमः, ॐ सुराष्ट्राय नमः, ॐ राष्ट्र-वर्द्धनाय नमः, ॐ आकम्पनाय नमः, ॐ धर्म-पालाय नमः** एवं **ॐ सुमन्त्राय नमः।**

तत्पश्चात् **इन्द्र** आदि **दिक्-पालों** और उनके **वज्र** आदि **अस्त्रों का पूजन** करे। इस प्रकार **आवरण-पूजन** कर '**धूप-दीप**' आदि विसर्जनान्त-कर्म सम्पन्न कर पूजा समाप्त करे।

उक्त मन्त्र के '**पुरश्चरण**' में ६ लाख जप और तद्-दशांश कमलों से '**होम**' करना होता है। ब्राह्मण-भोजन आवश्यक है।

मन्त्र के भेद–स्व-बीज **(रां)**, काम **(क्लीं)**, शक्ति **(ह्रीं)**, वाक् **(ऐं)**, लक्ष्मी **(श्रीं)** और तार **(ॐ)** आदि में लगाने से यह '**पञ्चाक्षर मन्त्र**' ६ प्रकार का '**षडक्षर मन्त्र**' बन जाता है। यथा–**(१) रां रामाय नमः, (२) क्लीं रामाय नमः, (३) ह्रीं रामाय नमः, (४) ऐं रामाय नमः, (५) श्रीं रामाय नमः, (६) ॐ रामाय नमः।** इन छहों मन्त्रों के ऋषि क्रमशः–**(१) ब्रह्मा, (२) सम्मोहन, (३) शक्ति, (४) दक्षिणामूर्ति, (५) अगस्त्य** और **(६) श्रीशिव** हैं। अथवा काम-बीजादि **(क्लीं रामाय नमः)** मन्त्र के ऋषि **विश्वामित्र** माने गए हैं। इन सभी मन्त्रों का छन्द—'**गायत्री**' और देवता—'**श्रीराम**' हैं। इन सभी मन्त्रों का '**ध्यान**' और '**पूजन**' पूर्व-वत् ही है।

(२) द्व्यक्षर मन्त्र – वह्नि **(र)**, नारायण **(आ)** अर्थात् '**रा**' के साथ जठर **(म)**। यह दो अक्षरों से बना मन्त्र सभी अभीष्ट फल-प्रदाता है।

इस **द्व्यक्षर मन्त्र** के आदि और अन्त में **'श्रीं', 'ह्रीं', 'क्लीं'** में से किसी एक बीज को लगाने से तीन **'चतुरक्षर मन्त्र'** बनते हैं–**(१) श्रीं राम श्रीं, (२) ह्रीं राम ह्रीं, (३) क्लीं राम क्लीं।**

उक्त **चतुरक्षर मन्त्रों** के अन्त में **'स्वाहा', 'हुं फट्'** अथवा **'नमः'** लगाने से ९ **षडक्षर मन्त्र** बनते हैं। यथा–

श्रीं राम श्रीं स्वाहा, श्रीं राम श्रीं हुं फट्, श्रीं राम श्रीं नमः।

ह्रीं राम ह्रीं स्वाहा, ह्रीं राम ह्रीं हुं फट्, ह्रीं राम ह्रीं नमः।

क्लीं राम क्लीं स्वाहा, क्लीं राम क्लीं हुं फट्, क्लीं राम क्लीं नमः॥

उपर्युक्त द्व्यक्षर मन्त्र (राम) के आदि में **ॐ, ह्रीं, श्रीं, क्लीं, ऐं** अथवा **'रां'** इन बीजों में से किसी एक बीज को लगाने से ६ प्रकार के **त्र्यक्षर मन्त्र** बनते हैं। यथा–**(१) ॐ राम, (२) ह्रीं राम, (३) श्रीं राम, (४) क्लीं राम, (५) ऐं राम, (६) रां राम**। ये सभी **'त्र्यक्षर-मन्त्र'** साधक के सभी मनोरथों को पूरा करते हैं।

'राम' के आगे **'चन्द्र'** और **'भद्र'** लगाने से **'रामचन्द्र'** और **'रामभद्र'**–ये दो **'चतुरक्षर'** बनते हैं।

'रामाय नमः' यह **'पञ्चाक्षर मन्त्र'** है। इसके आदि में लक्ष्मी **(श्रीं)**, वाक् **(ऐं)**, मन्मथ **(क्लीं)** और तार **(ॐ)** लगाने से चार प्रकार के अन्य **'षडक्षर मन्त्र'** बनते हैं।

उक्त **'पञ्चाक्षर-मन्त्र'** के आदि में मातृका-वर्णों में से एक-एक वर्ण को लगाने से ५० प्रकार के **'षडक्षर मन्त्र'** बनते हैं। यथा–**अं रामाय नमः, आं रामाय नमः** इत्यादि।

उक्त सभी मन्त्रों का ध्यान-पूजनादि पूर्वोक्त **'षडक्षर मन्त्र'** के समान है।

एकाक्षर मन्त्र – अर्द्ध-चन्द्र (ँ) से विभूषित, विष्णु (आ) से संयुक्त, वह्नि (र्) से बना एकाक्षर मन्त्र **'राँ'** सर्व-मन्त्र-प्रधान और कल्प-वृक्ष के समान है। इस एकाक्षर मन्त्र **(राँ)** के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री और देवता राम हैं।

'एकाक्षर मन्त्र' के **'पुरश्चरण'** में १२ लाख और अन्य मन्त्रों के **'पुरश्चरण'** में ६ लाख 'जप' करे।

(३) बाल-गोपाल-मन्त्र

'बाल-गोपाल-मन्त्र' अनेक प्रकार के हैं। यथा — (१) 'एकाक्षर' - **'कृः'**, (२) द्वि-अक्षर–**'कृष्ण'**, (३) त्र्यक्षर–**'क्लीं कृष्ण'**, (४) चतुरक्षर – **'क्लीं कृष्णाय'**, (५-६) पञ्चाक्षर – **'कृष्णाय नमः', 'क्लीं कृष्णाय क्लीं'**। (७-९) षडक्षर – **'क्लीं कृष्णाय नमः', 'क्लीं कृष्णाय स्वाहा', 'गोपालाय स्वाहा'**। (१०-११) सप्ताक्षर – **'कृष्णाय-गोविन्दाय', 'श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं'**। (१२-१४) अष्टाक्षर – **'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय', 'दधि-भक्षणाय स्वाहा', 'सुप्रसन्नात्मने नमः'**। (१५) नवाक्षर – **'क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं'**। (१६-१७) दशाक्षर – **'क्लीं ग्लौं क्लीं श्यामलाङ्गाय नमः', 'बाल-वपुषे कृष्णाय स्वाहा'**। (१८) एकादशाक्षर–**'बाल-वपुषे क्लीं कृष्णाय स्वाहा'**।

उपर्युक्त १८ मन्त्रों में से किसी एक मन्त्र से गोपाल की उपासना करे।

पूजा-यन्त्र—उक्त सभी मन्त्रों के **'पूजा-यन्त्र'** हेतु **'गौतमीय तन्त्र'** में यह बताया गया है – **'अष्ट-दल-कमल'** उसके बाहर **चतुरस्र** और **चतुर्द्वार**। कर्णिका में काम-बीज **(क्लीं)** और भू-बीज **(ग्लौं)**।

पूजा-प्रयोग—प्रातः-कृत्यादि कर **'विष्णु'**-मन्त्रोक्त **'पीठ-न्यास'** तक सभी कर्म सम्पादित कर **'ऋष्यादि-न्यास'** करे। यथा – शिरसि **नारद-ऋषये नमः**। मुखे **गायत्रीच्छन्दसे नमः**। हृदि **श्रीकृष्ण-देवतायै नमः**। गुह्ये **क्लीं वीजाय नमः**। पादयोः **स्वाहा शक्तये नमः**।

कराङ्ग-न्यास—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। **क्लीं** तर्जनीभ्यां स्वाहा। **क्लूं** मध्यमाभ्यां वषट्। **क्लैं** अनामिकाभ्यां हुम्। **क्लौं** कनिष्ठाभ्यां वौषट्। **क्लः** करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

इसी तरह '**क्लां हृदयाय नमः**' आदि से '**षडङ्ग-न्यास**' पूर्व-वत् मुद्रा आदि दिखाकर '**ध्यान**' करे—

अव्याद्व्याकोष-नीलाम्बुज-रुचिररुणाम्भोज-नेत्रोऽम्बुजस्थो,
बालो जङ्घा-कटीर-स्थल-कलित-रणत्-किङ्किणीको मुकुन्दः।
दोर्भ्यां इयं कुरीलां दधदति-विमलं पायसं विश्व-वन्द्यो,
गो-गोप-गोपी वितोरुरु नख-विलसत्-कण्ठ-भूषश्चिरं वः॥

अर्थात् विकसित नील-कमल के समान श्यामल शरीर एवं तरुण अरुण कमल के समान रतनारे नेत्रों-वाले बाल-भेष-धारी मुकुन्द एक हाथ में मक्खन और दूसरे हाथ में खीर लिए हुए कमल पर नाच रहे हैं। गले में बघ-नखा है। नृत्य के कारण पैरों की पैजन तथा कमर की करधनी रुनझुन-रुनझुन कर रही है। गाय-गोपी और गोपों से घिरे हुए वे विश्व-वन्द्य कृष्ण हमारी रक्षा करें।

उक्त प्रकार से ध्यान कर **मानसिक उपचारों से पूजा** कर '**शङ्ख-स्थापन**' कर '**विष्णु**'-मन्त्रोक्त '**पीठ-न्यास**' एवं '**पीठ-पूजा**' कर पुनः ध्यान करे। आवाहनादि से '**पञ्च-पुष्पाञ्जलि**'-दान-पर्यन्त समस्त क्रियाएँ करने के बाद '**आवरण-पूजन**' प्रारम्भ करे। आग्नेय आदि कोणों एवं दिशाओं में '**क्लां हृदयाय नमः**' आदि से '**षडङ्ग पूजन**' कर **इन्द्र** आदि दिक्-पालों एवं उनके **वज्र** आदि आयुधों की पूजा करे। तदनन्तर धूप-दीप आदि से '**विसर्जन**' तक का कार्य पूरा करे।

उक्त सभी मन्त्रों के '**पुरश्चरण**' में एक लाख जप कर घी और मिश्री-युक्त खीर से दस हजार '**हवन**' करे।

(४) श्रीवासुदेव-मन्त्र

'**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**'—यह द्वादशाक्षर–मन्त्र वैष्णव तन्त्र के प्रधान मन्त्रों में से एक तथा कल्प-वृक्ष की भाँति त्वरित फल-दायी है।

पूजा-विधि—प्रातः-कृत्यादि से पीठ-न्यास तक के कर्म कर '**ऋष्यादि-न्यास**' करे। यथा– **प्रजापतये ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीच्छन्दसे नमः मुखे। वासुदेवाय देवतायै नमः हृदि।**

कराङ्ग-न्यास—'**ॐ**' अंगुष्ठाभ्याम् नमः। '**नमः**' तर्जनीभ्यां स्वाहा। '**भगवते**' मध्यमाभ्यां वषट्। '**वासुदेवाय**' अनामिकाभ्यां हुम्। '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' कनिष्ठाभ्याम् फट्। इसी प्रकार हृदयादि में न्यास करे।

मन्त्र-न्यास—शिर, मस्तक, दोनों नेत्र, मुख, गला, बाहु-द्वय, हृदय, उदर, नाभि, लिङ्ग, जानु-द्वय और पाद-द्वय में क्रमशः मन्त्र के एक-एक वर्ण का न्यास करे। यथा—

ॐ नमः मूर्ध्नि। **नं नमः** भाले। **मं नमः** नेत्रयोः। **भं नमः** मुखे। **गं नमः** गले। **वं नमः** बाहु-द्वये।
तें नमः हृदि। **वां नमः** उदरे। **सुं नमः** नाभौ। **दें नमः** लिङ्गे। **वां नमः** जानु-द्वये। **यं नमः** पाद-द्वये।

'**न्यास**' के बाद '**ध्यान**' करे। यथा—

विष्णुं शारद-चन्द्र-कोटि-सदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदाम्।
अम्भोजं दधतं सिताब्ज-निलयं कान्त्या जगन्मोहनम्॥
आबद्धाङ्गद-हार-कुण्डल-महा-मौलिं स्फुरत्-कङ्कणम्।
श्रीवत्साङ्कमुदार-कौस्तुभ-धरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम्॥

अर्थात् शरत्-कालीन करोड़ों चन्द्रमा के समान धवल, शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण कर श्वेत-कमल पर आसीन एवं अपनी शोभा से जगत् को मोहित करनेवाले भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ, जो अङ्गद, हार,

कुण्डल, किरीट तथा कङ्कण आदि से अलंकृत हैं तथा जिनके वक्षः-स्थल पर श्रीवत्स-चिह्न और कौस्तुभ-मणि शोभायमान है एवं मुनि-गण सदा जिनकी स्तुति करते हैं।

इस प्रकार '**ध्यान**' और '**मानसिक पूजन**' के उपरान्त '**शङ्ख-स्थापन**', '**पीठ-पूजा**' कर पुनः ध्यान करे। आवाहन से '**पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान**'-पर्यन्त कर्म करके '**आवरण-पूजा**' प्रारम्भ करे।

आग्नेय-नैऋत्य-वायव्य एवं **ईशान**-कोणों, **मध्य** और **चारों दिशाओं** में – '**ॐ हृदयाय नमः**' आदि से '**पञ्चाङ्ग-पूजन**' करे।

तदनन्तर पूर्व आदि दलों में **शान्त्यादि शक्तियों-सहित वासुदेव** आदि की पूजा कर **इन्द्र** आदि दिक्-पालों एवं **वज्र** आदि आयुधों की पूजा के उपरान्त धूपादि-विसर्जनान्त कर्म करे।

पुरश्चरण–**१२ लाख** '**जप**'। दशांश तिल-आज्य से '**हवन**'।

(५) श्रीलक्ष्मी-वासुदेव-मन्त्र

आदि में प्रणव (**ॐ**), माया-द्वय (**ह्रीं ह्रीं**), रमा-द्वय (**श्रीं श्रीं**) फिर '**लक्ष्मी-वासुदेवाय नमः**'। यह चौदह अक्षर का मन्त्र है–'**ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मी-वासुदेवाय नमः।**'

उक्त मन्त्र का पूजा-विधान **द्वादशाक्षरी वासुदेव-मन्त्र** के समान है। '**ऋष्यादि-न्यास**' में देवता का नाम '**लक्ष्मी-वासुदेव**'।

कर-न्यास—'**ॐ ह्रीं ह्रीं** अंगुष्ठाभ्यां नमः। **ॐ श्रीं श्रीं** तर्जनीभ्यां स्वाहा। **ॐ लक्ष्मी** मध्यमाभ्यां वषट्। **ॐ वासुदेवाय** अनामिकाभ्यां हुम्। **ॐ नमः** कनिष्ठाभ्याम् फट्।

हृदयादि न्यास—'**ॐ ह्रीं ह्रीं** हृदयाय नमः' आदि।

'**पञ्चाङ्ग-न्यास**' करे। कहा गया है–आदि में **ॐ** लगाकर दो **शक्ति-बीजों** से हृदय, दो '**रमा**'-**बीजों** से शिर, '**लक्ष्मी**' से शिखा, '**वासुदेवाय**' से 'कवच' तथा '**नमः**' से 'अस्त्र' क्रम से न्यास करे।

'**न्यास**' के बाद '**ध्यान**' करे। यथा—

विद्युच्चन्द्र-निभं वपुः कमलजा-वैकुण्ठयोरेकताम्।
प्राप्तम् स्नेह-रसेन रत्न-विलसत् भूषाभरणालंकृतम्॥
विद्या-पङ्कज-दर्पणं मणि-मयं कुम्भं सरोजं गदां।
शङ्खं चक्रममूनि विभ्रदमितं दिश्यात् श्रियं वः सदा॥

अर्थात् परस्पर स्नेह के कारण विद्युत्-वर्णा लक्ष्मी और चन्द्रोज्ज्वल भगवान् वासुदेव एक हो गए हैं। विविध रत्नाभूषणों से अलंकृत भगवती लक्ष्मी अपने चारों हाथों में पुस्तक-कमल-दर्पण और सुधा-कलश एवं भगवान् वासुदेव कमल, गदा, शङ्ख और चक्र धारण किए हुए हैं। लक्ष्मी-वासुदेव की यह युगल-मूर्ति हमें सदा अतुल-श्री प्रदान करे।

उक्त प्रकार '**ध्यान**' कर **द्वादशाक्षर वासुदेव मन्त्र** में बताई गई विधि के अनुसार पूजन करे।

'**पुरश्चरण**' के लिए '**वर्ण लक्ष**' अर्थात् **चौदह लाख** '**जप**' एवं घृत-मधु और शर्करा-युक्त विकसित पद्मों से '**हवन**' करे।

(६) श्रीनृसिंह-मन्त्र

बिन्दु और चौदहवें स्वर (**औ**) से समन्वित वह्नि (**र्**) आरूढ़ '**क्ष**'-**कार** से बना '**क्ष्रौं**' **भगवान् नृसिंह** का बीज-मन्त्र है।

पूजा-विधान—प्रातः-कृत्यादि समाप्त कर वैष्णव-पीठ का विन्यास कर **ऋष्यादि-न्यास** करे। उक्त मन्त्र के ऋषि **अत्रि**, छन्द **गायत्री**, देवता **नृसिंह**, बीज '**क्ष**'-**कार** और शक्ति '**औ**'-**कार**। षड्-दीर्घ-बीज से '**कर-न्यास**' और '**षडङ्ग-न्यास**' करे। यथा–

विनियोग—**ॐ अस्य नृसिंह-मन्त्रस्य अत्रिः ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीनृसिंहो देवता, क्षं बीजं, औकारेति शक्तिः, ममाऽभीष्ट-सिद्धये विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास—अत्रि-ऋषये नमः शिरषि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीनृसिंह-देवतायै नमः हृदि। क्षं-बीजाय नमः गुह्ये। औं-शक्तये नमः पादयोः। ममाभीष्ट-सिद्धये विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास—क्षां-अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्षीं-तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्षूं-मध्यमाभ्यां वषट्। क्षैं-अनामिकाभ्यां हुम्। क्षौं-कनिष्ठाभ्याम् वौषट्। क्षः-करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

अङ्ग-न्यास—क्षां-हृदयाय नमः। क्षीं-शिरसे स्वाहा। क्षूं-शिखायै वषट्। क्षैं-कवचाय हुम्। क्षौं-नेत्र-त्रयाय वौषट्। क्षः-अस्त्राय फट्।

सामान्य तान्त्रिक पद्धति के अनुसार प्रातः-कृत्य कर तथा वैष्णव-पद्धति के अनुसार आचमन, प्राणायाम और न्यास करने के बाद पुनः ध्यान करे। यथा–

माणिक्याद्रि-सम-प्रभं निज-रुचा सन्त्रस्त-रक्षो-गणम्।
जानु-न्यस्त-कराम्बुजं त्रि-नयनं रत्नोल्लसद्-भूषणम्॥
बाहुभ्यां धृत-शङ्ख-चक्रमनिशं दंष्ट्रोग्र-वक्त्रोल्लसन्।
ज्वाला-जिह्वमुदार-केश-निचयं वन्दे नृसिंहं विभुम्॥

अर्थात् मणि-पर्वत के समान देदीप्यमान अपनी देह-कान्ति से राक्षस-समूह को सन्त्रस्त कर देनेवाले त्रि-नयन एवं रत्न-खचित आभूषणों से अलंकृत भगवान् नृसिंह अपने दो हाथ घुटनों पर रखे हुए हैं और दो हाथों में शङ्ख एवं चक्र धारण किए हुए हैं। भीषण दाढ़ों के बीच से अग्नि-शिखा के समान उनकी जिह्वा लपलपा रही है। दिव्य अयाल-राशि से शोभित भगवान् नृसिंह की मैं वन्दना करता हूँ।*

पुनः '**ध्यान**' के पश्चात् आवाहनादि पञ्च-पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त कर्म करने के बाद '**आवरण-पूजन**' करे। यथा–केशरों में, आग्नेय आदि कोणों में, मध्य में और दिशाओं में '**क्षां हृदयाय नमः**' आदि से **षडङ्ग-पूजन** करे। पूर्व आदि दिशाओं में **गरुड, शङ्कर, शेष** तथा **ब्रह्मा** की तथा विदिशाओं में **श्रिय, ह्रिय,** धृति एवं **पुष्टि** का पूजन करे। भू-पुर में **इन्द्र** आदि दिक्-पालों तथा उनके **वज्र** आदि अस्त्रों का पूजन करे। '**पुरश्चरण**'–आठ लाख जप।

(७) श्रीहरिहर-मन्त्र

'**मन्त्र-देव-प्रकाशिनी**' में '**हरिहर-मन्त्र**' का उद्धार इस प्रकार बताया गया है – तार (**ॐ**), माया (**ह्रीं**), प्रसाद (**हौं**) के बाद '**शङ्कर-नारायणाय नमः**'। इसके बाद प्रसाद (**हौं**), माया (**ह्रीं**) तथा तार (**ॐ**)। यथा—(**ॐ ह्रीं हौं शङ्कर-नारायणाय नमः हौं ह्रीं ॐ**)।

पूजा-विधि—वैष्णव अथवा शैव '**पीठ-न्यास**' करे। फिर '**ऋष्यादि-न्यास**' करे। यथा–**ॐ नारद-ऋषये**

---

* '**मन्त्र-महोदधि**' में एकाक्षर मन्त्र में '**ध्यान**' भिन्न बताया गया है। यहाँ दिया गया ध्यान '**मन्त्र-महोदधि**' तथा '**शारदा-तिलक तन्त्र**' में '**ॐ उग्र-वीरं०**'-मन्त्र की साधना में बताया गया है।

नमः शिरसि। **अनुष्टुप्-छन्दसे नमः** मुखे। **हरि-हराय देवतायै नमः** हृदि। **हौं बीजाय नमः** गुह्ये। **ह्रीं शक्तये नमः** पादयोः।

कराङ्ग-न्यास—षड्-दीर्घ-बीज से **कर-न्यास** और **षडङ्ग-न्यास** करे। यथा – **ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रां हृदयाय नमः।**

ध्यान–

शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभीतिं दधतं करैः।
स्व-स्व-भूषाच्छ-लीलार्द्ध-देहं हरि-हरं भजे॥

अर्थात् हाथों में त्रिशूल, चक्र, पाञ्चजन्य और अभय-मुद्रा धारण करनेवाले भगवान् हरि-हर का आधा शरीर शङ्कर के और आधा शरीर विष्णु के अलङ्कारों से अलंकृत है। उनकी मैं वन्दना करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान कर **मानसोपचार** से **पूजन** एवं **शङ्ख-स्थापन** कर '**शैव**' अथवा '**वैष्णव-पीठ**' पर पूजन करे। '**पञ्च-पुष्पाञ्जलि**'-दान तक की क्रिया कर '**आवरण-पूजा**' करे। केशरों में आग्नेय आदि कोणों में, मध्य में और दिशाओं में–'**ह्रां हृदयाय नमः**' आदि से षडङ्ग–पूजन कर पद्म-दलों में पूर्वादि क्रम से –'**ॐ लक्ष्म्यै नमः, सरस्वत्यै नमः, नारायण्यै नमः, धरायै नमः, भूधरायै नमः, अम्बिकायै नमः, त्र्यम्बकायै नमः, गङ्गायै नमः, गङ्गा-धरायै नमः**' से पूजन करे। उसके बाहर **इन्द्र** आदि दिक्-पालों का पूजन करे। **वज्र** आदि अस्त्रों की पूजा नहीं करनी है। इसके बाद धूपादि से विसर्जनान्त कर्म करे।

उक्त मन्त्र के '**पुरश्चरण**' में एक लाख जप कर घृत-युक्त पायस द्वारा 'जप' का दशांश '**होम**' करे।

(८) श्रीशिव-मन्त्र

जिनके लिए गिरिजा ने तपस्या की तथा जिनके चरण-रज की वन्दना ऋषि-जन करते हैं, मैं बाघाम्बर और नागराज से विभूषित उन चन्द्र-मौलि का हृदय से स्मरण करता हूँ। मैं भगवान् शङ्कर के सर्व-समृद्धि-दायक मन्त्रों का निरूपण करता हूँ, जिन मन्त्रों को पुरा काल में ऋषियों ने शिव-सायुज्य के लिए प्राप्त किया था।

बिन्दु और औ-कार-स्वर-संयुक्त सान्त **(ह)** से निष्पन्न '**प्रासाद**'-नामक यह महा-मन्त्र '**हौं**' अपने उपासकों की सभी कामनाओं को पूरा करता है।

पूजा-विधि—प्रातः-कृत्य तथा प्राणायाम आदि कर '**श्रीकण्ठादि-न्यास**' करे। यथा—

ॐ अं श्रीकण्ठेश-पूर्णोदरीभ्यां नमः–ललाटे।
आं अनन्तेश-विरजाभ्यां नमः–मुख-वृत्ते।
इं सूक्ष्मेश-शाल्मलीभ्यां नमः–दक्ष-नेत्रे।
ईं त्रिमूर्ति-लोलाक्षीभ्यां नमः–वाम-नेत्रे।
उं अमरेश्वर-वर्तुलाक्षीभ्यां नमः–दक्ष-कर्णे।
ऊं अर्घीशि-पूर्ण-घोणाभ्यां नमः–वाम-कर्णे।
ऋं भारभूति-सुदीर्घ-मुखीभ्यां नमः–दक्ष-नासायाम्।
ॠं अतिथीश-गोमुखीभ्यां नमः–वाम-नासायाम्।
लृं स्थाणुक-दीर्घ-जिह्वाभ्यां नमः–दक्ष-गण्डे।
ॡं हर-कुण्डोदरीभ्यां नमः–वाम-गण्डे।

एं झिण्टीशोर्ध्व-मुखीभ्यां नमः–ऊर्ध्व-ओष्ठे।
ऐं भौतिकेश-विकृत-मुखीभ्यां नमः–अधरे।
ओं सद्योजात-ज्वाला-मुखीभ्यां नमः–ऊर्ध्व-दन्त-पंक्तौ।
औं अनुग्रहेश्वरोल्का-मुखीभ्यां नमः–अधौ-दन्त-पंक्तौ।
अं अक्रूरेश-सुश्री-मुखीभ्यां नमः–ललाटे।
अः महासेनेश-विद्या-मुखीभ्यां नमः–मुखाभ्यान्तरे।
कं क्रोधीश-सर्व-सिद्धि-महा-कालीभ्यां नमः–दक्ष-बाहु-मूले।
खं चण्डीश-सर्व-सिद्धि-सरस्वतीभ्यां नमः–दक्ष-कूर्परे।
गं पञ्चान्तकेश-गौरीभ्यां नमः–दक्ष-मणि-बन्धे।
घं शिवोत्तमेश-त्रैलोक्य-विद्याभ्यां नमः–दक्ष-करांगुलि-मूले।
ङं एक-रुद्रेश-मन्त्र-शक्तिभ्यां नमः–दक्ष-करांगुलि-अग्रे।
चं कूर्मात्मेश-शक्तिभ्यां नमः–वाम-बाहु-मूले।
छं एक-नेत्रेश-भूत-मातृकाभ्यां नमः–वाम-कूर्परे।
जं चतुराननेश-लम्बोदरीभ्यां नमः–वाम-मणि-बन्धे।
झं अब्जेश-द्राविणीभ्यां नमः–वाम-करांगुलि-मूले।
ञं सर्वेश-नागरीभ्यां नमः–वाम-करांगुलि-मूले।
टं सोमेश-खेचरीभ्यां नमः–दक्ष-ऊरु-मूले।
ठं लाङ्गलीश-मञ्जरीभ्यां नमः–दक्ष-जानुनि।
डं दारुणेश-रूपिणीभ्यां नमः–दक्ष-गुल्फे
ढं अर्द्ध-नारीश्वर-वीरिणीभ्यां नमः–दक्ष-पाद-अंगुलि-मूले।
णं उमा-कान्तेश-काकोदरीभ्यां नमः–दक्ष-पाद-अंगुलि-अग्रे।
तं आषाढीश-पूतनाभ्यां नमः–वाम-उरु-मूले।
थं दण्डि-भद्रेश-कालीभ्यां नमः–वाम-जानुनि।
दं अद्रीश-योगिनीभ्यां नमः–वाम-गुल्फे।
धं मीनेश-शंखिनीभ्यां नमः–वाम-पाद-अंगुलि-मूले।
नं मेषेश-गर्जिनीभ्यां नमः–वाम-पाद-अंगुलि-अंग्रे।
पं लोहितेश-काल-रात्रिभ्यां नमः–वाम-पार्श्वे।
फं शिखीश-कुब्जिकाभ्यां नमः–दक्ष-पार्श्वे।
बं छगलण्डेश-कपर्दिनीभ्यां नमः–पृष्ठे।
भं द्विरण्डेश-वज्राभ्यां नमः–नाभौ।
मं महा-कालेश-जयाभ्यां नमः–जठरे।
यं त्वगात्मभ्यां-वाणीश-सुमुखीश्वरीभ्यां नमः–हृदये।
रं असृगात्मभ्यां-भुजङ्गेश-रेवतीभ्यां नमः–दक्षांशे।

लं मांसात्मभ्यां-पिनाकीश-माधवीभ्यां नमः–वामांशे।

वं मेदात्मभ्यां-खड्गीश-वारुणीभ्यां नमः–ककुदि।

शं अस्थ्यात्मभ्यां-वकेश-वायवीभ्यां नमः–हृदयात् दक्ष-हस्तांते।

षं मज्जात्मभ्यां-श्वेतेश-रक्षो-विदारिणीभ्यां नमः–वाम-हस्तांते।

सं शुक्रात्मभ्यां-भृग्वीश-सहजाभ्यां नमः–हृदयात् दक्ष-पादान्ते।

हं प्राणात्मभ्यां-नकुलीश-लक्ष्मीभ्यां नमः–हृदयात् वाम-पादान्ते।

ळं बीजात्मभ्यां-शिवेश-व्यापिनीभ्यां नमः–हृदयात् नाभ्यंतम्।

क्षं क्रोधात्मभ्यां-संवर्तकेश-मायाभ्यां नमः–हृदयात् मुखान्ते।

उक्त न्यास के **श्रीकण्ठादि देवों** को '**रुद्र**' कहते हैं। ये सभी अपने हाथों में **शूल** और **नर-कपाल** लिए हैं। **पूर्णोदरी** आदि इनकी शक्तियाँ इनकी गोद में विराजमान हैं, जिनके हाथों में **लाल कमल** तथा **नर-कपाल** हैं। इन देवियों का शरीर सिन्दूर के समान लाल वर्ण का है। यथा– '**एते रुद्राः समाख्याता, धृत-शूल-कपालकाः।**' एवं '**एता रुद्राङ्क-पीठस्थाः, सिन्दूरारुण-विग्रहाः। रक्तोत्पल-कपालाभ्यामलंकृत-कराम्बुजा।**'

पीठ-न्यास—'शारदा-तिलक तन्त्र' में '**शैव-पीठ–शक्तियों**' के नाम निम्नानुसार बताए गए हैं। यथा–

वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, काली, कल-विकरणी, बल-विकरणी, बल-प्रमथिनी, सर्व-भूत-दमिनी तथा **मनोन्मनी।**

'**पीठ-मन्त्र**' का उद्धार— '**नमो भगवते**' के बाद '**सकल**' और उसके बाद '**गुणात्म-शक्ति-युक्ताय**'-पद बोले। इसके बाद '**अनन्ताय**' तत्पश्चात् '**योग-पीठात्मने नमः**'। आदि में प्रणव (**ॐ**)।

प्रयोग—सामान्य-पूजा-पद्धति के अनुसार '**पीठ-न्यास**' कर '**पीठ-शक्तियों का न्यास**' करे। यथा–

हृदय-कमल के पूर्व केशर में–'**ॐ वामायै नमः**'। आग्नेय केशर में–'**ॐ ज्येष्ठायै नमः**'। दक्षिण केशर में– '**ॐ रौद्र्यै नमः**'। नैऋत्य केशर में – '**ॐ काल्यै नमः**'। पश्चिम केशर में – '**ॐ कल-विकरण्यै नमः**'। वायव्य केशर में–'**ॐ बल-विकरण्यै नमः**'। उत्तर केशर में–'**ॐ बल-प्रमथन्यै नमः**'। ईशान केशर में–'**ॐ सर्व-भूत-दमिन्यै नमः**'। मध्य में–'**ॐ मनोन्मन्यै नमः**'।

हृदय-कमल के ऊपर – '**ॐ नमो भगवते सकल-गुणात्म-शक्ति-युक्ताय-अनन्ताय-योग-पीठात्मने नमः**'—इस पीठ-मन्त्र से **गिरिजा-पति** को '**आसन**' प्रदान करे।

फिर मूल-मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर उनका '**आह्वान-पूजन**' करे। तब '**ऋष्यादि-न्यास**' करे। यथा—

ऋष्यादि-न्यास—**ॐ वाम-देवाय ऋषये नमः** शिरसि। **पंक्तिश्छन्दसे** नमः मुखे। **सदाशिवाय देवतायै** नमः हृदि।

कर-न्यास—'**हां**' अंगुष्ठाभ्याम् नमः। **हीं** तर्जनीभ्यां स्वाहा। **हूं** मध्यमाभ्यां वषट्। **हैं** अनामिकाभ्यां हुम्। **हौं** कनिष्ठाभ्यां वौषट्। **हः** करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास —'**हां**' हृदयाय नमः। **हीं** शिरसे स्वाहा। **हूं** शिखायै वषट्। **हैं** कवचाय हुम्। **हौं** नेत्र-त्रयाय वौषट्। **हः** अस्त्राय फट्।

'**कर-न्यास**' और '**हृदयादि षडङ्ग-न्यास**' के बाद तीन प्रकार के '**पञ्च-मूर्ति-न्यास**' करे। यथा–

(१) दोनों हाथों के अँगूठों में और अँगुलियों में ईशान आदि **पञ्च-मूर्तियों का न्यास** करे।

(२) फिर इन्हीं अँगुलियों से तत्-तत् बीजों से ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर मुख में पञ्च-मूर्तियों का न्यास करे।

(३) तत्-तत् बीजों और तत्-तत् अँगुलियों से मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य और पैरों में पञ्च-मूर्तियों का न्यास करे।

उक्त पञ्च-मूर्तियों का बीज — **'ओ'** से विलोम-क्रम के ह्रस्व स्वर (**ओ, ए, उ, इ** तथा **अ**) से युक्त वियत् (**'ह'-कार**) है।

प्रयोग–(१) हों ईशानाय नमः – अंगुष्ठयोः। **हें तत्पुरुषाय नमः**–तर्जन्योः। **हुं अघोराय नमः**–मध्यमयोः। **हिं वाम-देवाय नमः**–अनामिकयोः। **हं सद्योजाताय नमः**–कनिष्ठयोः।

(२) **हों ईशानाय नमः** – अँगुष्ठ से ऊर्ध्व-मुख में। **हें तत्पुरुषाय नमः** – तर्जनी से पूर्व-मुख में। **हुं अघोराय नमः** – मध्यमा से दक्षिण-मुख में। **हिं वाम-देवाय नमः** – अनामा से पश्चिम-मुख में। **हं सद्योजाताय नमः**– कनिष्ठा से उत्तर-मुख में।

(३) **मूर्ति-न्यास – हों ईशानाय नमः** –अँगूठे से (मस्तक में)। **हें तत्पुरुषाय नमः**–तर्जनी से (मुख में)। **हुं अघोराय नमः** – मध्यमा से (हृदय में)। **हिं वाम-देवाय नमः** –अनामा से (गुह्य में)। **हं सद्योजाताय नमः**– कनिष्ठा से (पैर में)।

शूद्र-साधक **'न्यास-क्रम'** में यहीं तक न्यास करे। आगे बताए गए न्यासों को करने का उसे अधिकार नहीं है।

कला-न्यास–'ईशान' आदि पञ्च-मूर्तियों की कुल ३८ कलाएँ हैं। इन कलाओं का न्यास इनसे सम्बन्धित मन्त्रों के पदों के साथ ऊर्ध्व आदि मुखों में किया जाता है। यथा–

१. ईशान कलाएँ–(१) **ॐ ईशानः सर्व-विद्यानाम् ॐ शशिन्यै कलायै नमः**–ऊर्ध्व-मुखे।
(२) **ॐ ईश्वरः सर्व-भूतानां ॐ अङ्गदायै कलायै नमः**–पूर्व-मुखे।
(३) **ॐ ब्रह्माधि-पतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः ॐ ब्रह्मेष्टदायै कलायै नमः**–दक्षिण-मुखे।
(४) **ॐ शिवो मेऽस्तु ॐ मरीच्यै कलायै नमः**–पश्चिम-मुखे।
(५) **ॐ सदा-शिवोम् ॐ अंशु-मालिन्यै कलायै नमः**–उत्तर-मुखे।

२. तत्पुरुष कलाएँ–तत्पुरुष मूर्ति की चार कलाओं का न्यास पूर्वादि-मुख में किया जाता है–
(१) **ॐ तत्पुरुषाय विद्महे ॐ शान्त्यै कलायै नमः**–पूर्व-मुखे।
(२) **ॐ महा-देवाय धीमहि ॐ विद्यायै कलायै नमः**–पश्चिम-मुखे।
(३) **ॐ तन्नो रुद्रः ॐ प्रतिष्ठायै कलायै नमः**–दक्षिण-मुखे।
(४) **ॐ प्रचोदयात् ॐ निवृत्यै कलायै नमः**–उत्तर-मुखे।

३. अघोर-कलाएँ–उमा आदि आठ अघोर कलाओं का न्यास हृदय, ग्रीवा, दोनों स्कन्ध, नाभि, उदर, पृष्ठ और वक्षः-स्थल में किया जाता है–
(१) **ॐ अघोरेभ्यो ॐ उमायै कलायै नमः**–हृदये
(२) **ॐ घोरेभ्यो ॐ मोहायै कलायै नमः**–ग्रीवायाम्।
(३) **ॐ घोरे ॐ क्षमायै कलायै नमः**–दक्ष-स्कन्धे।
(४) **ॐ घोर-तरेभ्यः ॐ निद्रायै कलायै नमः**–वाम-स्कन्धे।
(५) **ॐ सर्वतः सर्व ॐ व्याधये कलायै नमः**–नाभौ।

(६) ॐ सर्वेभ्यः ॐ मृत्यवे कलायै नमः–उदरे।

(७) ॐ नमस्तेऽस्तु ॐ क्षुधायै कलायै नमः–पृष्ठे।

(८) ॐ रुद्र-रूपेभ्यः ॐ तृष्णायै कलायै नमः–वक्षः-स्थले।

४. वाम-देव की कलाएँ–वाम-देव-मूर्ति की ऊर्जा आदि १३ कलाओं का न्यास गुह्य, अण्ड-कोष, दोनों ऊरु, दोनों जानु, दोनों जङ्घा, दोनों नितम्ब, कटि और दोनों पार्श्वों में किया जाता है। यथा–

(१) ॐ वाम-देवाय नमः ॐ ऊर्जायै कलायै नमः–गुह्ये।

(२) ॐ ज्येष्ठाय नमः ॐ रक्षायै कलायै नमः–मुष्के।

(३) ॐ रुद्राय नमः ॐ रत्यै कलायै नमः–दक्ष-उरौ।

(४) ॐ कालाय नमः ॐ कपालिन्यै कलायै नमः–वाम-उरौ।

(५) ॐ कल नमः ॐ कामायै कलायै नमः–दक्ष-जानुनि।

(६) ॐ विकरणाय नमः ॐ संयमिन्यै कलायै नमः–वाम-जानुनि।

(७) ॐ बल नमः ॐ क्रोधायै (क्रियायै) कलायै नमः–दक्ष-जङ्घायाम्।

(८) ॐ विकरणाय नमः ॐ वृद्ध्यै कलायै नमः–वाम-जङ्घायाम्।

(९) ॐ बल नमः ॐ स्थिरायै कलायै नमः–दक्ष-नितम्बे।

(१०) ॐ प्रमथनाय नमः ॐ रात्र्यै कलायै नमः–वाम-नितम्बे।

(११) ॐ सर्व-भूत-दमनाय नमः ॐ भ्रामिण्यै कलायै नमः–कट्याम।

(१२) ॐ मन नमः ॐ मोहिन्यै नमः–दक्ष-पार्श्वे।

(१३) ॐ उन्मनाय नमः ॐ जरायै नमः–वाम-पार्श्वे।

५. सद्योजात-कलाएँ–सद्योजात मूति की सिद्धि आदि ८ कलाओं का न्यास क्रमशः दोनों पार्श्व, दोनों स्तन, नासिका, मस्तक और दोनों बाहु में किया जाता है–

(१) ॐ सद्योजातं प्रपद्ययामि ॐ सिद्ध्यै कलायै नमः–दक्ष-पार्श्वे।

(२) ॐ सद्यो-जाताय वै नमः ॐ वृद्ध्यै कलायै नमः–वाम-पार्श्वे।

(३) ॐ भवे ॐ मत्यै कलायै नमः–दक्ष-स्तने।

(४) ॐ अभवे ॐ लक्ष्म्यै कलायै नमः–वाम-स्तने।

(५) ॐ अनादि-भवे ॐ मेधायै कलायै नमः–नासिकायाम्।

(६) ॐ भजस्व मां ॐ प्रज्ञायै कलायै नमः–मस्तके।

(७) ॐ भव ॐ भद्रायै कलायै नमः–दक्षिण बाहौ।

(८) ॐ उद्भवाय नमः ॐ सुधायै कलायै नमः–वाम बाहौ।

ऋक्-न्यास–तदनन्तर ईशाना ऋचाओं का न्यास पाँचों अँगुलियों में करे। यथा–

(१) ॐ ईशानः सर्व-विद्यानामीश्वरः सर्व-भूतानां ब्रह्माधिपतिर्बह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवोऽस्तु मेऽस्तु सदा-शिवोम् (अँगूठे में)।

(२) ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महा-देवाय धीमहि तन्नो रुद्र प्रचोदयात् (तर्जनी में)।

(३) ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर-घोर-तरेभ्यः सर्वतः सर्व-सर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्र-रूपेभ्यः – (मध्यमा में)।

(४) **ॐ वाम-देवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कल-विकरणाय नमो बल-विकरणाय नमो बल-प्रमथनाय नमः सर्व-भूत-दमनाय नमो मनोन्मनाय नमः** (अनामा में)।

(५) **ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः। भवेऽभवेऽनादि-भवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः** (कनिष्ठा में)।

फिर उक्त पाँच मन्त्रों से मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य और पाद-देश में न्यास करे।

अङ्ग-न्यास– (1) **ऐं क्लीं ब्लूं श्रीं शः सर्वज्ञाय**–हृदयाय नमः।

(2) **अमृते तेजो ज्वाला-मालिने तृप्तये शिखि-ब्रह्मणे**–शिरसे स्वाहा।

(3) **ज्वलित-शिखि-शिखाय अनादि-बोधाय**–शिखायै वषट्।

(4) **वज्रिणे वज्र-हस्ताय स्वतन्त्राय**–कवचाय हुम्।

(5) **शौं चौं हौं परतोऽलुप्त-शक्तये**–नेत्र-त्रयाय वौषट्।

(6) **श्लां शूं हूं फट् अनन्त-शक्तये**–अस्त्राय फट्।

ध्यान—'न्यास' जाल के बाद 'ध्यान' करे। यथा—

मुक्ता-पीत-पयोद-मौक्तिक-जवा-वर्णोर्मुखैः पञ्चभिः।
त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दु-मुकुटं पूर्णेन्दु-कोटि-प्रभम्॥
शूलं टङ्क-कृपाण-वज्र-दहनान्नागेन्द्र-घण्टांकुशान्।
पाशं भीतिं-हरं दधानममिताकल्पाज्ज्वलाङ्गं भजे॥

अर्थात् भगवान् शिव के पाँच मुख हैं। इन मुखों का वर्ण क्रमशः श्वेत, पीत, नीला, धवल और लाल है। प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं। शरीर की कान्ति कोटि-कोटि चन्द्र कान्ति-वत् है। उनके दस हाथ हैं, जिनमें वे शूल, टङ्क, तलवार, वज्र, अग्नि, सर्प, घण्टा, अंकुश, पाश एवं अभय-मुद्रा धारण किए हुए हैं। उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग उज्ज्वल और कमनीय हैं। मैं ऐसे भगवान् शिव की वन्दना करता हूँ।*

इस प्रकार ध्यान कर **मानसिक उपचारों से पूजन** करे। **विशेष अर्घ्य** स्थापित करे। विशेष बात यह है कि **शिव** और **सूर्य** की पूजा में **शङ्ख का उपयोग वर्जित** है। **'शैव-पीठ'** की स्थापना-पूजा कर पुनः ध्यान करे। आवाहन से **पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान** पर्यन्त कर्म सम्पादित कर **आवरण-पूजा** प्रारम्भ करे।

ईशान कोण में — '**ॐ ईशानाय नमः**' से ईशान की। पूर्व में – '**ॐ तत्पुरुषाय नमः**' से तत्पुरुष की। दक्षिण में – '**ॐ अघोराय नमः**' से अघोर की, उत्तर में–'**ॐ वामदेवाय नमः**' से वामदेव की तथा पश्चिम में–'**ॐ सद्योजाताय नमः**' से सद्योजात की पूजा करे।

ईशानादि कोणों में – '**ॐ निवृत्यै नमः, ॐ प्रतिष्ठायै नमः, ॐ विद्यायै नमः, ॐ शान्त्यै नमः, ॐ शान्त्यातीतायै**' से निवृत्ति आदि का पूजन-तर्पण करे।

अष्ट-दल में अनन्त आदि का **पूजन-तर्पण** करे। यथा – पूर्वादि क्रम से '**ॐ अनन्ताय नमः, ॐ सूक्ष्माय नमः, ॐ शिवोत्तमाय नमः, ॐ एक-रुद्राय नमः, ॐ एक-नेत्राय नमः, ॐ त्रिमूर्तये नमः, ॐ श्रीकण्ठाय नमः** एवं **ॐ शिखण्डिने नमः**'।

तब उसके बाहर **अष्ट-दल-कमल** में उत्तरादि-क्रम से उमादि का **पूजन-तर्पण** करे। यथा—

---

* **टङ्क** को कई विद्वान् इसे पत्थर तोड़नेवाली 'छेनी' कहते हैं। राघव भट्ट के अनुसार '**टङ्क**'—परशु या फरसा है।

'ॐ उमायै नमः, ॐ चण्डेश्वराय नमः, ॐ नन्दिने नमः, ॐ महा-कालाय नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ वृषाय नमः, ॐ भृङ्गरीटाय नमः, ॐ स्कन्दाय नमः।'

उसके बाहर पूर्वादि-क्रम से '**इन्द्र**' आदि दिग्पालों और उनके '**वज्र**' आदि आयुधों का पूजन कर धूपादि-विसर्जनान्त कर्म पूर्ण करे।

उक्त मन्त्र के '**पुरश्चरण**' के लिए पाँच लाख जप कर मधु-युक्त करवीर पुष्पों से 'जप' का दशांश अर्थात् ५० हजार '**हवन**' करे।

(९) मृत्युञ्जय-मन्त्र

तार (**ॐ**), कर्ण ('**ऊ**'-**कार**) तथा इन्दु (**अनुस्वार**) से युक्त स्थिरा अर्थात् '**ज**'-**कार** (इस तरह बना – जूं), एवं विसर्ग-युक्त भृगु ('**स**'-**कार**) अर्थात् '**सः**'।

'**ॐ जूं सः**'–यह मृत्युञ्जय का त्र्यक्षर मन्त्र है।

पूजा-विधि—सर्व-देवोपयोगी पद्धति से प्रातः-कृत्यादि कर्म कर '**शैव-पीठ**' की स्थापना करे। इसके बाद '**ऋष्यादि-न्यास**' करे। यथा—**ॐ कहोल ऋषये नमः** शिरसि। **देवी गायत्री-छन्दसे नमः** मुखे। **मृत्युञ्जयाय देवतायै नमः** हृदि।

'**कर-न्यास**' और '**षडङ्ग-न्यास**'—षड्-दीर्घ-युक्त '**स**'-कार अर्थात् (**सां, सीं, सूं, सैं, सौं, सः**) से '**कर-न्यास**' और '**षडङ्ग-न्यास**' करे। यथा–**सां अंगुष्ठाभ्याम् नमः। सां हृदयाय नमः** आदि।

'**न्यास**' के बाद '**ध्यान**' करे। यथा—

चन्द्रार्काग्नि-विलोचनं स्मित-मुखं पद्म-द्वयान्तः स्थितम्।
मुद्रा-पाश-मृगाक्ष-सूत्र-विलसत्-पाणिं हिमांशु-प्रभम्॥
कोटीरेन्दु-गलत्-सुधाप्लुत-तनुं हारादि-भूषोज्ज्वलम्।
कान्त्या विश्व-विमोहनं पशु-पतिं मृत्युञ्जयं भावयेत्॥

अर्थात् कमल-द्वय पर आसीन, चन्द्र-सूर्य और अग्नि-रूप त्रिलोचन एवं मुद्रा-पाश-मृग तथा अक्ष-माल से शोभित पाणि, स्मित-वदन, हार आदि आभूषणों से अलंकृत तथा कोटि-कोटि चन्द्रों से स्रवित सुधा-सीकरों से आप्लावित अपने चन्द्र-धवल शरीर की शुभ्र कान्ति से विश्व को मोहित करनेवाले पशु-पति भगवान् मृत्युञ्जय की मैं भावना (ध्यान) करता हूँ।

इस प्रकार '**ध्यान**' कर '**मानसिक पूजन**' करे। '**अर्घ्य-स्थापन**' एवं '**पीठ-स्थापन**'-**पूजन** के बाद आवाहन से **पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान**-पर्यन्त कर्म सम्पादित कर '**आवरण-पूजन**' करे। यथा—

केशरों में आग्नेय आदि कोणों में—'**सां हृदयाय नमः**' आदि से '**षडङ्ग-पूजन**' करे। उसके बाहर '**इन्द्र**' आदि दिग्पालों तथा उनके '**वज्र**'-आदि आयुधों की पूजा करे। फिर 'धूप'-आदि से विसर्जनान्त कर्म कर पूजा पूर्ण करे।

'**पुरश्चरण**' हेतु तीन लाख 'जप' कर दूध और घृत-मिश्रित गुडूची लता के टुकड़ों से 'जप' का दशांश '**हवन**' करे।

(१०) श्री शिव-पञ्चाक्षरी-मन्त्र

हृदय (**नमः**) के बाद अक्षि (**इ**) सहित '**व**'-**कार** के बादवाला वर्ण (**श**) अर्थात् (**शि**), उसके बाद अनन्त (**अ**) सहित लान्त अर्थात् (**व**) तथा मरुत् अर्थात् (**य**)। इस तरह मन्त्र बना–'**नमः शिवाय**'। यदि इसके आदि में तार (**ॐ**) लगाया जाए, तो षडक्षर मन्त्र—'**ॐ नमः शिवाय**।'

इनकी **'पूजा-विधि'** यह है कि प्रातः-कृत्यादि के बाद शिव-मन्त्रोक्त-पीठ-न्यास तक कर्म कर **'ऋष्यादि-न्यास'** करे। यथा–'**वाम-देवाय ऋषये नमः** शिरसि। **पंक्ति-छन्दसे नमः** मुखे। **ईशान-देवतायै नमः** हृदि।'

मूर्ति-न्यास–तर्जनी, मध्यमा, कनिष्ठा, अनामिका एवं अंगुष्ठ में मन्त्र के एक-एक वर्ण की योजना करते हुए तत्पुरुष आदि पञ्च-मूर्तियों का न्यास करे। यथा–

नं तत्पुरुषाय नमः – तर्जन्योः। **मं अघोराय नमः** – मध्यमयोः। **शिं सद्योजाताय नमः** – कनिष्ठयोः। **वां वाम-देवाय नमः**–अनामिकायोः। **यं ईशानाय नमः**–अँगुष्ठयोः।

इन्हीं मन्त्रों से क्रमशः मुख, हृदय, पाद-द्वय, गुह्य एवं मूर्ध्नि में पुनः प्राक्, याम्य, वारुण, उदीच्य और मध्य वक्त्रों में 'न्यास' करे। यथा–

नं तत्पुरुषाय नमः–मुखे। **मं अघोराय नमः**–हृदि। **शिं सद्योजाताय नमः**–पादयोः। **वां वामदेवाय नमः**–गुह्ये। **यं ईशानाय नमः**–मूर्ध्नि।

नं तत्पुरुषाय नमः – पूर्व-मुखे। **मं अघोराय नमः** – दक्षिण-मुखे। **शिं सद्योजाताय नमः**–पश्चिम-मुखे। **वां वाम-देवाय नमः**–उत्तरे-मुखे। **यं ईशानाय नमः**–ऊर्ध्व-मुखे।

इसके बाद मन्त्र के एक-एक वर्ण से **'कर-न्यास'** और **'षडङ्ग-न्यास'** करे। यथा–

कर-न्यास – ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। मं मध्यमाभ्यां वषट्। शिं अनामिकाभ्यां हुं। वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास–ॐ हृदयाय नमः। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुं। वां नेत्र-त्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

गोलक-न्यास–'कर-न्यास' और 'षडङ्ग-न्यास' के बाद **'गोलक-न्यास'** करे। इस न्यास में मन्त्र के एक-एक वर्ण का न्यास शरीर के विभिन्न अङ्गों में किया जाता है। इसमें मन्त्र के प्रत्येक वर्ण की नौ आवृत्तियाँ होती हैं—

प्रथम आवृत्ति – **ॐ नमः** हृदि। **नं नमः** मुखे। **मं नमः शिं नमः** अंसयोः। **वां नमः यं नमः** ऊर्वोः (दोनों ऊरु)।

द्वितीय आवृत्ति – **ॐ नमः** कण्ठे। **नं नमः** नाभौ। **मं नमः शिं नमः** पार्श्वयोः। **वां नमः** पृष्ठे। **यं नमः** हृदि।

तृतीय आवृत्ति – **ॐ नमः** मूर्ध्नि। **नं नमः** मुखे। **मं नमः शिं नमः** नेत्रयोः। **वां नमः यं नमः** नासिकयोः।

चतुर्थ आवृत्ति –**ॐ नं नमः** हस्तांगुल्यग्रेषु। **ॐ मं नमः** हस्तांगुलि-मूलेषु। **ॐ शिं नमः** मणि-बन्धयो। **ॐ वां नमः** कूर्परयोः। **ॐ यं नमः** बाहु-मूलयोः।

पञ्चम आवृत्ति –**ॐ नं नमः** पादांगुल्यग्रेषु। **मं नमः** पादांगुलि-मूलेषु। **शिं नमः** गुल्फयोः। **वां नमः** जानुनोः। **यं नमः** जङ्घयोः।

षष्ठम आवृत्ति – **ॐ नमः** शिरसि। **नं नमः** मुखे। **मं नमः** हृदि। **शिं नमः** जठरे। **वां नमः** उरुयोः। **यं नमः** पादयोः।

सप्तम आवृत्ति – **ॐ नमः** हृदि। **नं नमः** मुखे। **मं नमः** टङ्के। **शिं नमः** मृगे। **वां नमः** अभये। **यं नमः** वरे।*

---

* 'न्यास' की उक्त आवृत्ति टङ्क, मृग, अभय और वर-मुद्राओं के प्रदर्शन के साथ की जाती है। **'टङ्क'** का अर्थ आचार्य-पाद और राघव-भट्ट ने **'परशु'** बताया है। इसके लक्षण इस प्रकार हैं–**टङ्क**–दोनों हाथों के कर-तल को मिलाकर अँगुलियों को तिरछी फैलाने से फरसे के आकार की **'परशु'-मुद्रा** बनती है। **मृग**–अँगूठे और अनामिका को मिलाकर मध्यमा के अग्र-भाग से युक्त करे और शेष दोनों अँगुलियों को ऊँची रखें, तो **'मृग'-मुद्रा** बनती है। **अभय**–बाएँ हाथ को ऊर्ध्व-मुख फैला देने से **'अभय'-मुद्रा** बनती है। **वर**–अधो-स्थित दाहिने हाथ को आगे पसारने से **'वर-मुद्रा'** बनती है।

अष्टम आवृत्ति– **ॐ नमः** मुखे। **नं नमः** अंसयोः। **मं नमः** हृदि। **शिं नमः** पादयोः। **वां** उरु-द्वये। **यं नमः** कुक्षौ।

नवम आवृत्ति –**ॐ नं तत्पुरुषाय नमः** मूर्ध्नि। **ॐ मं अघोराय नमः** भाले। **ॐ शिं सद्योजाताय नमः** उदरे। **ॐ वां वाम-देवाय नमः** आस्ये। **ॐ यं ईशानाय नमः** हृदि।

व्यापक-न्यास–'व्यापक-न्यास' का मन्त्र इस प्रकार है–

ॐ नमोऽस्तु स्थाणु-भूताय, ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने। चतुर्मूर्तिर्वपुश्छाया, भासिताङ्गाय शम्भवे॥

न्यास-जाल सम्पादन के बाद '**ध्यान**' करे। यथा–

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजत-गिरि-निभं चारु-चन्द्रावतंसम्।
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशु-मृग-वराभीति-हस्तं प्रसन्नम्॥
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममर-गणैर्व्याघ्र-कृत्तिं वसानम्।
विश्वाद्यं विश्व-बीजं निखिल-भय-हरं पञ्च-वक्त्रं त्रि-नेत्रम्॥

अर्थात् चाँदी के पर्वत जैसा उज्ज्वल-वर्ण, मस्तक पर अर्द्ध-चन्द्र और रत्नों की राशि जैसी आभावाला शरीर, चारों हाथों में परशु, मृग, वर-मुद्रा और अभय-मुद्रा। प्रसन्न-मुख, कमल के ऊपर विराजमान, बाघ की खाल का वस्त्र। चारों ओर से देव-गण वन्दना कर रहे हैं। संसार के आदि एवं कारण-भूत भगवान् शिव समस्त प्रकार के भय को नष्ट कर देते हैं। उनके पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुख में तीन नेत्र। इस प्रकार के भगवान् महेश्वर का मैं निरन्तर ध्यान करता हूँ।

उक्त प्रकार ध्यान करके '**मानस-पूजन**', '**अर्घ्य-स्थापन**' करे। शैव-पीठ-पूजा, पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान तक के सभी कर्म कर '**आवरण-पूजा**' करे। यथा–

कर्णिका में ईशान आदि पञ्च-मूर्तियों का अर्चन करे– **ॐ ईशानाय नमः** (ईशान कोण)। **ॐ तत्पुरुषाय नमः** (पूर्व)। **ॐ अघोराय नमः** (दक्षिण)। **ॐ वाम-देवाय नमः** (पश्चिम)। **ॐ सद्योजाताय नमः** (उत्तरे)।

केशरों में–**ॐ निवृत्यै नमः** (ईशान)। **ॐ प्रतिष्ठायै नमः** (पूर्व)। **ॐ विद्यायै नमः** (दक्षिण)। **ॐ शान्त्यै नमः** (पश्चिमे)। **ॐ शान्त्यातीतायै नमः** (उत्तरे)।

आग्नेय आदि कोणों में, मध्य में और दिशाओं में षडङ्ग-पूजन करे। यथा–**ॐ हृदयाय नमः। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुम। वां नेत्र-त्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।**

अष्ट-दलों में पूर्वादि-क्रम से– '**ॐ अनन्ताय नमः, ॐ सूक्ष्माय नमः। ॐ शिवोत्तमाय नमः। ॐ एक-नेत्राय नमः। ॐ एक-रुद्राय नमः। ॐ त्रि-मूर्तये नमः। ॐ श्रीकण्ठाय नमः। ॐ शिखण्डिने नमः।**'

अष्ट-दलाग्रों में उत्तरादि क्रम से वामावर्त से– **ॐ उमायै नमः। ॐ चण्डेश्वराय नमः। ॐ नन्दिने नमः। ॐ महा-बलाय नमः। ॐ गणेशाय नमः। ॐ वृषाय नमः। ॐ भृङ्गरीटाय नमः। ॐ स्कन्दाय नमः।**

भू-पुर में '**इन्द्रादि**' दिग्-पालों और उनके '**वज्र**' आदि आयुधों की पूजा कर धूप-आदि से विसर्जन तक के कर्म सम्पादित करे।

उक्त मन्त्र के '**पुरश्चरण**' में ३६ लाख 'जप' कर ३६ हजार '**हवन**' (घृत-युक्त-पायसान्न से) करे।

(११) भगवान् बटुक-भैरव-मन्त्र

मन्त्र–'**ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं।**'

भगवान् बटुक भैरव का यह इक्कीस अक्षरों का मन्त्र है।

पूजा-विधि—प्रातः-कृत्यादि से 'प्राणायाम' तक के कर्म सम्पादित कर अपने शरीर में **'पीठ-न्यास'** के अन्तर्गत **'ॐ धर्माय नमः'** से **'ॐ अनैश्वार्य नमः'** तक न्यास करने के बाद **'ऋष्यादि न्यास'** करे। यथा–

श्री वृहदारण्यक-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। बटुक-भैरव-देवतायै नमः हृदि।

मूर्ति-न्यास–क्रों वों ईशानाय नमः अंगुष्ठाभ्याम्। **क्रें वें तत्पुरुषाय नमः** तर्जन्योः। **क्रूं वूं अघोराय नमः** मध्यमयोः। **क्रिं विं वामदेवाय नमः** अनामिकयोः। **क्रं वं सद्योजाताय नमः** कनिष्ठयोः।

फिर इन्हीं अँगुलियों और इन्हीं बीजों से मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य एवं पाद-द्वय में इन मूर्तियों का न्यास करे—

क्रों वों ईशानाय नमः–शिरसि (अँगूठे से)। **क्रें वें तत्पुरुषाय नमः**–मुखे (तर्जनी से)। **क्रूं वूं अघोराय नमः**–हृदि (मध्यमा से)। **क्रिं विं वाम-देवाय नमः**–गुह्ये (अनामा से)। **क्रं वं सद्योजाताय नमः**–पादयो (कनिष्ठा से)।

इसी क्रम से ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर मुखों में भी इन मूर्तियों का न्यास करे। यथा–

क्रों वों ईशानाय नमः–ऊर्ध्व-मुखे (अँगूठे से)। **क्रें वें तत्पुरुषाय नमः**–पूर्व-मुखे (तर्जनी से)। **क्रूं वूं अघोराय नमः**–दक्षिण-मुखे (मध्यमा से)। **क्रिं विं वामदेवाय नमः**–पश्चिम-मुखे (अनामा से)। **क्रं वं सद्योजाताय नमः**–उत्तर-मुखे (कनिष्ठा से)।

इसके बाद क्रम से **'कर-न्यास'** और **'अङ्ग-न्यास'** करे। यथा–

कर-न्यास–**ॐ क्रां वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्रीं वीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ क्रूं वूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ क्रैं वैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ क्रौं वौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ क्रः वः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।**

अङ्ग-न्यास–**ॐ क्रां वां हृदयाय नमः। ॐ क्रीं वीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्रूं वूं शिखायै वषट्। ॐ क्रैं वैं कवचाय हुम्। ॐ क्रौं वौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ क्रः वः अस्त्राय फट्।**

इसके बाद **'ध्यान'** करे। **बटुक-भैरव** के ध्यान तीन प्रकार के हैं – **(१) सात्विक, (२) राजस** और **(३) तामस।**

'सात्विक' ध्यान—

वन्दे बालं स्फटिक-सदृशं कुण्डलोद्भासि-वक्त्रम्।
दिव्याकल्पैर्नव-मणि-मयैः किङ्कणी-नूपुराढ्यैः॥
दीप्ताकारं विशद-वदनं सु-प्रसन्नं त्रि-नेत्रम्।
हस्ताब्जाभ्यां बटुकमनिशं शूल-दण्डौ दधानम्॥

अर्थात् स्फटिक-वत् शुभ्र-वर्ण, कुण्डलों से दमकता हुआ मुख, रत्न-खचित किङ्कणी और नू-पुर से सुशोभित, सु-प्रसन्न चित्त एवं कर-कमलों में शूल एवं दण्डधारी बाल-रूप भगवान् बटुक की मैं वन्दना करता हूँ।

'राजस' ध्यान–

उद्यद्-भास्कर-सन्निभं त्रि-नयनं रक्ताङ्ग-राग-स्रजम्।
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः॥
नील-ग्रीवमुदार-भूषण-शतं शीतांशु-चूडोज्ज्वलम्।
बन्धूकारुण-वाससं भय-हरं देवं सदा भावये॥

अर्थात् उदीयमान सूर्य के समान रक्ताभ, त्रिनेत्र, लाल अङ्गराग और रक्त पुष्प-माला से सुशोभित, कर-कमलों में वर-मुद्रा, नर-कपाल, अभय-मुद्रा एवं शूल धारण किए हुए, स्मित-वदन, शत-शत आभूषणों से अलंकृत, नील-कण्ठ एवं अर्द्ध-चन्द्र-मौलि तथा भक्तों के भय को दूर करनेवाले भगवान् बटुक भैरव का मैं ध्यान करता हूँ।

'तामस' ध्यान–

ध्यायेन्नीलाद्रि-कान्तिं शशि-सकल-धरं मुण्ड-मालं महेशम्।
दिग्-वस्त्रं पिङ्गलाक्षं डमरुमथ सृणिं खड्ग-शूलाभयानि॥
नागं घण्टां कपालं कर-सरसिरुहैर्विभ्रतं भीम-दंष्ट्रम्।
सर्पाकल्पं त्रि-नेत्रं मणि-मय-विलसत्-किङ्किणी-नूपुराढ्यम्॥

अर्थात् नील-पर्वत-वत् नीलाभ, अर्द्ध-चन्द्र एवं मुण्ड-मालाधारी, पिङ्गल-नयन, दिगम्बर तथा डमरू, सृणि (अंकुश), खड्ग, शूल, अभय-मुद्रा, सर्प, घण्टा, नर-कपालधारी अष्ट-भुज, मणि-खचित करधनी और नूपुर एवं सर्प-कल्प से सुशोभित त्रि-नयन भगवान् बटुक का ध्यान करना चाहिए।

विविध ध्यान-फल – **'सात्विक ध्यान'** से अप-मृत्यु का निवारण, आयु-आरोग्य-वृद्धि एवं मुक्ति। **'राजस ध्यान'** से धर्म-अर्थ तथा काम की सिद्धि। **'तामस ध्यान'** से शत्रु-बाधा एवं कृत्या का निवारण तथा प्रेत-बाधा एवं रोग-शान्ति।

पूजन-यन्त्र–त्रिकोण, उसके बाहर षट्-कोण, अष्ट-दल-कमल, कमलों में मातृका-यन्त्र-वत् मातृकाएँ तथा उसके बाहर चतुर्द्वार। धर्माऽधर्म क्लृप्त पीठ।*

पूजन-विधि–मूल-मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर पुनः ध्यान करे। आवाहनादि-क्रम इस प्रकार है–

मूल-मन्त्र-सहित सद्योजात-मन्त्र से आह्वान। **मूल-मन्त्र-सहित वामदेव-मन्त्र** से स्थापन। **मूल-मन्त्र** से सानिध्यीकरण। **अघोर-मन्त्र** से सन्निरोधन। **तत्पुरुष-मन्त्र** से योनि-मुद्रा-प्रदर्शन। **ईशान-मन्त्र** से वन्दना।

आवरण-पूजन–कर्णिकाओं में ईशान कोण तथा चारों दिशाओं में **'न्यास-क्रम'** से ईशान आदि **पञ्च मूर्तियों की पूजा** करे। यथा–

प्रथम आवरण—ईशान में **ईशानाय नमः**। पूर्व में **तत्पुरुषाय नमः**। दक्षिण में **अघोराय नमः**। पश्चिम में **वाम-देवाय नमः**। उत्तर में **सद्योजाताय नमः**।

द्वितीय आवरण—अष्ट-पद्म दलों में **असिताङ्ग** आदि **अष्ट-भैरवों का पूजन** करे। यथा–**अं असिताङ्ग-भैरवाय नमः। इं रुरु-भैरवाय नमः। उं चण्ड-भैरवाय नमः। ॠं क्रोध-भैरवाय नमः। लृं उन्मत्त-भैरवाय नमः। एं कपाली-भैरवाय नमः। ओं भीषण-भैरवाय नमः। अं संहार-भैरवाय नमः।**

तृतीय आवरण — षट्-कोणों में हृदय आदि **षडङ्गों का पूजन** तथा षट्-कोण के बाहर **डाकिनी-पुत्रों आदि का पूजन** करे। यथा–**ॐ क्रां वां हृदयाय नमः। ॐ क्रीं वीं शिरसे स्वाहा। ॐ क्रूं वूं शिखायै वषट्। ॐ क्रैं वैं कवचाय हुम्। ॐ क्रौं वौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ क्रः वः अस्त्राय फट्।**

षट्-कोण के बाहर (अष्ट-पत्रों में) पूर्व से ईशान कोण तक पूर्वादि क्रम से– **ॐ डाकिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (पूर्वे)। **ॐ राकिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (आग्नेये)। **ॐ लाकिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (दक्षिणे)। **ॐ काकिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (निर्ऋति)। **ॐ शाकिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (पश्चिमे)। **ॐ हाकिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (वायव्ये)। **ॐ देवी-पुत्रेभ्यो नमः** (उत्तरे)। **ॐ मालिनी-पुत्रेभ्यो नमः** (ईशाने)।

चतुर्थ आवरण — देवता के दक्षिण ओर–**ॐ उमा-पुत्रेभ्यो नमः**, **ॐ रुद्र-पुत्रेभ्यो नमः**। ऊर्ध्व दिशा में–**ॐ उर्ध्व-मुखी-पुत्रेभ्यो नमः**। अधो दिशा में–**ॐ अधो-मुखी-पुत्रेभ्यो नमः**।

---

* **'न तु अत्र पीठ-शक्तयः'** कहकर श्री राघव भट्ट ने बताया है कि भगवान् बटुक भैरव के **'पीठ-पूजन-क्रम'** में **'पीठ-शक्तियाँ'** नहीं हैं। अतः **धर्म-अधर्म** आदि से सिंहासन के स्तम्भों तक ही **'पीठ-पूजा'** की जाती है।

पञ्चम आवरण — अष्ट-पत्रों के बाहर – '**ॐ बटुक-रूप दिग्पालेभ्यो नमः**' से दिशाओं में **दिग्पालों का पूजन** करे। उसके बाहर पूर्व-कोण से आग्नेय-कोण तक '**ब्रह्माणी**' आदि **मातृकाओं के पुत्रों का पूजन** करे। यथा– **ॐ ब्रह्माणी-पुत्राय नमः** (पूर्व)। **ॐ माहेश्वरी-पुत्राय नमः** (ईशान)। **ॐ वैष्णवी-पुत्राय नमः** (उत्तर)। **ॐ कौमारी-पुत्राय नमः** (वायव्य)। **ॐ इन्द्राणी-पुत्राय नमः** (पश्चिम)। **ॐ महा-लक्ष्मी-पुत्राय नमः** (नैऋत्य)। **ॐ वाराही-पुत्राय नमः** (दक्षिण)। **ॐ चामुण्डा-पुत्राय नमः** (अग्नि-कोण)।

षष्ठ आवरण—उसके बाहर हेतुक आदि **दश बटुकों का पूजन** पूर्वादि दिशाओं में करे। यथा–**ॐ हेतुकाय नमः** (पूर्वे)। **ॐ त्रिपुरान्तकाय नमः** (अग्नि-कोणे)। **ॐ वेतालाय नमः** (दक्षिणे)। **ॐ वह्नि-जिह्वाय नमः** (नैऋत्य)। **ॐ कालान्तकाय नमः** (पश्चिमे)। **ॐ कपालाय नमः** (वायव्ये)। **ॐ एक-पादाय नमः** (उत्तरे)। **ॐ भीम-रूपाय नमः** (ईशाने)। **ॐ अचलाय नमः** (पूर्व-ईशान-मध्ये)। **ॐ हाटकेश्वराय नमः** (पश्चिम-निऋति-मध्ये)।

सप्तम आवरण — ईशान-आग्नेय और नैऋत्य कोणों में क्रमशः **दिव्य-अन्तरिक्ष** तथा **भूमिष्ठ योगीशों की योगिनी-सहित** पूजा करे। यथा–

ॐ योगिनी-सहिताय दिव्य–योगीशाय नमः (ईशाने)।

ॐ योगिनी-सहिताय अन्तरिक्ष-योगीशाय नमः (अग्नि-कोण)।

ॐ योगिनी-सहिताय भूमिष्ठ-योगीशाय नमः (निऋति कोण)।

'**आवरण पूजन**' के बाद धूपादि-विसर्जनान्त कर्म सम्पादित करे।

'**पुरश्चरण**'—हविष्याशी और जितेन्द्रिय होकर उक्त मन्त्र का वर्ण लक्ष अर्थात् २१ लाख जप करे। '**जप**' का दशांश घृत-मधु-शर्करा-मिश्रित तिल से '**हवन**' करे।

बलि-विधान—पहिले **गणेश** और **दुर्गा जी का पूजन** कर '**बलि**' प्रदान करे।

शालि धान्य का अन्न, घृत, लाजा-चूर्ण, शर्करा, गुड, ईख का रस, पिष्टक, शहद –ये सब मिलाकर पिण्ड बनाकर रात्रि में रक्त-चन्दन और रक्त-पुष्प-सहित '**बलि**' समर्पित करे।

अथवा सर्वाङ्ग शुद्ध और युवा छाग की बलि प्रदान करे। '**बलिदान**' के समय साधक शत्रु-पक्ष की सेना (सहायकों) को बलि के रूप में निवेदित करे। **बलि-मन्त्र** में शत्रु के नाम का उल्लेख करके निम्न मन्त्र से '**बलि**' प्रदान करे–'**शत्रु-पक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिने-दिने भक्षय स्व-गणैः सार्द्धं सारमेय-समन्वितम्।**'

नित्य, नैमित्तिक '**बलि**'-**प्रदान की सरल एवं पूर्ण विधि** चण्डी कार्यालय द्वारा प्रकाशित '**सविधि आपदुद्धारक बटुक भैरव**' (मूल्य ६ रु०) में बताई गई है। अनेकानेक साधकों ने इस विधि से '**बलि**'-प्रदान कर **भगवान् बटुक भैरव** की कृपा प्राप्त की है।

(१२) सूर्य-मन्त्र

आकाश (**ह**), अग्नि (**र**), पवन (**य**), सात्यन्त (**औ**), अर्घीश (**उ**) तथा **बिन्दु** से बना एवं **विश्व-बीज** से पुटित **मार्तण्ड-भैरव** नामक यह मन्त्र सभी कामनाओं को पूरा करनेवाला है।

विश्व-बीज–टान्त (**ठ**), दहन (**र**), नेत्र (**इ**) तथा इन्दु (**अनुस्वार**)–अर्थात् '**ठ्रिं**'। मार्तण्ड-भैरव-बीज–'**ठ्रिं ह्रयूं**'।

पूजा-विधि—प्रातः-कृत्य से '**पीठ-पूजा**' तक कर्म सम्पादित कर '**पीठ-न्यास**' करे। '**पीठ-न्यास**' की

विशेष विधि निम्नानुसार है– हृदय में कल्पित-पीठ की पूर्व आदि दिशाओं में और मध्य में क्रमशः **प्रभूत, विमल, सार, समाराध्य, परम-सुख** का न्यास करे। यथा–

ॐ प्रभुताय नमः पूर्वे। **ॐ विमलाय नमः** दक्षिणे। **ॐ साराय नमः** पश्चिमे। **ॐ समाराध्याय नमः** उत्तरे। **ॐ परम-सुखाय नमः** पीठ-मध्ये।

इन सब का **'न्यास'** कर **सामान्य-पूजा-विधि** के अनुसार आधार-शक्ति से **'सूर्य-मण्डल'** तक **पीठ-देवताओं** का न्यास करे। केशरों में और मध्य में **सौर पीठ-शक्तियों का न्यास** करे। यथा–'**वां दीप्तायै नमः। वीं सूक्ष्मायै नमः। वूं जयायै नमः। वें भद्रायै नमः। वैं विभूत्यै नमः। वों विमलायै नमः। वौं अमोघायै नमः। वं विद्युतायै नमः।** मध्ये **वः सर्वतोमुख्यै नमः।**

पीठ-मन्त्र—ॐ ब्रह्मा-विष्णु-शिवात्मकाय सौराय योग-पीठात्मने नमः–इस मन्त्र से **जगत्-पति सूर्य** का **'पीठ-न्यास'** करे। फिर **'ऋष्यादि-न्यास'** करे।*

मूर्ति-न्यास—पञ्च ह्रस्व-स्वरों से युक्त बीज-पूर्वक सूर्य की पाँच मूर्तियों का न्यास अंगुष्ठादि-कनिष्ठान्त-क्रम से पाँचों अँगुलियों में करे। यथा–'**ठं सूर्याय नमः** – अंगुष्ठयोः। **ठिं भास्कराय नमः**–तर्जन्योः। **ठुं भानवे नमः**–मध्यमयोः। **ठें रवये नमः** –अनामयोः। **ठों दिनकराय नमः**–कनिष्ठयोः।

फिर शिर, मुख, हृदय, गुह्य और पैरों में इन मूर्तियों का न्यास करे। यथा–'**ठं सूर्याय नमः**–शिरसि। **ठिं भास्कराय नमः**–मुखे। **ठुं भानवे नमः**–हृदि। **ठें रवये नमः**–गुह्ये। **ठों दिनकराय नमः**–पादयोः।

कर-न्यास, हृदयादि-न्यास—दीर्घ-स्वर-युक्त बीज से **'कर-न्यास'** और नेत्रान्त **हृदयादि-न्यास** करे–

'**ठ्रां**–अंगुष्ठाभ्यां नमः। **ठ्रीं** – तर्जनीभ्यां स्वाहा। **ठ्रूं** – मध्यमाभ्यां वषट्। **ठ्रैं** – अनामिकाभ्यां हुम्। **ठ्रौं** – कनिष्ठाभ्यां वौषट्।' इसी तरह **हृदयादि**—'**ठ्रां**–हृदयाय नमः। **ठ्रीं**–शिरसे स्वाहा। **ठ्रूं**–शिखायै वषट्। **ठ्रैं**–कवचाय हुम। **ठ्रौं**–नेत्र-त्रयाय वौषट्।'

व्यापक-न्यास—मूल-बीज से व्यापक-न्यास करे। **'न्यास'** के बाद **'ध्यान'** करे। यथा–

हेमाम्भोज-प्रवाल-प्रतिम-निज-रुचिं चारु-खट्वाङ्ग-पद्मौ।
चक्रं शक्तिं सपाशं सृणिमपि रुचिरामक्ष-मालां कपालम्॥
हस्ताम्भोजैः दधानं त्रि-नयन-विलसत्-वेद-वक्त्राभिरामम्।
मार्तण्डं वल्लभार्द्धं मणि-मय-मुकुटं हार-दीप्तं भजामः॥

स्वर्ण-कमल एवं प्रवाल (मूँगा)-वत् देह-कान्तिवाले, अपने हाथों में खट्वाङ्ग, पद्म, चक्र, शक्ति, पाश, सृणि, अक्ष-माला एवं नर-कपाल धारण किए हुए, त्रिनयन, चतुर्मुख, मणि-मय मुकुट एवं हार धारण किए हुए तथा अर्धाङ्ग में प्रिया-सहित भगवान् सूर्य की हम वन्दना करते हैं।

'ध्यान' करने के बाद **'मानस-पूजन'**, फिर विशेष **अर्घ्य-स्थापन**, पूर्वोक्त रीति से **'पीठ-न्यास'** कर पुनः ध्यान, आवाहनादि, पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान-पर्यन्त कर्म-सम्पादन के बाद **'आवरण-पूजन'** करे। यथा–

कर्णिका में पूर्वादि दिशाओं में ऊषा आदि की पूजा करे। यथा–'पूर्वे **ॐ उषायै नमः।**' दक्षिणे–'**ॐ प्रज्ञायै नमः।**' पश्चिमे–'**ॐ प्रभायै नमः।**' उत्तरे–'**ॐ संध्यायै नमः।**'

---

* तन्त्र-दीपनीकार ने इस मन्त्र के ऋषि, छन्द आदि का उल्लेख नहीं किया है। 'राघव भट्ट' के अनुसार इस मन्त्र के ऋषि **ब्रह्मा**, छन्द **निवृच**, बीज **हं**, शक्ति **बिन्दु** है। देखिए, 'शारदा-तिलक तन्त्र' (पटल १३, श्लोक ६७)।

पूर्व आदि दिशाओं में ही '**ॐ सूर्याय नमः। ॐ भास्कराय नमः। ॐ भानवे नमः। ॐ रवये नमः।**'

इसके बाद '**ह्रां हृदयाय नमः**' इत्यादि से पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर और ईशान में **अङ्ग-पूजन** करे।

पूर्वे–**ह्रां हृदयाय नमः**। दक्षिणे –**ह्रीं शिरसे स्वाहा**। पश्चिमे–**ह्रूं शिखायै वषट्**। उत्तरे–**ह्रैं कवचाय हुम्**। ईशाने–**ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्**।

अष्ट-दल में **आठ ग्रहों की पूजा** करे। यथा–**ॐ चन्द्राय नमः। ॐ मङ्गलाय नमः। ॐ बुधाय नमः। ॐ वृहस्पतये नमः। ॐ शुक्राय नमः। ॐ शनैश्चराय नमः। ॐ राहवे नमः। ॐ केतवे नमः।**

फिर '**इन्द्र**' आदि दिग्पालों और उनके '**वज्र**' आदि आयुधों का पूजन करे। धूपादि-विसर्जनान्त कर्म सम्पादित कर पूजा समाप्त करे।

पुरश्चरण—उक्त मन्त्र का आठ लाख '**जप**' करे। कमल-पुष्पों से '**जप**' का दशांश '**हवन**'।

(१३) अजपा-मन्त्र

अर्धेन्दुलसित वियत् (**हं**) तथा तदादि (**स**) विसर्ग के योग से बना **अजपा मन्त्र (हंसः)** कल्प-वृक्ष के समान है। इसका पूजन पूर्व-वत् '**सूर्य**'-मन्त्र के समान है। '**ऋष्यादि-न्यास**' इस प्रकार है–**ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्री गिरिजा-पतये देवतायै नमः हृदि।**

कर-न्यास—**हसां** अंगुष्ठाभ्याम् नमः। **हसीं** तर्जनीभ्यां स्वाहा। **हसूं** मध्यमाभ्यां वषट्। **हसैं** अनामिकाभ्यां हुम्। **हसौं** कनिष्ठाभ्यां वौषट्। **हसः** करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार '**हृदयादि-न्यास**' कर '**ध्यान**' करे। यथा–

उद्यद्-भानु-स्फुरित-तडिदाकारमर्द्धाम्बिकेशम्।
पाशाभीतिं–वरद-परशुं सन्दधानं कराब्जैः॥
दिव्याकल्पैः नव-मणि-मयैः शोभितं विश्व-मूलम्।
सौम्याग्नेयं वपुरवतु वः चन्द्र-चूड़ः त्रिनेत्रः॥

अर्थात् उदीयमान सूर्य और दमकती हुई बिजली के समान देह-कान्ति, कर-कमलों में पाश, अभय-मुद्रा, वर-मुद्रा एवं परशुधारी, मणि-खचित आभूषणों से अलंकृत, सौम्य अग्नि-वत् त्रिनेत्र, चन्द्र-मौलि संसार के आधार-भूत चन्द्र-चूड अम्बिकेश हमारी रक्षा करे।

इस प्रकार ध्यान कर अर्घ्य-स्थापन, पञ्च-पुष्पाञ्जलि-पर्यन्त कर्म कर '**आवरण-पूजन**' करे। अग्नि-कोण, नैऋत्य, वायव्य-ईशान, मध्य तथा दिशाओं में षडङ्ग पूजन कर पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर में क्रमशः–'**ॐ ऋताय नमः, ॐ वसवे नमः, ॐ नराय नमः, ॐ वराय नमः**' से पूजन करे। विदिशाओं में ऋतजा आदि का पूजन करे। यथा –(अग्नि-कोण में) **ॐ ऋतजायै नमः**, (नैऋत्य में) **ॐ गोजायै नमः**, (वायव्य में) **ॐ अब्जायै नमः** और (ईशान में) **ॐ अजिरायै नमः**। बाहर '**इन्द्र**'-आदि दिग्पालों और उनके '**वज्र**'-आदि आयुधों का पूजन करे। '**पुरश्चरण**' हेतु बारह लाख 'जप' और घृत-युक्त पायस से जप का दशांश (एक लाख बीस हजार) '**हवन**' करे।

(१४) भगवती भुवनेश्वरी

मुनि-गण जिन्हें प्रकृति, आद्या, त्रि-शक्ति, शिवा एवं अन्न-पूर्णा तथा अन्य जन दुर्गा, नित्या, त्वरिता कहते हैं, मैं उन्हीं सनातनी भुवनेश्वरी की वन्दना करता हूँ, जिनके मन्त्र को जानकर ब्रह्मा आदि ने भी परम-गति-रूपी श्री की प्राप्ति की थी।

मन्त्रोद्धार—नकुलीश ('**ह**'-कार), अग्नि ('**र**'-कार), वाम-नेत्र ('**इ**'-कार) तथा अर्धेन्दु (**बिन्दु-अनुस्वार**) के संयोग से निष्पन्न उनके बीज-मन्त्र (**ह्रीं**) का जप सिद्धि-कांक्षी जन किया करते हैं।

'दक्षिणा-मूर्ति-संहिता' में '**भुवनेश्वरी**'-पद का अर्थ निरूपित करते हुए कहा गया है–'**ह**'**-कार** आकाश-बीज है, जिसमें कैलाश आदि दिव्य-लोक प्रतिष्ठित हैं। '**र**'**-कार** अग्नि-बीज है, जिससे स्वर्ण आदि तैजस वस्तुओं की निष्पत्ति हुई है। इन तैजस पदार्थों से भू-मण्डल के लोक प्रतिष्ठित हैं। '**ई**'**-कार** पाताल आदि लोकों में व्याप्त है। '**ई**'**-कार** ने शेष-नाग के रूप में भू-मण्डल को धारण कर रखा है। इस तरह '**ह्रीं**'**-कार**-रूपिणी **भगवती भुवनेश्वरी** स्वर्ग-मृत्यु एवं पाताल–इन तीनों लोकों की स्वामिनी हैं।

'तन्त्रान्तर' में कहा गया है कि '**ह**'**-कार** आकाश का अभिव्यञ्जक है और '**तूर्य-स्वर**' अर्थात् '**ई**'**-कार** से '**वायु**' की उत्पत्ति हुई है। इन दोनों वर्णों अर्थात् '**ह**'**-कार** और '**इ**'**-कार** का संयोग होने पर (अर्थात् आकाश में वायु का विक्षोभ होने पर) **अग्नि** के अभिव्यञ्जक '**र**'**-कार** की अभिव्यक्ति होती है। '**र**'**-कार** और '**ई**'**-कार** के संयोग से अर्थात् **अग्नि** और **वायु** के परस्पर संघात से '**पृथिवी**' की निष्पत्ति होती है। (परमाणु-रूपा '**पृथिवी**' के दृढ़ीकरण अथवा संधारण के लिए जल आवश्यक है।) **अर्ध-माया** अर्थात् **अर्घ-चन्द्र** द्रव-मय है, **जल-रूप** है। **अर्ध-माया**-रूपी **चन्द्र-बिन्दु** से टपकनेवाले अमृत (जल) से यह जगत्-त्रय को आप्लावित करती हैं। अतएव वे द्रव-रूपी भी हैं। इस तरह ब्रह्माण्ड की अधि-नायिका होने के कारण वे भुवनों की ईश्वरी **भुवनेश्वरी** हैं।

'भुवनेश्वरी परिजात' में कहा गया है— '**माया**'-बीज से युक्त मन्त्र की शीघ्र ही सिद्धि होती है। माया-बीज (अर्थात् '**ह्रीं**') से मन्त्रों में प्राणों और चैतन्य का सञ्चार होता है।

भुवनेश्वरी-पूजा-पद्धति—सामान्य-पूजा-पद्धति में बताई गई विधि से **प्रातः-कृत्य** से '**पीठ-न्यास**' तक के कर्म सम्पादित कर हृदय-कमल में कल्पित पीठ के पूर्वादि केशरों में और मध्य में **पीठ-शक्तियों का न्यास** करे–

'**ॐ जयायै नमः, विजयायै नमः, अजितायै नमः, अपराजितायै नमः, नित्यायै नमः, विलासिन्यै नमः, दोग्ध्र्यै नमः, अघोरायै नमः।** मध्य में–'**मङ्गलायै नमः**'।

कर्णिका में–'**ह्रीं सर्व-शक्ति कमलासनाय नमः**' से न्यास करे।

विनियोग–ॐ भुवनेश्वरी मन्त्रस्य शक्तिः ऋषिः, गायत्री छन्दः, हकारो बीजम्, ईकारः शक्तिः, रेफः कीलकम्, भुवनेश्वरी देवता, चतुर्वर्ग सिद्ध्यर्थे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–ॐ शक्तये ऋषये नमः–शिरसि। **गायत्री-छन्दसे नमः**–मुखे। **भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः**–हृदि। **हं बीजाय नमः**–गुह्ये। **ईं शक्तये नमः**–पादयोः। **रं कीलकाय नमः**–सर्वाङ्गे।

मन्त्र-न्यास–ॐ हल्लेखायै नमः – शिरसि। **एं गगनायै नमः** – वदने। **उं रक्तायै नमः** – हृदि। **इं करालिकायै नमः**–गुह्ये। **अं महोच्छूष्मायै नमः**–पादयोः।

उक्त मन्त्रों से ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, उत्तर और पश्चिम–इन **पञ्च-मुखों में न्यास** करे।

ओं हल्लेखायै नमः–ऊर्ध्व-मुखे। **एं गगनायै नमः**–पूर्व-मुखे। **उं रक्तायै नमः**–दक्षिण-मुखे। **इं करालिकायै नमः**–उत्तर-मुखे। **अं महोच्छूष्मायै नमः**–पश्चिम-मुखे।*

---

* भूत स प्रभा – '**हल्लेखा**' आदि का ध्यान '**भूत स प्रभा**' करने का विधान है। **भूत स प्रभा** का अर्थ है पृथिवी आदि पञ्च-महा-भूतों के रङ्गों के साथ। अतएव हल्लेखा–पृथिवी-वर्ण, गगना–जल-वर्णा, रक्ता–अग्नि-वर्णा, करालिका–वायु-वर्णा और महोच्छूष्मा-आकाश-वर्णा।

इसके बाद '**कर-न्यास**' और '**षडङ्ग-न्यास**' करे। ये '**न्यास**' षड्-दीर्घ स्वर-युक्त-बीज से करने चाहिए।

कर-न्यास—**ह्रां**–अंगुष्ठाभ्याम् नमः। **ह्रीं** – तर्जनीभ्याम् स्वाहाः। **ह्रूं** –मध्यमाभ्यां वषट्। **ह्रैं**–अनामिकाभ्यां हुम्। **ह्रौं**–कनिष्ठाभ्यां वौषट्। **ह्रः**–कर-तल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि-न्यास–**ह्रां** हृदयाय नमः। **ह्रीं** शिरसे स्वाहा। **ह्रूं** शिखायै वषट्। **ह्रैं** कवचाय हुम्। **ह्रौं** नेत्र-त्रयाय वौषट्। **ह्रः** अस्त्राय फट्।

योनि-न्यास—षडङ्ग-न्यास के बाद ललाट, कपोलों आदि में **गायत्री-सहित ब्रह्मा आदि का न्यास** करे–

ॐ गायत्री-सहित-ब्रह्मणे नमः–ललाटे। **ॐ सावित्री-सहित-विष्णवे नमः**–दक्षिण-कपोले। **ॐ वागीश्वरी-सहित-महेश्वराय नमः**–वाम-कपोले। **ॐ श्री-सहित-धन-पतये नमः**–वाम-कर्णे। **ॐ रति-सहित-स्मराय नमः**–मुखे। **ॐ पुष्टि-सहित-गणपतये नमः**–दक्षिण-कर्णे। **ॐ शङ्ख-निधये नमः**–दक्षिण-गण्ड-कर्णान्तराले। **ॐ पद्म-निधये नमः**–वाम-गण्ड-कर्णान्तराले। **ॐ भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः**–मुखे।

'शारदा-तिलक तन्त्र' के अनुसार इसी प्रकार **कण्ठ-मूल, दक्ष-स्तन, वाम-स्तन, वामांश, हृदय, दक्षिणांश, दक्ष-पार्श्व, वाम-पार्श्व** और **नाभि** में '**न्यास**' करे।

मातृका-न्यास—मन्त्र-न्यास के बाद ललाट-वामांश आदि में **ब्राह्मी आदि अष्ट-मातृकाओं का न्यास** करे–

'**ॐ ब्राह्मयै नमः**–भाले। **ॐ माहेश्वर्यै नमः**–वामांशे। **ॐ कौमार्यै नमः**–वाम-पार्श्वे। **ॐ वैष्णव्यै नमः**–जठरे। **ॐ वाराह्यै नमः**–दक्षिण-पार्श्वे। **ॐ इन्द्राण्यै नमः**–दक्षिणांशे। **ॐ चामुण्डायै नमः**–ककुदि। **ॐ महा-लक्ष्म्यै नमः**–हृदि।

व्यापक-न्यास—तदनन्तर मूल-मन्त्र से तीन बार अथवा सात बार **व्यापक-न्यास** कर **भगवती का ध्यान** करे–

उद्यदिन-द्युतिमिन्दु-किरीटां, तुङ्ग-कुचां नयन-त्रय-युक्ताम्।
स्मेर-मुखीं वरदांकुश-पाशाऽभीति-करां प्रभजेद् भुवनेशीम्॥

अर्थात् उदीयमान सूर्य के समान देदीप्यमान रक्ताभ, चन्द्र-किरीटनी, समुन्नत पयोधरा, स्मित-वदना, चारों हाथों में वर-मुद्रा, अंकुश, पाश और अभय-मुद्रा-धारणी भगवती भुवनेश्वरी का भजन करना चाहिए।

भगवती का इस प्रकार '**ध्यान**' कर '**मानस-पूजन**' करे। तदनन्तर '**बाह्य पूजन**' करे।

पूजा-यन्त्र—षट्-कोण उसके बाहर अष्ट-दल-कमल, वृत्त, षोडश-दल-कमल एवं चतुर्द्वार-युक्त भू-पुर।

सर्व-देवोपयोगी पद्धति के अनुसार '**विशेष अर्घ्य**' स्थापित कर '**पीठ-शक्तियों**' **की स्थापना** करे। यथा–

'**ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै नमः। ॐ अपराजितायै नमः। ॐ नित्यायै नमः। ॐ विलासिन्यै नमः। ॐ दोग्घ्र्यै नमः। ॐ अघोरायै नमः।** मध्ये–**ॐ मङ्गलायै नम।**'

पीठ-मन्त्र–'**ह्रीं सर्व-शक्ति कमलासनाय नमः।**'

मूल-मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर **पीठ-मन्त्र** से पीठ प्रदान करे। आवाहन से पञ्च-पुष्पाञ्जलि-दान-पर्यन्त कर्म सम्पादित कर **आवरण-पूजन** आरम्भ करे। यथा–

केशर के अग्नि, नैऋत्य, वायु एवं ईशान कोणों में, मध्य में, दिशाओं में **षडङ्ग-पूजन** करे। यथा–

ह्रां हृदयाय नमः – आग्नेये। **ह्रीं शिरसे स्वाहा** – नैऋत्य। **ह्रूं शिखायै वषट्** – वायव्य। **ह्रैं कवचाय हुम्**–ईशाने। **ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्**–मध्ये। **ह्रः कवचाय फट्**–चतुर्दिक्षु।

कर्णिका में हृल्लेखा, गगना आदि का पूजन करे। यथा—

मध्ये–**ओं ह्ल्लेखायै नमः।** पूर्वे –**एं गंगनायै नमः।** दक्षिणे – **उं रक्तायै नमः।** उत्तरे – **इं करालिकायै नमः।** पश्चिमे–**अं महोच्छूष्मायै नमः।**

षट्-कोण में **गायत्री** एवं **ब्रह्मा** आदि युगलों का पूजन करे। यथा–

पूर्वे–**ॐ गायत्र्यै नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः।**

नैऋते–**ॐ सावित्र्यै नमः, ॐ विष्णवे नमः।**

वायव्ये–**ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ रुद्राय नमः।**

वह्नि-कोणे–**ॐ श्रियै नमः, ॐ धन-पतये नमः।**

पश्चिमे–**ॐ रत्यै नमः, ॐ स्मराय नमः।**

ऐशान्यां–**ॐ पुष्ट्यै नमः, ॐ गणपतये नमः।**

पार्श्वयोः–**ॐ शङ्ख-निधये नमः, ॐ पद्म-निधये नमः।**

अष्ट-दल-कमल में पूर्वादि क्रम से **अनङ्ग-कुसुमा** आदि **अष्ट-देवताओं का पूजन** करे। यथा–

'ॐ अनङ्ग-कुसुमायै नमः। ॐ अनङ्ग-कुसमातुरायै नमः। ॐ अनङ्ग-मदनायै नमः। ॐ अनङ्ग-मदनातुरायै नमः। ॐ भुवन-पालायै नमः। ॐ अनङ्ग-वेगायै नमः। ॐ शशि-रेखायै नमः। ॐ गगन-रेखायै नमः।

फिर षोडश-दलों में पूर्वादि क्रम से **कराली आदि का पूजन** करे। यथा–

ॐ करालयै नमः। ॐ विकरालयै नमः। ॐ उमायै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ दुर्गायै नमः। ॐ उषायै नमः। ॐ लक्ष्म्यै नमः। ॐ श्रुत्यै नमः। ॐ स्मृत्यै नमः। ॐ धृत्यै नमः। ॐ श्रद्धायै नमः। ॐ मेधायै नमः। ॐ रत्यै नमः। ॐ कान्त्यै नमः। ॐ आर्यायै नमः।

पद्म-दलों के बाहर भू-पर में पूर्वादि-क्रम से **अनङ्ग-रूपादि आठ देवियों का पूजन** करे—

ॐ अनङ्ग-रूपायै नमः। ॐ अनङ्ग-मदनायै नमः। ॐ अनङ्ग-मदनातुरायै नमः। ॐ भुवन-वेगायै नमः। ॐ भुवन-पालिकायै नमः। ॐ सर्व-शिशिरायै नमः। ॐ अनङ्ग-वेदनायै नमः। ॐ अनङ्ग-मेखलायै नमः।

तदनन्तर चतुरस्र में 'इन्द्र' आदि दिग्पालों का पूजन पूर्वादि-क्रम से करे। यथा–

पूर्वे–**ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

अग्नि-कोण–**ॐ रां अग्नेय तेजोधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

दक्षिण–**ॐ मां यमाय प्रेताधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

नैऋत्य–**ॐ क्षां निऋतये रक्षोधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

पश्चिम–**ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

वायव्य–**ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

उत्तर–**ॐ सां सोमाय ताराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

ईशान–**ॐ हां ईशानाय गणाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

'इन्द्र' और **'ईशान'** के मध्य में–**ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

निऋति और **वरुण** के मध्य में–**ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।**

चतुरस्र के बाहर **इन्द्रादि** के समीप उनके **'वज्र'**-आदि **आयुधों का पूजन** करे। यथा – **ॐ वज्राय नमः।**

ॐ शक्तये नमः। ॐ दण्डाय नमः। ॐ खड्गाय नमः। ॐ पाशाय नमः। ॐ अंकुशाय नमः। ॐ गदायै नमः। ॐ शूलाय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ चक्राय नमः।

सामान्य-पूजा-पद्धति के अनुसार धूपादि विसर्जनान्त कर्म समाप्त करे।

पुरश्चरण—पुरश्चरण हेतु मन्त्र का ३२ लाख '**जप**' करे। 'जप' का दशांश अर्थात् ३ लाख २० हजार आहुतियों से '**हवन**' करे।

हवन-सामग्री—त्रि-स्वादु-युक्त **अष्ट-द्रव्य**। ये अष्ट-द्रव्य हैं– १. अश्वत्थ, २. उडुम्बर, ३. पाकड़ और ४. बरगद की समिधा, ५. तिल, ६. सफेद सरसों, ७. पायस एवं ८. घृत। त्रि-स्वादु हैं–१. दूध (वय), २. मधु और ३. घृत।

मन्त्रान्तर—वाग्भवं (**ऐं**), शम्भु-वनिता (**ह्रीं**), रमा-बीज (**श्रीं**) त्र्यात्मकम्। '**ऐं ह्रीं श्रीं**'–भगवती भुवनेश्वरी का एक अन्य मन्त्र है।

उक्त '**त्र्यक्षरी**'–मन्त्र के '**ऋष्यादि-न्यास**' और पूजादि '**एकाक्षरी मन्त्र**' के समान है। '**कर-न्यास**' और '**षडङ्ग-न्यास**' '**ऐं**'-युक्त षड्-दीर्घ-स्वर-युक्त बीज से करे। यथा– **ऐं ह्रां अंगुष्ठाभ्याम् नमः**–इत्यादि। **ऐं ह्रां हृदयाय नमः** आदि।

ध्यान–

सिन्दूरारुण-विग्रहां त्रि-नयनां माणिक्य-मौलि-स्फुरत्।
तारा-नायक-शेखरां स्मित-मुखीमापीन-वक्षोरुहाम्।।
पाणिभ्यां मणि-पूर्ण-रत्न-चषकं रक्तोत्पलं विभ्रतीं।
सौम्यां रत्न-घटस्थ-सव्य-चरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम्।।

सिन्दूर के समान रक्त-वर्णा, त्रिलोचना, माणिक्य-मय शिरोभाग में चन्द्र-कला, प्रसन्न-मुखी, उतुङ्ग पयोधर, कर-द्वय में मणि-खचित पान-पात्र और रक्त-कमल, सौम्य स्वरूप एवं बाँयाँ पैर रत्न-कलश पर रखी हुई परा अम्बिका का ध्यान करना चाहिए।

पुरश्चरण हेतु मन्त्र का १२ लाख '**जप**' करे तथा **त्रि-मधुर-युक्त पायस** से 'जप' का दशांश '**हवन**' करे।

अन्य-मन्त्र— (१) '**ऐं ह्रीं ऐं**' भगवती भुवनेश्वरी का एक अन्य त्र्यक्षरी मन्त्र है। उक्त मन्त्र के न्यास पूर्व-वत् हैं। **कर-न्यास** और **षडङ्ग-न्यास** में कुछ अन्तर है। यथा–'कर-न्यास'—**ऐं ह्रां ऐं अंगुष्ठाभ्याम् नमः**। आदि। 'षडङ्ग न्यास'—**ऐं ह्रां ऐं हृदयाय नमः**। आदि।

ध्यान–

श्यामाङ्गी शशि-शेखरां निज-करैः दानं च रक्तोत्पलम्।
रत्नाढ्यं चषकं परं भय-हरं संविभ्रतीं शाश्वतीम्।।
मुक्ता-हार-लसत्-पयोधर-नतां नेत्र-त्रयोल्लासिनीम्।
वन्देऽहं सुर-पूजितां हर-वधूं रक्ताऽरविन्द-स्थिताम्।।

अर्थात् श्यामाङ्गी, चन्द्र किरीटनी, वर-मुद्रा, लाल कमल, रत्न-खचित पान-पात्र और अभय-मुद्रा से सुशोभिता, सनातनी, मुक्ताहार-विभूषिता, पयोधर-भार से झुकी हुई, त्रि-लोचना, सुर-पूजिता, लाल कमल के आसन पर बैठी हुई शिव-वधू भगवती की मैं वन्दना करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करके पूर्व-वत् पूजन करे। **'आवरण-पूजन'** में अष्ट-दल-कमलों में पूजन कुछ पृथक् है। अष्ट-दलों में **'ब्राह्मी'** आदि **'अष्ट-मातृकाओं'** और **'असिताङ्ग'** आदि भैरवों के पूजन का विधान है। यथा–

आं ब्राह्मयै नमः। ईं माहेश्वर्यै नमः। ऊं कौमार्यै नमः। ॠं वैष्णव्यै नमः। लृं वाराह्यै नमः। ऐं इन्द्राण्यै नमः। औं चामुण्डायै नमः। अः महा-लक्ष्म्यै नमः।

इन्हीं अष्ट-दलों में क्रम से भैरवों का पूजन करे। यथा – **अं असिताङ्ग-भैरवाय नमः। इं रुरु-भैरवाय नमः। उं चण्ड-भैरवाय नमः। ऋं क्रोध-भैरवाय नमः। लृं उन्मत्त-भैरवाय नमः। एं कपाली-भैरवाय नमः। ओं भीषण-भैरवाय नमः। अं संहार-भैरवाय नमः।**

इनके पूजन की दूसरी विधि यह है–**'अं आं असिताङ्ग-ब्राह्मीभ्यां नमः। इं ईं रुरु-माहेश्वरीभ्यां नमः। उं ऊं चण्ड-कौमारीभ्यां नमः। ऋं ॠं क्रोध-वैष्णवीभ्यां नमः। लृं लॄं उन्मत्त-वाराहीभ्यां नमः। एं ऐं कपालीन्द्राणीभ्यां नमः। ओं औं भीषण-चामुण्डाभ्यां नमः। अं अः संहार-महा-लक्ष्मीभ्यां नमः।**

अन्य समस्त पूजन-क्रम पूर्व-वत् हैं। **'पुरश्चरण'** हेतु १० लाख जप करे। **त्रि-मधु** (शहद, घी एवं शक्कर) युक्त १ लाख पलाश पुष्पों से **'हवन'** करे। अन्य मत से २४ लाख जप करे।

अन्य मन्त्र (२)—अनन्तो बिन्दु-संयुक्तो, माया ब्रह्माग्नि-तार-वान्। पाशादि त्र्यक्षरो मन्त्रः, सर्व-काम-फल-प्रदः।।

बिन्दु-युक्त अनन्त (**आं**), माया (**ह्रीं**) एवं ब्रह्मा (**क्**), अग्नि (**र्**) और तार (**ओं**) के योग से बना **'क्रों'**। इन तीनों के योग से जो मन्त्र (**आं ह्रीं क्रों**) बनता है, वह सभी कामनाओं को पूरा करनेवाला है।

इस मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता, न्यास, आदि **'एकाक्षरी मन्त्र'** के समान हैं। इसका **'कर-न्यास'** और **'षडङ्ग-न्यास'** इस तरह करे। यथा–

ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रीं अनामिकाभ्यां हुम्। ह्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रीं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट्।

षडङ्ग-न्यास – **ह्रीं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रीं शिखायै वषड्। ह्रीं कवचाय हुम्। ह्रीं नेत्र-त्रयाय वौषट्। ह्रीं अस्त्राय फट्।**

ध्यान–

वरांकुशौ पाशमभीति-मुद्रां, करैर्वहन्तीं कमलासन-स्थां।
बालार्क-कोटि-प्रतिभां त्रिनेत्रां, भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरी ताम्॥

अर्थात् कोटि-कोटि बाल सूर्य के समान आभा-मयी, चारों हाथों में वर-मुद्रा, अंकुश-पाश और अभय-मुद्रा धारण करनेवाली, कमल के आसन पर आसीन, तीन नेत्रोंवाली आद्या भगवती भुवनेश्वरी का मैं भजन करता हूँ।

'अष्ट-दल-कमल' में **'ब्राह्मी'** आदि युगल देवताओं की पूजा करे। **'षोडश-दल-कमल'** में पूजन का विधान नहीं बताया गया है। **भू-पुर** में **'इन्द्र'** आदि दिग्पालों का तथा उनके **'वज्र'** आदि आयुधों का पूजन **भू-पुर के बाहर** करे।

पुरश्चरण हेतु मन्त्र का १० लाख जप तथा **दही, मधु** और **घृत-युक्त अश्वत्थ, उडुम्बर** या **पाकड वृक्ष की समिधा** से १० हजार आहुतियों से **'हवन'** करे। **'हवन'** करते समय समिधा के साथ **तिल, धूप** मिलावे।

* * *

'चण्डी'
विशेष प्रस्तुति

ॐ ह्रीं

निगम-तत्त्व-सार

प्रथम पटल

'तत्त्व-सार' का माहात्म्य

ॐ कैलास - शिखरे रम्ये, नाना - रत्न - विभूषिते । आनन्द-भैरवो देवः, पप्रच्छानन्द-भैरवीम् ।।

नाना प्रकार के रत्नों से सुशोभित, सुन्दर कैलाश पर्वत के ऊपर आनन्द-भैरव ने आनन्द-भैरवी से प्रश्न किया ।

।। श्रीआनन्द-भैरव उवाच ।।

निगमागम-शास्त्रं च, मया त्वयि प्रकाशितम् । तेषां मध्ये सार-भूतं, वद कान्ते ! कुलेश्वरि ! ।।

आनन्द-भैरव बोले—निगमागम शास्त्र मैंने तुम्हारे प्रति प्रकाशित किया है । उस निगमागम तन्त्र में सार-भूत जो है, हे कान्ते, हे कुलेश्वरि ! वह मुझसे कहो ।

पुरा त्वन्मुखाम्भोजाच्छ्रुतं बहु - विधं मया । श्रीरुद्र - यामलाख्यं च, तथा उत्तर - तन्त्रकम् ।।
शक्ति - यामलाख्यातं, अन्यद् विस्तारितं प्रिये ! योग - सारं समाख्यातं, तथा गुह्यं वदस्व मे ।।

तुम्हारे कमल जैसे सुन्दर मुख से पहले बहु-विध तन्त्रों को मैंने सुना है । श्रीरुद्रयामल तन्त्र, उत्तर तन्त्र, शक्ति-यामल तन्त्र तथा अन्य तन्त्रों को भी विस्तार से सुना है । हे प्रिये ! योग-सार तन्त्र को भी सुना है । उसी प्रकार और भी गुप्त विषय मुझे बताओ ।

।। श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ।।

योग-सारं तत्त्व-सारं, सर्व - शास्त्रोत्तमोत्तमम् । प्रधानं सर्व-शास्त्राणां, तन्त्रादीनां च भैरव ! ।।
यो न जानाति तत्त्वेन, तस्य सिद्धिर्न जायते । किं योग-साधनैर्लक्ष्यैः, किं वा स्तोत्र - साधनैः ।।
किं वा दानादिभिर्लक्ष्यैः किमन्यद्-देव-यजनैः । किं वा तीर्थादि-गमनैः, किं वा वश्यादि-कर्मभिः ।।

श्रीआनन्द-भैरवी ने कहा—हे भैरव ! योग का सार 'तत्त्व-सार' सर्व-शास्त्रों में श्रेष्ठ है । सर्व-शास्त्रों में और सर्व - तन्त्रों में यह प्रधान है । जो तात्त्विक रूप से नहीं समझता, उसे सिद्धि नहीं होती । लाखों प्रकार से योग - साधन करना या स्तोत्र - साधन करना या लाखों प्रकार से दान देना या अन्य देवताओं की पूजा करना या अनेक तीर्थों में भ्रमण करना या वश्यादि कर्मों को करना—

किं वीर-साधनैर्लक्ष्यैः, किं कुलाचार-कर्मभिः । किं दीक्षा-मन्त्र-तन्त्राद्यैः, किमन्यद्-ग्रन्थ-विस्तरैः ।।
तत्त्व-सारं विना वत्स ! तत्-सर्वं निष्फलं भवेत् । पञ्च-तत्त्वात्मकमिदं, यो विजानाति तत्त्वतः ।।
तत् - सर्वं सफलं तस्य, निष्फलं न कदाचन । तत्त्व-सारं विना वत्स ! परं - ब्रह्म न विन्दति ।।

या लाखों प्रकार का वीर-साधन करना या अनेक प्रकार के कुलाचार का साधन करना या दीक्षा-साधन करना तथा अनेक प्रकार के ग्रन्थ पढ़ना—हे वत्स ! 'तत्त्व - सार' के बिना सब निष्फल हो जाता है । जो साधक तात्त्विक रूप से इस पञ्च-तत्त्वात्मक संसार को समझ जाता है, उसकी सब क्रियाएँ सफल हो जाती हैं । किसी समय में भी उसकी कोई क्रिया निष्फल नहीं होती । हे वत्स ! 'तत्त्व-सार' के बिना पर-ब्रह्म प्राप्त नहीं होता ।

।। श्रीआनन्द-भैरव उवाच ।।

तत्त्व-सारस्य माहात्म्यं, वदस्वानन्द-भैरवि ! विस्तरं तस्य माहात्म्यं, प्रधानं कुल - भैरवि ! ।।
अनुष्ठानं क्रिया - काण्डं, योग-काण्डं च सिद्धिदम् । केनोपायेन देवेशि ! जायते मम निश्चितम् ।।

श्रीआनन्द-भैरव जी बोले–हे आनन्द-भैरवि ! मुझे तत्त्व-सार का माहात्म्य विस्तार से बताओ। हे कुल-भैरवि, तत्त्व - सार के प्रधान माहात्म्य का वर्णन करो । यथा—अनुष्ठान - काण्ड, क्रिया - काण्ड, योग - काण्ड । हे देवेशि ! सिद्धि को देनेवाले किस उपाय से मेरा कार्य निश्चय रूप से पूरा हो सकता है ?

।। श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ।।

यत्रास्ते तत्त्व - सारज्ञः, तत्रास्ते श्रीसदा - शिवः । यथा गङ्गोदकेनापि, सर्वं याति पवित्रताम् ।।
तत्त्वज्ञ - दर्शनादेव, तत् प्रयाति पवित्रताम् । तत्त्व - सारस्य माहात्म्यं, को वक्तुं भुवन - त्रये ।।
वर्णितुं नैव शक्नोमि, तद् - विधानं हि भैरव ! संक्षेपात् कथयामीह, तच्छृणुष्व महेश्वर ! ।।
तत्त्व-सारं क्वचिद् द्रष्ट्वा, देवाः सर्वे मुदान्विताः । वाञ्छन्ति सर्वदा देवाः, शौनकाद्या महर्षयः ।।
पञ्च-तत्त्वं च सारं यत्, तत्त्व-सारं तदुच्यते । तत्त्व - सारज्ञकं दृष्ट्वा, हर्षाधिक्यं हि भैरव ! ।।
श्वपचो याति पूतत्वं, तं दृष्ट्वा मानवादयः । यस्मिन् ग्रामे महेशान ! तत्त्व - सारोपतिष्ठन्ति ।।

श्रीआनन्द-भैरवी बोलीं—हे आनन्द-भैरव ! जिस स्थान में तत्त्व - सार को जाननेवाला साधक रहता है, उस स्थान में सदा-शिव का निवास होता है । जैसे गङ्गा-जल से सब वस्तुएँ पवित्र हो जाती हैं, उसी तरह तत्त्वज्ञ के दर्शन से पवित्रता हो जाती है । तत्त्व - सार के माहात्म्य का वर्णन त्रि - लोक में कोई भी नहीं कर सकता है। हे भैरव ! मैं भी वर्णन नहीं कर सकती । अतः संक्षेप में कुछ तुमसे कहती हूँ । हे महेश्वर, सुनो । तत्त्व-सारज्ञ के दर्शन की इच्छा देवता लोग हमेशा किया करते हैं । शौनकादिक महर्षि-गण और सर्व देवता-गण अपने मनोरथ की पूर्ति के लिए हमेशा दर्शनार्थी बने रहते हैं । पञ्च-तत्त्व का जो सार है, उसी को तत्त्व-सार कहते हैं । तत्त्व-सारज्ञ को देखकर अति प्रसन्न होना चाहिए । तत्त्व-सारज्ञ के दर्शन से चाण्डाल भी पवित्र हो जाता है, अन्य मनुष्यों की क्या कथा ! हे महेशान, जिस ग्राम में तत्त्व-सारज्ञ रहता है—

तस्मिन्-ग्रामं कुरुक्षेत्रं, सर्व - क्षेत्रोत्तमोत्तमम् । यस्मिन् गेहे कुलेशान ! तत्त्व-सारोऽस्ति यत्नतः ।।
तत्तु गेहं नमस्कृत्य, विधाताऽप्यगमद् द्रुतम् । बहुना किमिहोक्तेन, सर्वं वेत्सि कुलेश्वर ! ।।
तत्त्व-सारोक्त-मार्गेण, गृह्णीयात् कवचं शुभम् । स्तोत्र - मन्त्रादिकं सर्वं, गृह्णीयात् कुल-भैरव ! ।।
न गृह्णीयाद् यदा देव, तदा सर्वं विनश्यति । भैरवेण पुरा प्रोक्तं, तन्त्र - मन्त्रादिकं तु यत् ।।
तत्त्व - सारं बिना सर्वं, निष्फलं जायते प्रिय ! तस्माद् यत्नेन देवेश ! तेषां शुद्धिर्विधीयते ।।

वह ग्राम कुरुक्षेत्र के समान है, सर्व-क्षेत्रोत्तमोत्तम स्थान है । हे कुलेशान ! जिस गृह में तत्त्व-सारज्ञ यत्नतः रहता है, उस गृह को नमस्कार करके ब्रह्मा चले जाते हैं । बहुत क्या कहें, हे कुलेश्वर ! सब जानते हो । तत्त्व-सारोक्त मार्ग से कवच ग्रहण करे, स्तोत्र-मन्त्रादिक सब ग्रहण करे । हे कुल-भैरव, हे देव ! यदि मोह से न ग्रहण करे, तो स्तोत्र-मन्त्रादिक सब कुछ निष्फल हो जाता है । भैरव ने तन्त्र-मन्त्रादिक जो प्रथम कहा है, वह सब तत्त्व-सार के बिना निष्फल है । हे प्रिय, हे देवेश ! इसलिए स्तोत्र-मन्त्रादिक सबकी शुद्धि का विधान है । उसे अवश्य करना चाहिए ।

।। इति निगम-तत्त्व-सारे 'तत्त्व-सार-माहात्म्यं' नाम प्रथमः पटलः ।।

द्वितीय पटल

'ब्रह्म-तत्त्व' का माहात्म्य

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

वद कान्ते ! निगूढं मे, सार-ज्ञानं कुलेश्वरि !, मन्त्रादि - साधनं सर्वं, तथा स्तोत्रादि - साधनम् ।
पञ्च-वाय्वात्मकं सर्वं, योग-ज्ञानं तथा प्रिये !, पञ्च - तत्त्वादि - शुद्धिं च, वद कान्ते कुलेश्वरि ! ।

श्रीआनन्द-भैरव ने कहा—हे कान्ते ! निगूढ़ गुप्त विषय और सार - ज्ञान मुझे बताओ । सभी मन्त्रादि-साधन, स्तोत्रादि-साधन, पञ्च-वायु-परक सारा योग-ज्ञान तथा हे प्रिये ! पञ्च-तत्त्वादि का शोधन भी कहो ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

शृणु शङ्कर ! वक्ष्यामि, सार - ज्ञानं च मुक्तिदम्, येन विज्ञान - मात्रेण, परं - ब्रह्म प्रविन्दति ।
ब्रह्मानन्द - मयं सर्वं, यदि जानाति तत्त्वतः, तदा मुक्तिमवाप्नोति, यदि ब्रह्म प्रविन्दति ।
आब्रह्म-स्तम्भ-पर्यन्तं, परं - ब्रह्मणि संस्थितम्, सैव काली महा - माया, शक्ति - रूपा जगन्मयी ।
सत्त्वादि-गुण-सम्भूता, एका सा द्विविधा स्मृता, वामे प्रकृति - रूपा सा, सदा च तिष्ठतीश्वरी ।

श्रीआनन्द-भैरवी ने कहा—हे शङ्कर ! आप सुनें, मुक्ति को देनेवाले उस सार-ज्ञान को मैं कहता हूँ, जिसे जानते ही पर-ब्रह्म का ज्ञान हो जाता है । यदि साधक तत्त्व-रूप से सबको ब्रह्मानन्द-मय समझ जाता है, तो वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है । यदि ब्रह्म-ज्ञान हो गया, तो अवश्य मुक्ति प्राप्त हो जाती है । ब्रह्म से लेकर स्तम्भ-जैसे जड़ पदार्थ तक सभी पर-ब्रह्म में स्थित हैं । वही ब्रह्म काली महा - माया शक्ति-रूपा जगन्मयी है । वही सत्त्वादि गुणों से उत्पन्न होकर एक होती हुई भी दो हो जाती है । वाम - भाग में वह प्रकृति-रूपा होकर रहती है—और दक्ष-भाग में पुरुष-रूप से रहती है ।

दक्षे पुरुष - रूपेणं, परं - ब्रह्म च तिष्ठति, ह्रस्व - दीर्घ - क्रमेणैव, तौ जानीतः सदा सुधीः ।
कामेच्छया तेन कृतः, प्रकृत्या सह सङ्गमः, पशौ प्रकृतिमाश्रित्य, स्वयं कामं करोति हि ।
पुमान् प्रकृतिमाश्रित्य, चेन्द्रियार्थं करोति यत्, तत् - सर्वं ब्रह्म - लीलैव, सर्वथा ब्रह्मणा कृतम् ।
लीलया ब्रह्मणः सर्वं, हास्य - कौतूहलादिकम्, सर्वं ब्रह्म - मयं ज्ञात्वा, सर्व - कर्माणि साधयेत् ।

ब्रह्म और काली—-इन दोनों को ह्रस्व-दीर्घ-क्रम से सुधी जानता है । वही ब्रह्म काम की इच्छा से, प्रकृति के साथ सङ्गम करता है और वही पशु बनकर प्रकृति के आश्रय से काम - भोग करता है । पुरुष प्रकृति के सहारे जो भी इन्द्रिय-भोग करता है, वह सब ब्रह्म की लीला ही है । सब कुछ ब्रह्म द्वारा ही किया जाता है । अतः हास्य और कौतूहल आदि सभी को ब्रह्म - मय जानकर सब कार्यों का साधन करना चाहिए ।

ब्रह्म - खेला जगत् सर्वं, दोषादोषं न चाचरेत्, दोषोऽस्ति ब्रह्मणः सर्वं, गुणमेव च तस्य तु ।
नृत्य - गानादिकं सर्वं, इन्द्र - जालिक - वत् प्रिय !, खेलार्थं च परं-ब्रह्म, साकारोऽस्ति कुलेश्वर !

वामांशं प्रकृति - रूपं, दक्षांशश्च पुमान् स्वयम्, तयोः संयोग - मात्रेण, शरीरं जायते ध्रुवम् ।
तदिच्छया भोजनादिः, सर्वं भवति निश्चितम्, पीयते खाद्यते यत्तत्, सद् - ब्रह्मैव समर्पणम् ।
सुखेच्छाऽपि च दुःखेच्छा, पर - ब्रह्मैव कारणम्, दिव्ये शरीरे सोऽप्यस्ति, तथा कीटादिकेषु च ।

यह सारा संसार ब्रह्म का खेल है । दोषादोष का विचार न करना चाहिए । जो दोष है, वह भी ब्रह्म है और जो गुण है, वह भी ब्रह्म है । नृत्य-गीतादि सभी इन्द्र-जाल-वत् ब्रह्म ही है । हे आनन्द-भैरव ! खेल के लिए पर-ब्रह्म रूप धारण करता है । वामांश प्रकृति - रूप है और दक्षांश पुरुष:रूप । इन दोनों रूपों के मिलने मात्र से शरीर बन जाता है । उस शरीर में भोजनादि जो कुछ है, सब ब्रह्म की इच्छा से ही होता है । जो-जो खाता - पीता है, वह सब ब्रह्म में ही अर्पण होता है । सुख की इच्छा और दुःख की इच्छा—सबका कारण ब्रह्म ही है । वह ब्रह्म दिव्य शरीर में भी रहता है और कीटादि योनियों में भी ।

पीत्वा मोह-मदिरां च, उन्मत्त-वच्च पुमान् सः, शक्तेर्मायामुपाश्रित्य, सो पुं मत्तो भवेद् ध्रुवम् ।
देव - रूपं समाश्रित्य, दिवि क्रीडति देव - वत्, पशु - रूपं समाश्रित्य, पशु - बलिं चरेद् भुवि ।
मानुषी देहमाश्रित्य, सुख - मोक्षं च कांक्षति, गुण - त्रयम् समाश्रित्य, प्रदीपेऽप्यस्ति भैरव !
अस्य सन्नाशनार्थाय, यम - रूपो धरो यतः, मूल - प्रकृतिमाश्रित्य, देहिना देह - नाश - कृत् ।
धनिनां धन-नाशाय, तस्य रूप-धरो व्ययः,

मोह-मदिरा का पान करके वही ब्रह्म उन्मत्त के समान रहता है । शक्ति की माया से आच्छादित होकर ही वह उन्मत्त बनता है, यह निश्चित है । देव - रूप धारण करके वही स्वर्ग में क्रीड़ा करता है, पशु-रूप धारण करके पृथ्वी पर 'पशु-बलि' को चरितार्थ करता है । मनुष्य-देह धारण कर सुख और मोक्ष की आकांक्षा करता है । तीनों गुणों का आश्रयी बनकर वह समयानुकूल कार्य करता है । उसके विनाश के लिए वही यम-रूप धारण करता है । मूल प्रकृति का आश्रय लेकर वह एक शरीर द्वारा दूसरे शरीर का नाश करता है । धनियों का धन नाश करने के लिए ब्रह्म का नाम 'व्यय' है ।

पाषाण - मणि - धातुषु, रस - रूपी व्यवस्थितः, द्रव-वत्सा जलेऽप्यस्ति, वृक्षेष्वस्ति तु तेज-वत् ।
जलजं रूपमाश्रित्य, जले क्रीडति सर्वथा, क्वचिच्छोकादि-व्याक्लान्तः, क्वचित् सौख्यादि-संकुलः ।
क्वचिद्धास्यादि-संयुक्तो, नाना-रूप-धरः स्मृतः, तेषां च ब्रह्म - लीलैव, ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत् ।

पाषाण - मणि धातुओं में रस-रूपी होकर उसने प्रवेश किया है । द्रव - रूप जल में रहता है । वृक्षों में तेज-रूप से है । जलज-रूप धारण करके जल में सर्वथा क्रीडा करता है । कहीं शोक से व्याकुल रहता है, कहीं सुख से प्रसन्न रहता है, कहीं हास्यादि से संयुक्त है । नाना प्रकार के रूप वह धरता है । यह सब ब्रह्म का खेल जानकर कर्म-साधन करना चाहिए ।

निर्मोहो निरहङ्कारस्सदा ज्योतिर्मयः स्मृतः, कामिनी - रूपमाश्रित्य, कामिनां कलेवरे ।
कामोन्मत्तः कामवते, पर - ब्रह्मैव सर्वथा, मादनं रूपमाश्रित्य, पुमांश्च विह्वलायते ।

ब्रह्म निर्मोह है, निरहङ्कार है, सदा ज्योतिर्मय है । स्त्री-रूप धारण करके वह पुरुषों को परेशान करता है, कामोन्मत्त होकर स्त्रियों के साथ ब्रह्म - लीला किया करता है और मदन - रूप धर कर पुरुषों को विह्वल किया करता है ।

ब्रह्म - रूपो विष्णु - रूपो, रुद्र - रूपश्च एव हि, गुरु-रूपं समाश्रित्य, लोकान् सन्त्रायते अघात् ।
ऊर्ध्व-शून्ये गतिस्तस्य, मध्य-शून्य-स्थित स्मृतः, शून्यान्ते क्रीडति ब्रह्म, को विजानाति तत्त्वतः !

ब्रह्म जो है, वही ब्रह्मा है, विष्णु है, रुद्र-रूप है। गुरु-रूप धारण करके संसार का पाप से उद्धार करता है। ऊर्ध्व शून्य में भी ब्रह्म रहता है, मध्य-शून्य में भी ब्रह्म रहता है और शून्य के अन्त में भी ब्रह्म क्रीड़ा करता है। कौन साधक तात्त्विक रूप से यह सब जानता है !

ऊर्ध्व - शून्यं ब्रह्म - रन्ध्रं, भ्रुवोर्मध्ये च मध्यमम्, मूलाधारमधः-शून्यं, त्रयमेतत् प्रकीर्तितम् ।
शून्योर्ध्वं यदा गच्छेत्, तदा स्वप्नादिकं भवेत्, मध्य - शून्यं गच्छेत्, तदा ज्ञानदिकं भवेत् ।
अधः-शून्यं यदा गच्छेत्, तदा कामादिकं भवेत्, ऊर्ध्व - शून्याद् यदा मध्यं, गच्छति सः महेश्वर !
तदा क्रीडादिकं सर्वं, सः करोति न चान्यथा, ऊर्ध्व - शून्याद् यदा चाधः, स गच्छति तदा शृणु ।

'ऊर्ध्व-शून्य' ब्रह्म-रन्ध्र है, 'मध्य-शून्य' आज्ञा-चक्र है और मूलाधार 'अधः-शून्य' है—ये ही तीन शून्य कहे जाते हैं। जब ब्रह्म 'शून्योर्ध्व' में जाता है, तब स्वप्नादिक होते हैं। जब ब्रह्म 'मध्य-शून्य' में जाता है, तब ज्ञानादिक होते हैं और जब वह 'अधः - शून्य' में जाता है, तब कामादि चेष्टाएँ होती हैं। 'ऊर्ध्व - शून्य' से ब्रह्म 'मध्य - शून्य' में जाता है। हे महेश्वर, तब क्रीड़ादिक भाव उत्पन्न होते हैं, अन्यथा नहीं। 'ऊर्ध्व-शून्य' से ब्रह्म 'अधः-शून्य' में जाता है, तब की दशा सुनो--

क्षुधा - तृष्णाऽऽदिकं सर्वं, तदैव हि करोति सः, स्वप्नच्छलेन ब्रह्माण्डं, स गच्छति महा - निशि ।
गृहे गृहे च गन्तव्यं, क्रीडार्थं परमो गुरुः, यदा गच्छेद् वायु - रूपं, तदा सर्वं तु क्रूर - वत् ।
आदि - मध्यं यदा याति, तदा निद्रां प्रयात्यहो, यदा चेन्नासिका - रन्ध्रं, स-गच्छति महेश्वर !

तब क्षुधा, तृष्णादिक सब होती हैं। स्वप्न - छल से जब ब्रह्माण्ड को जाता है, तब रात्रि हो जाती है। परम गुरु घर-घर में क्रीड़ार्थ जाता है। जिस समय वह वायु-रूप हो जाता है, उस समय क्रूर-भाव हो जाता है। आदि-मध्य में जब जाता है, तब निद्रा-भाव उत्पन्न होता है। जब नासिका - रन्ध्र में जाता है, तब हे महेश्वर ! सुनो--

मलं च कृमि - कीटाद्यैर्महा - क्लेशादि - संकुलैः, कृमि - रूपं समाश्रित्य, सोऽपि तिष्ठति सर्वदा ।
त्वां मां रूपेऽभेद - रूपं, आश्रित्य कुल - भैरव ! स तिष्ठति पर - ब्रह्म, लीलया तु स्वमिच्छया ।
घटादौ शून्य - रूपं च, पटादौ विह्वलादिकम्, धर्मादि - काम - मोक्षार्थीमागमे च वितिष्ठति ।
क्रियार्थं वेद - शास्त्रेषु, योगार्थं योग - कर्मणि, तर्कार्थं तर्क - शास्त्रेषु, निगमेषु निरूपणम् ।
व्याकरणेऽपि बुद्धयर्थं, परं - ब्रह्मैव तिष्ठति, कुल - शास्त्रं कुलाचारे, आगमान्निगमः कृतः ।

हे महेश्वर ! वह ब्रह्म मल, कृमि, कीटादि से युक्त महा-क्लेश-युक्त है। वही कृमि - रूप बनाए हुए भी रहता है। हे महेश्वर ! तेरे और मेरे रूप में अभेद देखनेवाले साधक-जन, हे कुल-भैरव ! ब्रह्म ही में स्थित रहते हैं क्योंकि यह संसार ब्रह्म का खेला है। अपनी इच्छा से वह ब्रह्म घटादिक में शून्य-रूप से और पटादि में विह्वलाकृति-रूप से है। वह ब्रह्म धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थी बनकर आगम में रहता है, क्रिया बनकर वेद-शास्त्रों में रहता है और तर्क-विचार के लिए तर्क-शास्त्र में रहता है। निरूपण के लिए ब्रह्म निगम में रहता है। बुद्धि के लिए व्याकरण में पर - ब्रह्म रहता है। कुलाचार में कुल-शास्त्र—'आगम - निगम' बनाया। वही ब्रह्म स्वेच्छया सब करनेवाला है।

अस्त्रादौ तेज - रूपेण, स्वयं ब्रह्मैव तिष्ठति, एवं विधानि रूपाणि, स्त्री - रूपाण्यथ भैरव !
वितिष्ठति परं - ब्रह्म, स्वेच्छया लीलयाऽपि च, आद्येच्छया कृतं कर्म, दोषादोषं न चाचरेत् ।

वही ब्रह्म अस्त्र में तेज-रूप से है । इस प्रकार अनेक रूप और स्त्री-रूपों को भी उसी ब्रह्म ने धारण किया है । हे भैरव ! वही ब्रह्म अपनी इच्छा से सर्व-व्यापक है । सब कर्मों का निवेदन ब्रह्म ही को करे । किसी कर्म में दोषादोष का भाव न करे ।

ब्रह्म - रूपमिदं सर्वं, ब्रह्म - रूपं जगन्मयम्, ब्रह्म - रूपमिदं योषिद्, ब्रह्म - रूपं कुलाकुलम् ।
ब्रह्म-पानं ब्रह्म - रूपं, ब्रह्म ज्ञानात्मकं स्मृतम्, ब्रह्मानन्द - मयं सर्वं, जगत् स्थावर - जङ्गमम् ।

यह जगत् ब्रह्म-रूप है । वह ब्रह्म जगन्मय है । ब्रह्म-रूपी यह स्त्री है । ब्रह्म-रूप 'कुलाकुल' है । 'कुल-देवी' और 'अकुल' ब्रह्म हैं । दोनों ब्रह्म-स्वरूप हैं । ब्रह्म-पान ब्रह्म-रूप है । वह ब्रह्म ज्ञानात्मक है । ब्रह्मानन्द-मय सारा चराचर जगत् है ।

स्त्रियश्चापि ब्रह्म - रूपं, वीरो ब्रह्म - प्रदायकः, स्त्री - मयं च ब्रह्म - रूपं, ब्रह्म-रूपं कुलामृतम् ।
कुलाचार्यं ब्रह्म - रूपं, कुलाकुलं गुरुं स्मृतम्, मांसं मत्स्यं मैथुनं च, मद्य - मुद्रादिकं च यत् ।
सर्वं ब्रह्म - मयं देव ! ब्रह्म - वदाचरेत् सदा, कुलाकुलं ब्रह्म - रूपं, ब्रह्म - यज्ञानकं स्मृतम् ।
मच्छरीरं ब्रह्म-रूपं, ब्रह्म-तेजः प्रपूजितम् ।

स्त्री ब्रह्म-रूप, वीर भी ब्रह्म-रूप है । ब्रह्म-रूप स्त्री-मय है और कुलामृत भी ब्रह्म है । कुलाचार्य भी ब्रह्म है । कुलाकुल गुरु सब ब्रह्म - रूप हैं । मांस, मत्स्य, मैथुन, मद्य, मुद्रादिक—सभी ब्रह्म हैं । हे देव ! सबसे सबको ब्रह्म-वत् आचरण करे । कुलाकुल ब्रह्म-रूप ब्रह्म-ज्ञान को देनेवाला है । मेरा शरीर ब्रह्म-रूप है, ब्रह्म के तेज से पूरित है और पूजित है ।

तन्त्र-मन्त्रादि-स्तोत्रादि:, ब्रह्म-रूपाणि भैरवि ! ज्ञानात् सिद्धिमवाप्नोति, अज्ञानान्न च सिद्धि-भाक् ।
ब्रह्म - ज्ञानमिदं वत्स ! यो न जानाति तत्त्वतः, ध्यान - पूजादिकं सर्वं, तस्य सिद्धिर्न जायते ।
ब्रह्म - तत्त्वं विना सर्वं, असिद्धेः कारणं स्मृतम्, अतएव महेशान ! कलौ सिद्धिर्न जायते ।
सिद्धेर्हि कारणं ब्रह्म, सर्वथैव कुलेश्वर ! यो हि जानाति तत्त्वेन, सोऽप्यन्ते ब्रह्म - भाग् - भवेत् ।

हे भैरव ! तन्त्र-मन्त्रादि स्तोत्रादि सब ब्रह्म-रूप हैं । ज्ञान से सिद्धि मिलती है, अज्ञान से सिद्धि नहीं मिलती । हे वत्स ! यह ब्रह्म-ज्ञान है । जो साधक-जन तत्त्व से इसको नहीं जानते हैं, उन्हें ध्यान-पूजादिक सिद्ध नहीं होते । ब्रह्म - तत्त्व के बिना सब असिद्ध का कारण है । यही जानना चाहिए । हे महेश्वर ! कलि में सिद्धि नहीं मिलती है क्योंकि सिद्धि का कारण ब्रह्म है । हे कुलेश्वर ! जो साधक तत्त्व से, ज्ञान से—सर्वतः ब्रह्म को जान लेता है, वह अन्त में ब्रह्म-भागी होता है, ब्रह्म को प्राप्त होता है ।

।। इति निगम-तत्त्व-सारे 'ब्रह्म-तत्त्व-माहात्म्यं' नाम द्वितीयः पटलः ।।

तृतीय पटल

मन्त्र-शोधन

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

अपरं वद मे कान्ते ! मन्त्रादि-साधनं प्रिये ! श्रोतुमिच्छामि देवेशि ! कृपया मे प्रकाशय ॥

श्रीआनन्द-भैरव बोले—हे प्रिये ! अन्य मन्त्र-साधन भी मुझसे कहिए । हे कान्ते ! मैं सुनने की इच्छा करता हूँ । कृपा करके प्रकाशित कीजिए ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

शृणु देवेश ! वक्ष्यामि, मन्त्रादि-साधनं महत् । येनानुष्ठित-मात्रेण, साक्षाद् योगीश्वरो भवेत् ॥
मन्त्रादि-साधनं सर्वं, शृणुष्व कमला - सुत ! विधि-वद् गुरु - वक्त्राच्च, गृह्णीयान् मन्त्रमुत्तमम् ॥
पुरश्चर्यां ततः कृत्वा, निमयेन यथा - विधिः । ततः स्वर्ण - पटीं कृत्वा, तन्मध्ये मन्त्रमालिखेत् ॥
ततो रौप्येन सम्वेष्टय, ततः पूजोपहारकैः । ताम्र - पात्रेषु संस्थाप्य, लेपयेद् रक्त - गन्धकैः ॥
ततश्च सिन्दूरेणापि, चतुर्दिक्षु कुलेश्वरि ! नव - नाभं तु संलेख्य, तस्योपरि पूजयेत् ॥

श्रीआनन्द-भैरवी बोलीं—हे देवेश ! मैं वह महान् मन्त्र-साधन आपसे कहती हूँ, जिसका अनुष्ठान मात्र करने से ही साधक साक्षात् योगीश्वर बन जाता है । सम्पूर्ण मन्त्रादि-साधन मैं कहती हूँ । हे कमला-सुत ! सुनिए । गुरुदेव के मुख से विधि-वत् मन्त्र ग्रहण करने के बाद यथा-विधि नियम-पूर्वक उसका पुरश्चरण करे । तब स्वर्ण-पटी को चाँदी से वेष्ठित करे । तदनन्तर पूजनोपहार से उसका पूजन करे । फिर उसे एक ताम्र-पात्र में स्थापित कर उस पर लाल चन्दन का लेप करे । इसके बाद, हे कुलेश्वर ! सिन्दूर से 'नव-नाभ' चक्र बनाकर उस पर पूजन करे ।

ततो यजेदिष्ट-विद्यां, यथोक्त-विधिना शिव ! यथा - शक्ति ततो जप्त्वा, समर्पण - विधिं चरेत् ॥
मातृकार्णं विन्दु-युक्तं, समुच्चार्य मनुं स्मरेत् । मन्त्रेणान्तरितां कृत्वा, मातृकांस्तान् सविन्दुकान् ॥
तेनैव मनुना देव ! घृष्ट्वा ताम्र-शलाकया । आदि - बीजं समुच्चार्य, मनुं मन्त्री विताडयेत् ॥

पूजन करने के बाद हे शिव ! इष्ट-देवता का यथा-विधि पूजन करे । तब मन्त्र का यथा-शक्ति जप करे । जप कर चुकने पर जप-फल का समर्पण करे । तब विन्दु - युक्त मातृका - वर्णों का उच्चारण करते हुए इष्ट - मन्त्र को स्मरण करे । फिर मन्त्र से सम्पुटित कर विन्दु - युक्त मातृकाओं का उच्चारण करे । तदनन्तर मन्त्र को ताम्र-शलाका से लिखे और आदि-वीज 'ॐ' का उच्चारण करते हुए मन्त्र को विताड़ित करे ।

माया - लक्ष्मी पदाद्येन, पुटयित्वा शतं जपेत् । कूर्च - वीजं समुच्चार्य, धूपयेद् बहु - यत्नतः ॥
वाग्भवं तु समुच्चार्य, कुल - दीपेन दीपयेत् । ततो वै कुल - गन्धेन, क्षालयेद् काम - राजतः ॥
ततः कुल - जलेनापि, अस्त्रेण चाभिषेचयेत् । ततो वै मातृकार्णेन, पुटं कृत्वा जपेन्मनुं ॥
ततश्च प्रजपेद् धीमान्, मनुं लक्ष्यं समाहितः । कुलामृतं ततः पीत्वा, वायु - वीजेन ताडयेत् ॥

माया (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं) का उच्चारण करते हुए मन्त्र को पुटित कर उसका १०० बार जप करे। फिर कूर्च-वीज (हूँ) का उच्चारण कर उसे धूपित करे। तदनन्तर यत्न - पूर्वक वाग्भव (ऐं) वीज का उच्चारण कर मन्त्र को 'कुल-दीप' से दीपित करे। इसके बाद काम (क्लीं) वीज का उच्चारण कर उस पर 'कुल-गन्ध' का लेप करे। फिर अस्त्र (फट्) वीज का उच्चारण कर 'कुल - जल' से उसका अभिषिञ्चन करे। तब मातृका वर्णों से पुटित करके मन्त्र-वर्णों का एक लक्ष बार जप करे। इसके बाद समाहित होकर 'कुलामृत' का पान कर वायु (यं) वीज से उसका ताड़न करे।

योनि - क्षालित - तोयेन, लिङ्ग - प्रक्षालनेन च। अभ्यर्च्य देव - देवेशीं, शत - वारं प्रतर्पयेत् ॥
ततः सावहितो मन्त्री, गुरुं नत्वा शिर-स्थितम्। ब्रह्म - रन्ध्रे तु तन्मन्त्रं, नयेत् संहार - मुद्रया ॥
तत्र तद् - दिवसे रात्रौ, नारी - योगे कुलेश्वर! जप्त्वा सिद्धिमवाप्नोति, सर्वथैव प्रयत्नतः ॥

अब योनि-क्षालित और लिङ्ग-प्रक्षालित जल से पूजन कर देव-देवेशी का शत बार तर्पण करे। फिर साधक सावधान होकर शिर-स्थित गुरुदेव को नमस्कार करे। ब्रह्म-रन्ध्र में संहार-मुद्रा से उस मूल-मन्त्र का विसर्जन करे। उस दिन रात्रि में, हे कुलेश्वर! शक्ति-संयुक्त होकर इष्ट-मन्त्र का प्रयत्न-पूर्वक यथा-शक्ति जप करने से साधक सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त करता है।

इति ते कथिता देव! मन्त्र - सिद्धिरनुत्तमा। असाध्यं यदि गृह्णीयात्, तदा नैव फलं लभेत् ॥
एतत् तु क्रम - योगेन, मन्त्र - सिद्धिः प्रजायते। तस्मिन् स्वर्णेन कवचं, कृत्वा कर्णे विधारयेत् ॥
एतत् प्रत्यक्ष - फलदो, मन्त्रो भवति शङ्कर! योषिद् - रूपमाश्रित्य, छायायां मण्डपालये ॥
मां पश्यति साधकेन्द्रः, सर्वथैव कुलेश्वरः!

हे देव! यह मन्त्र - सिद्धि का उपाय मैंने आपसे कह दिया। अनुत्तमा असाध्य यदि करे, तो मन्त्र सिद्ध नहीं होगा। हे शिव! इस क्रम के योग से मन्त्र की सिद्धि हो जाती है। उस स्वर्ण - पटी का कवच बनाकर उसे कान में धारण करे। यह प्रत्यक्ष फल देनेवाला मन्त्र-विधान है। हे शङ्कर! स्त्री-रूप धारण करके मन्दिरों के भीतर छाया में साधक मेरा दर्शन पाता है।

॥ इति निगम-तत्त्व-सारे 'मन्त्र-शोधनं' नाम तृतीयः पटलः ॥

चतुर्थ पटल

स्तोत्र-शोधन

।। श्रीआनन्द-भैरव उवाच ।।

अपरं श्रोतुमिच्छामि, स्तोत्रादि - शोधनं प्रिये ! तदुपायं वद प्रौढ़े ! यदि तेऽस्ति कृपा - मयि ।।

श्रीआनन्द - भैरव ने कहा—हे प्रिये ! स्तोत्रादि-शोधन की अन्य विधि मैं सुनना चाहता हूँ । हे प्रौढ़े ! यदि मेरे ऊपर तुम्हारी कृपा है, तो शोधन का उपाय कहिए ।

।। श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ।।

शृणु वक्ष्यामि देवेश ! स्तोत्राणां शोधनं प्रिय ! यं विना विफलं सर्वं, तदुपायं शृणुष्व मे ।।
आदौ विद्यां समाहूय, शास्त्रोक्त - वर्त्मना लिखेत् । संलिखेत् ताल पत्रे तु, भूर्ज-पत्रे च वा पुनः ।।

श्रीआनन्द-भैरवी बोलीं—हे प्रिय देवेश ! सुनो, मैं स्तोत्रों के शोधन की वह विधि बताऊँगी, जिसके बिना सभी स्तोत्र निष्फल हो जाते हैं । वह विधि मुझसे सुनो । पहले विद्या (मन्त्र) का आवाहन कर शास्त्रोक्त मार्ग से उसे ताल-पत्र या भूर्ज-पत्र पर लिखे ।

अन्य-पत्रं प्रयुञ्जीत, निष्फलं जायते हर ! श्रीगुरुः प्रलिखेत् स्तोत्रं, तदा सर्वं सु-दुर्लभम् ।।
सूरिभिर्पत्रं लिखितं, विरलाक्षर - संयुतम् । तत् सर्वं निष्फलं याति, शिलायां मुक्त-वीज - वत् ।।
तेजं विना यथा लौहं, विना शक्ति यथा शिवः । शृङ्गं विना यथा वत्सः, सर्वमेवं प्रकीर्तितम् ।।

हे शिव ! अन्य पत्र पर लिखने से प्रयोग निष्फल होता है । श्रीगुरु का लिखा स्तोत्र सबको दुर्लभ है । विरलाक्षर-संयुक्त भी रहे, तब भी अन्य का लिखा हुआ स्तोत्र निष्फल होता है, जैसे पत्थर पर बीज बोने से अंकुर तक नहीं निकलता । तेज के बिना जैसे अस्त्र, शक्ति के बिना जैसे शिव, सींग के बिना जैसे बैल, वैसे ही बिना शोधन के स्तोत्र व्यर्थ होता है ।

तस्मादादौ महेशान ! स्तोत्रादि-शोधनं चरेत् । तत् - प्रयोगं प्रवक्ष्यामि, शृणुष्वानन्द - भैरव ! ।।
पट्ट - डोरेण संवेष्टय, मध्ये स्वर्ण - शलाकया । अथवा ताम्र - रौप्येण, दद्याच्छलाकमुत्तमम् ।।
लौह-कांस्यं तथा रौप्यं, शैसकं दारु-निर्मितम् । शलाकं वर्जयेन्मन्त्री, स्तोत्र - शोधन - कर्मणि ।।
ताम्र-पात्रे कुंकुमाद्यैर्मातृका - यन्त्रमालिखेत् । तन्मध्ये स्थापयेत् स्तोत्रं, पञ्च - गव्येन शोधयेत् ।।
अभ्युंक्ष्य पञ्चमैस्तत्त्वैः, कुल-मुद्रां प्रदर्शयेत् । ततो ध्यायेत् स्तोत्र-राजं, शृणुष्वानन्द - भैरव ! ।।

अतः हे महेशान ! पहले स्तोत्रादि का शोधन करे । उस प्रयोग को मैं बताऊँगी, सुनो । हे आनन्द-भैरव, रेशमी डोरे से लपेट कर मध्य में स्वर्ण-शलाका दे अथवा ताम्र-रौप्य की शलाका दे । लौह, कांस्य, रौप्य, जस्ता और काष्ठ की शलाका स्तोत्र - शोधन-कर्म में वर्जित है । ताम्र-पात्र में कुंकुमादि द्रव्यों से मातृका - यन्त्र लिखे । उस यन्त्र के मध्य में लिखित स्तोत्र को रखे । पञ्च-गव्य से उसका सिञ्चन करे । पश्चात् मद्य, मांस, मीन आदि पञ्च - तत्त्वों से उसका अभ्युक्षण कर उसे योनि-मुद्रा दिखाए । तब स्तोत्र-राज का ध्यान करे । हे आनन्द-भैरव ! सुनो—

उद्यदादित्य-सङ्काशं, स्तोत्रं परम-दुर्लभम् । देवानां तुष्टिदं स्तोत्रं, ममाभीष्ट - फल - प्रदम् ।।
इति ध्यात्वा स्तोत्र-राजं, ततो यजेत् समाहितः । गन्ध-पुष्पादिभिर्द्रव्यैः, नाना-बल्युपहारकैः ।।
माया - लक्ष्मी - प्रदानाय, स्तोत्राय च नमो नमः । मन्त्रेनानेन देवेश ! स्तोत्र-राजं प्रपूजयेत् ।।
यथोक्त - विधिना मन्त्री, ततः स्वेष्ट - मनुं जपेत् । ततो यजेत् कुल-गुरुं, कुल-देवीं कुलेश्वरीम् ।।

निम्न प्रकार स्तोत्र-राज का ध्यान करे—

उद्यदादित्य-सङ्काशं, स्तोत्रं परम - दुर्लभम् । देवानां तुष्टिदं स्तोत्रं, ममाभीष्ट - फल - प्रदम् ।।
ह्रीं श्रीं स्तोत्राय नमो नमः ।।

अर्थात् उदय-काल के सूर्य के समान प्रकाशमान स्तोत्र परम दुर्लभ है। स्तोत्र देवताओं को प्रसन्न करनेवाला है और मेरे अभीष्ट फल को देनेवाला है। 'माया' एवं 'लक्ष्मी' को प्रदान करनेवाले स्तोत्र को बारम्बार नमस्कार है।

ध्यान करके गन्ध-पुष्पादि द्रव्यों और विविध प्रकार की बलि एवं उपहारों द्वारा स्तोत्र का पूजन करे। 'माया' (ह्रीं), 'लक्ष्मी' (श्रीं) और '**स्तोत्राय नमो नमः**'—अर्थात् '**ह्रीं श्रीं स्तोत्राय नमो नमः**'—इस मन्त्र से स्तोत्र-राज की पूजा करे। तब यथोक्त विधान से साधक अपने इष्ट - मन्त्र का जप करे। इसके बाद कुल-गुरु और कुल-देवी कुलेश्वरी की पूजा करे।

श्मश्रु-वीज-त्रयं चोक्त्वा, स्थापयेद् बहु - यत्नतः । चन्दनागरु - पुष्पाद्यैर्माया - वीजेन लेपयेत् ।।
काम-त्रयं समुच्चार्य, रक्त - वस्त्रेण वेष्ठयेत् । वेदाद्यं च त्रयं चोक्त्वा, स्थापयेद् बहु - यत्नतः ।।
ततः प्रदक्षिणी - कृत्य, नमस्कारं कृतं बहु । 'ॐ नमः स्तोत्र - राजाय, नमस्ते ज्ञानद प्रभो ! ।।
धर्मार्थ-काम-मोक्षं च, देहि मे ब्रह्म-रूप-धृक् ।' इत्यनेन नमस्कृत्य, स्तोत्र - राजं पठेत् सुधीः ।।
ततश्च दक्षिणां दद्याद्, गुरवे विभवावधि ।

सावधानी के साथ तीन 'श्मश्रु-वीजों' अर्थात् '**हूँ हूँ हूँ**' का उच्चारण कर शोधित 'स्तोत्र-राज' को स्थापित करे। चन्दन, अगरु एवं पुष्पादि से 'माया' (**ह्रीं**) का उच्चारण कर लेपन करे। तीन 'काम-वीजों' अर्थात् '**क्लीं क्लीं क्लीं**' का उच्चारण कर उसे रक्त-वस्त्र से वेष्ठित करे। तीन 'वेदाद्य' - वीजों अर्थात् '**ॐ ॐ ॐ**' का उच्चारण कर उसे स्थिर करे। इसके बाद प्रदक्षिणा करे। निम्न मन्त्र को पढ़ता हुआ कई बार नमस्कार करे—

ॐ नमः स्तोत्र-राजाय, नमस्ते ज्ञानद प्रभो ! धर्मार्थ-काम-मोक्षं च, देहि मे ब्रह्म-रूप - धृक् ! ।।

अर्थात्—'स्तोत्र - राज' को नमस्कार। हे ज्ञान के देनेवाले, हे प्रभो ! आपको बारम्बार नमस्कार। हे ब्रह्म-रूप-धारी ! आप मुझे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्रदान करें।

इस प्रकार नमस्कार कर साधक स्तोत्र-राज का पाठ करे। इसके बाद गुरु को, जितना अपने पास धन हो, उसके अनुरूप दक्षिणा प्रदान करे।

।। श्री निगम-तत्त्वसार-तन्त्रे 'स्तोत्र-शोधनं' नाम चतुर्थः पटलः ।।

पंचम पटल

कवच-साधन

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

अपरं वद मे कान्ते ! साधनं कवचं महत् । यथा स्तोत्रं तथा देवि ! कृपया मे प्रकाशय ॥

श्रीआनन्द-भैरव ने कहा–हे कान्ते ! 'कवच' का भी दूसरा साधन मुझसे कहो । जैसे स्तोत्र-साधन कहा है, वैसे ही हे देवि ! 'कवच' का शोधन भी मेरे सम्मुख कृपा करके प्रकाशित करो ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

शृणु वक्ष्यामि देवेश ! कवचस्य तु कारणम् । स्तोत्र - वल्लिखितं कार्यं, भूर्ज - पत्रे कुलेश्वर ! ॥
यद्यदुक्त - विधानेन, द्रव्येन प्रलिखेत् सुधीः । लिखित्वा पूर्व-वद् देव ! पूर्वोक्त - शोधनं चरेत् ॥
यद्यत्-कल्प-विधानेन, समवेष्टच स्थापयेद् बुधः । ततो वै विधिना मन्त्री, स्वेष्ट-पूजां समाचरेत् ॥

श्रीआनन्द-भैरवी बोलीं— हे देवेश ! कवच का भी साधन मैं कहती हूँ । सुनो, स्तोत्र के समान कवच को भूर्ज - पत्र पर लिखे । जो द्रव्य लिखने को बताया गया है, उसी द्रव्य से लिखे । हे कुलेश्वर ! लिखकर पूर्वोक्त शोधन करे । जिसमें जिस प्रकार विधान कहा है, उसी रीति से लिखकर स्थापित करे । तत्पश्चात् विधि-पूर्वक अपने इष्ट का पूजन करे ।

मध्ये तु कवचस्यास्य, इमं मन्त्रं जपेत् सुधीः । मनुं तत्र प्रवक्ष्यामि, शृणुष्वानन्द - भैरव ! ॥
तार-त्रयं तथा कूर्च्चं, तथा माया तथा च श्रीः । महा-प्रतिसरे कवचस्य मध्ये, निवासं कुरु कुरु स्वाहा ॥
ततो महा - प्रतिसरे, मध्ये तारा - वीज - त्रयं । निवासं पदमुच्चार्य, कुरु - द्वयं ततो वदेत् ॥
स्वाहान्तो यन्मनुः प्रोक्तश्चाष्टोत्तर-शतं जपेत् । सहस्रं वा जपेद् धीमान्, तस्य मध्ये षडानन ! ॥

हे आनन्द-भैरव ! कवच के मध्य में इस मन्त्र का साधक जप करे । जपने का मन्त्र मैं कहूँगी । हे आनन्द-भैरव सुनो— तीन 'तार' (ॐ ॐ ॐ), तीन 'कूर्च' (हूँ हूँ हूँ), तीन 'माया' (ह्रीं ह्रीं ह्रीं) और तीन 'श्री' (श्रीं श्रीं श्रीं), फिर **'महा-प्रतिसरे ! कवचस्य मध्ये कुरु कुरु स्वाहा'** कहे । 'महा-प्रतिसरे' के बाद 'तारा-वोज' (स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं) तीन बार, फिर 'निवास' पद जोड़कर दो बार 'कुरु' शब्द कहे । अन्त में 'स्वाहा' जोड़ने से यह मन्त्र कहा है—'ॐ ॐ ॐ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं महा - प्रतिसरे ! स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं कवच-मध्ये निवासं कुरु कुरु स्वाहा ।' यह मन्त्र अष्टोत्तर - शत (१०८) बार जपे अथवा एक हजार आठ बार । हे षडानन ! जप कवच के मध्य में करे ।

ततस्तु काम - वीजेन, कुल - द्रव्येण क्षालयेत् । ध्रुव - वीजं समुच्चार्य, पञ्च - गव्येन तर्पयेत् ॥
सप्तधा तर्पणं कृत्वा, दशधा चाभिषेचयेत् । वाग्भवेनापि संसिच्य, तारा - वीज - त्रयं वदेत् ॥
सुरा - मांसोपहारिणि, सिद्धि देहि ततो वदेत् । द्वि - ठान्तोऽयं मनुः प्रोक्तः, पुनर्दश-शतं जपेत् ॥
ततस्तु श्रीगुरून् नत्वा, विन्दु - क्षेपं समाचरेत् । वाग्भवं वीजमुच्चार्य, त्रिपुरायै पदं वदेत् ॥
वह्नि - जाया परे दत्वा, विन्दु - क्षेपमथाचरेत् । कुल - क्षालित - तोयेन, लिङ्ग-प्रक्षालनेन च ॥

विन्दु - क्षेपं प्रकर्तव्यं, छाग - रक्तेन वा पुनः । विन्दु - क्षेपं प्रकर्तव्यं, अन्यथा निष्फलं भवेत् ।।
एवं क्रमेण देवेश ! सिद्धिर्हि जायते सदा । नाचरेद् यदि मोहेन, न तस्य फलमाप्नुयात् ।।
सन्ध्यां विना यथा मन्त्र - ग्रहणं निष्फलं भवेत् । शोधनेन विना वत्स ! नैव प्राप्नोति मानवः ।।

तदनन्तर 'काम'-वीज (**क्लीं**) से 'कुल - द्रव्य' अर्थात् मद्य-मांसादि पञ्च-तत्त्वों द्वारा कवच को प्रक्षालित करे। 'ॐ' का उच्चारण कर 'पञ्च-गव्य' से तर्पण करे। सात बार तर्पण कर दश बार अभिसिञ्चन करे। वाग्भव वीज (**ऐं**) से सिञ्चन कर तीन 'तारा-वीज' (**स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं**) कहे, तब **'सुरा-मांसोपहारिणि ! सिद्धि देहि'** कहे, इस मन्त्र के अन्त में 'द्विठ' (**स्वाहा**) कहा गया है। इस मन्त्र को फिर १००० बार जपे। यथा—**'स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं सुरा-मांसोपहारिणि ! सिद्धि देहि स्वाहा।'**

इसके बाद श्रीगुरु, परम गुरु, परापर गुरु आदि को नमस्कार कर 'विन्दु-क्षेप' करे। 'वाग्भव'-वीज (**ऐं**) का उच्चारण कर **'त्रिपुरायै'** पद कहे। बाद में 'वह्नि-जाया' (**स्वाहा**) लगाए अर्थात् **'ऐं त्रिपुरायै स्वाहा'**—इस मन्त्र से विन्दु-क्षेप करे। 'योनि-क्षालित', 'लिङ्ग - प्रक्षालित' जल या 'छाग-रुधिर' से 'विन्दु-क्षेप' करना चाहिए, अन्यथा कोई फल नहीं होता।

हे देवेश ! इस क्रम से करने से 'कवच' सिद्ध हो जाता है। यदि मोह से न करे, तो 'कवच' सिद्ध नहीं होगा। हे वत्स ! सन्ध्या के बिना जैसे मन्त्र निष्फल होता है, उसी प्रकार शोधन के बिना (**कवच**) भी निष्फल हो जाता है। मनुष्य को उससे कुछ भी लाभ नहीं होता।

।। इति निगम-तत्त्व-सारे 'कवच-साधनं' नाम पञ्चमः पटलः ।।

षष्ठ पटल

चण्डी-पाठ-क्रम

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

चण्डी-पाठ-क्रमं देवि ! वदस्वानन्द-भैरवि ! येनानुष्ठित-मात्रेण, साक्षात् सिद्धिः प्रजायते ॥
अनेन क्रम-योगेन, चण्डी-पाठ-फलं नहि । मया प्रोक्तानि बहुधा, तथापि न फलं लभेत् ॥

श्रीआनन्द-भैरव बोले—हे आनन्द-भैरवि ! चण्डी-पाठ का वह क्रम मुझसे कहो, जिसके अनुष्ठान मात्र से साक्षात् सिद्धि प्राप्ति होती है। मैंने चण्डी-पाठ के बहुत क्रमों का वर्णन किया, फिर भी फल नहीं मिला।

एतद्धि संशयं कान्ते ! जायते मम सन्ततं । चण्डी साक्षात् महा-देवी, प्रत्यक्ष फल-दायिनी ॥
नराणामुपकाराय, चण्डी-पाठः प्रकाशितः । कदाचित् कार्य-सिद्धिः स्यात्, कदाचिन्नैव सिद्धयति ॥
पाठ - क्रमश्च बहुधा, पुराणोक्तः कुलेश्वरि ! तत्र तेषां क्रमादीनां, सार - भूतं वदस्व मे ॥
नमस्ते योगदे देवि ! नमस्ते कुल - गामिनि ! तदुपायं वद प्रौढे ! यद्यस्ति ते कृपा मयि ॥

हे कान्ते ! यह संशय मेरे हृदय से दूर कीजिए कि चण्डी तो साक्षात् महा - देवी हैं, प्रत्यक्ष फल देनेवाली हैं, मनुष्यों के उपकारार्थ चण्डी का पाठ - क्रम भी अनेकानेक प्रकार से वर्णन किया गया है, किन्तु किसी समय उससे कार्य सिद्ध होता है, किसी समय नहीं। हे कुलेश्वरि ! पुराणों में भी अनेकानेक प्रकार के पाठ-क्रम कहे हैं। इन सब क्रमों में से जो सार-भूत क्रम हो, उसे बताइए। हे देवि ! योग का ज्ञान देनेवाली हे कुल-गामिनि ! आपको नमस्कार है। हे प्रौढ़े ! यदि आपकी कृपा मेरे ऊपर है, तो वह उपाय मुझे बताइए।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

पाठ - क्रमश्च बहुधा, यद्यस्ति कुल - भैरव ! सार - भूतं विना वत्स ! नहि सिद्धिः प्रजायते ॥
भाव-योगं विजानीयाद्, दिव्य - वीर - पशु-क्रमात् । पशु-विप्रं समाश्रित्य, पशूनां क्रममाचरेत् ॥
कुलीनां विप्रमाश्रित्य, कौलिक - क्रममाचरेत् । अक्रमं यदि कुर्वीत, तस्य पाप - फलं शृणु ॥

हे कुल-भैरव ! पाठ का क्रम यदि बहुत प्रकार का है, तो हे वत्स ! बिना सार - भूत क्रम के सिद्धि नहीं मिलती। वह क्रम भाव-युक्त होना चाहिए। दिव्य, वीर, पशु - क्रम से 'भाव' तीन प्रकार का है। 'पशु-विप्र' अर्थात् दक्षिणाचारी ब्राह्मण का आश्रय ले, तो 'दक्षिणाचार-क्रम' का पालन करे और यदि 'कुलीन' अर्थात् कुलाचारी ब्राह्मण की सहायता ले, तो 'कौलिक क्रम' के अनुकूल पाठ करे। अ-क्रम यदि कोई पाठ करे, तो बहुत पाप होता है।

प्रत्यक्षरे ब्रह्म - हत्यां, प्राप्नोति हि न संशयः । कुलजस्य च पाठेन, सर्व - सिद्धिः प्रजायते ॥
कुलीनो यदि भुञ्जीत, पशु - विप्रस्य वेतने । तस्य क्रियादिकं सर्वं, विफलं जायते हर ! ॥

प्रति अक्षर में ब्रह्म-हत्या का पाप होता है और कुलीन कौलिक के पाठ से सर्व-सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। हे शिव ! कुलीन ब्राह्मण यदि पशु ब्राह्मण के यहाँ भोजन करे, तो उस कुलीन की सब क्रियाएँ विफल हो जाती हैं।

लोभात् स्नेहात् भयाद् वापि, यदि भुञ्जीत शङ्कर ! पूजा पराङ्-मुखी यादि, विपदः स्युः पदे-पदे ॥
तस्मात् कुलीनमाश्रित्य, चण्डी-पाठे नियोजयेत् । तत्-प्रयोगं प्रवक्ष्यामि, शृणुष्व कमला - सुत ! ॥

हे शङ्कर ! लोभ, स्नेह या भय से यदि पशु के यहाँ भोजन करे, तो पूजा पराङ्-मुखी हो जाती है, पद - पद पर दुःख होता है। इसलिए पशु के यहाँ भोजन नहीं करना चाहिए। कुलीन ब्राह्मण को बुलाकर 'कौलिक क्रम' के अनुकूल पाठ करे। हे कमला-सुत ! चण्डी के उस प्रयोग को मैं कहती हूँ।

पुस्तकं प्रथमं देव ! शोधयेद् बहु - यत्नतः ! आदौ त्रिकोणं संलिख्य, ताम्र - पात्रे कुलेश्वर ! ॥
चतुर्दिक्षु मातृकार्णान्, विलिखेत् साधकोत्तमः । अभ्युक्ष्य पञ्च-गव्येन, सर्व-द्रव्यं महेश्वर ! ॥
सप्त - वारं पुस्तकं च, प्रोक्षणं कारयेद् बुधः । ततो कुलजं शोध्य, तत्क्षणे च पिवेत् वशी ॥
स्वस्तिकान् वाचयित्वा तु, ततः सङ्कल्पयेद् बुधः । सम्पूजयेत् ततः चण्डीं, पुस्तकोपरि शङ्कर ! ॥
अङ्ग-न्यासादिकं कृत्वा, ततो ध्यायेत् समाहितः ।

हे देव ! पहले पुस्तक का बहु - यत्न से शोधन करे। तत्पश्चात् ताम्र - पात्र में पहले त्रिकोण लिखकर हे कुलेश्वर ! चारों दिशाओं में मातृका-वर्णों को लिखे। पञ्च-गव्य से सर्व-द्रव्यों का प्रोक्षण करे। हे महेश्वर ! सात बार पुस्तक का प्रोक्षण करे। तब 'कुलज' द्रव्य का शोधन कर पान करने से देवता वशीभूत होता है। स्वस्तयन पढ़कर सङ्कल्प करे। हे शङ्कर ! इसके बाद पुस्तक के ऊपर चण्डी का पूजन करे। अङ्ग-न्यासादि करके समाहित होकर भगवती का ध्यान करे—

सिंह - स्कन्धाधिरूढां, नानालङ्कार-भूषिताम् । कुलेश्वरीं महा-प्राणां, सदा स्मेर-मुखीं शुभाम् ॥
चतुर्वर्ग - प्रदां देवीं, रक्षा - कर्त्रीं त्रिलोचनाम् । चतुर्भुजां महा - देवीं, नाग - यज्ञोपवीतिनीम् ॥
रक्त-वस्त्र-परीधानां, बालार्क - सदृशीं तनुम् । शौनकाद्यैर्मुनि - गणैः, सेवितां चण्ड - गेहिनीम् ॥

सिंह के ऊपर आसीना, नाना अलङ्कारों से सुशोभिता, कुलेश्वरी, महा - ऐश्वर्यवती, हर समय हँसती हुई, शुभा, चतुर्वर्ग (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) को प्रदान करनेवाली, रक्षा करनेवाली, तीन नेत्रवाली, चार भुजावाली, महा-देवी सर्प का यज्ञोपवीत पहिने हुई हैं। रक्त वस्त्र धारण करनेवाली बाल - सूर्य के समान तेजस्वी शरीरवाली हैं। शौनकादि मुनि-गणों से सेविता चण्ड-गेहिनी दुर्गा का ध्यान करे।

इति ध्यात्वा महा - देवीं, मनुनाऽनेन पूजयेत् । तारं तार - त्रयं चोक्त्वा, तथा कूर्च-त्रयं सुत ! ॥
महा - चण्डी-पदं चोक्त्वा, सिद्धिं देहि द्वि-ठान्तकः । चतुःषष्ट्युपचाराद्यैर्मनुनाऽनेन पूजयेत् ॥

हे सुत ! तार (ॐ) तीन 'तार' (ऐं ह्रीं क्लीं), तीन 'कूर्च-वीज' (हूँ हूँ हूँ) का उच्चारण करे। फिर 'महा-चण्डी'-पद का उच्चारण कर 'सिद्धि देहि स्वाहा'। इस मन्त्र से चौंसठ उपचारों द्वारा पूजा करे। उक्त मन्त्र का स्वरूप यह है—'ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हूँ हूँ हूँ महा-चण्डि ! सिद्धि देहि स्वाहा।'

इति मन्त्रेण सम्पूज्य, ततश्चण्डीं पठेत् सुधीः । माहात्म्यान्ते पुनर्मन्त्र-पुटं कृत्वा जपेत् सुधीः ॥
माहात्म्यान्ते कुल - द्रव्यैरभावे पञ्च - गव्यकैः । प्रोक्षयेत् पुस्तकं धीमानन्य-चेष्टां विवर्जयेत् ॥
दशभिश्च कुल-द्रव्यैः, वितान - धूप - दीपकैः । वाम - दक्षिण - योगेन, धूपयेद् बहु - यत्नतः ॥
पाठान्तेऽपि च तन्मन्त्रमष्टोत्तर - शतं जपेत् । तन्मनुं मातृका - वर्णैः, पुटं कृत्वा पुनर्जपेत् ॥
ततो जपं समर्प्याथ, देवी - सूक्तं पुनः पठेत् । ततो वै दक्षिणां दत्वा, यथा - विभवमात्मनः ॥

स्वयोषित् पर-योषिद् वा, कुलोक्त-विधिनाऽर्च्चयेत् । ततो वै भोजयेत् तां तु, दक्षिणां च निवेदयेत् ।।
अनेन क्रम-योगेन, चण्डी-पाठ-फलं लभेत् ।

पूर्वोक्त मन्त्र से पूजन करके चण्डी-पाठ करे । माहात्म्य के अन्त में पुनर्मन्त्र पुटित करके जप करे । जप के अन्त में 'कुल-द्रव्यों'—मद्य, मांस, मीन, मुद्रा, पञ्चम से पुस्तक का प्रोक्षण करे । 'कुल-द्रव्य' के अभाव में 'पञ्च-गव्य' से प्रोक्षण करे । अन्य चेष्टा को त्याग कर दश 'कुल- द्रव्यों' को लेकर मण्डप को धूप-दीप से धूपित व दीपित करे । वाम-दक्षिण-योग से बहु-यत्न द्वारा धूपित करे ।

पाठ के अन्त में पूर्वोक्त मन्त्र का अष्टोत्तर - शत जप करे । उस मन्त्र को मातृका वर्णों से पुटित करके पुनः जप करे । इसके बाद जप-समर्पण कर 'देवी-सूक्त' का पुनः पाठ करे । तब अपने विभव के अनुकूल दक्षिणा देकर अपनी धर्म-पत्नी या दूसरी स्त्री का कुलोक्त विधान से पूजन करे । इसके बाद उसे भोजन करा कर दक्षिणा प्रदान करे । इस क्रम के योग से चण्डी - पाठ का विशेष रूप से फल प्राप्त होता है ।

हे कुलेश्वर ! पशुओं यानी दक्षिणाचारियों के लिए केवल मन्त्र का जप है । स्त्रियों की पूजा उन्हें निषिद्ध है । दिव्य-भावावलम्बियों के लिए वीर-वत् ही क्रम है । चण्डी-पाठ में हे कुलेश्वर ! वीर को पञ्च-तत्त्वों का भोग देकर चण्डी-पाठ करना चाहिए । पशुओं को हविष्य - भोजनादि करके चण्डी - पाठ करना चाहिए । पञ्चमादि भोग के बिना जो अर्चन करते हैं, वे नरक को प्राप्त होते हैं ।

।। इति निगम-तत्त्व-सारे 'चण्डी-पाठ-क्रमः' नाम षष्ठः पटलः ।।

सप्तम पटल

पञ्च-प्राणात्मक-ब्रह्म-ज्ञान

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

वद कान्ते ! चापरं मे, पञ्च-वाय्वात्मकं शुभम् । येनानुष्ठित-मात्रेण, योग-ज्ञानं प्रवर्तते ॥

श्रीआनन्द-भैरव बोले—हे कान्ते ! पञ्च-वाय्वात्मक पाँच प्राणों का दूसरा शुभ विधान मुझसे कहो, जिसके अनुष्ठान मात्र से साधक को योग-ज्ञान प्राप्त होता है ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

पञ्च-वाय्वात्मकं ब्रह्म, योग-ज्ञानस्य कारणम् । कुलीनस्य तथा वत्स ! पञ्च-वाय्वात्मिका क्रिया ॥
प्राणापानः समानश्चोदान-व्यानौ च वायवः । मनः-स्वरूपं यद्-ब्रह्म, एते तस्याश्च संख्यया ॥
प्राण-स्थाने यदा ब्रह्म, चाभ्युपैति कुलेश्वर ! मत्त-वत् क्रीडतो लोके, बलवान् दाम्भिको भवेत् ॥
अपानस्थो यदा गच्छेत्, तदा व्याकुल-चेतसः । मन-स्थाने यदा गच्छेत्, सम-भावो विजायते ॥
व्यानस्थोऽपि यदा चेतो, मनो विह्वल-दायकः । उदानस्थो यदा गच्छेदूर्ध्व-शून्यं विजायते ॥
ब्रह्म-रन्ध्रे गुरु-स्थाने, यदा स्युः पञ्च-वायवः । तदा परं-ब्रह्म, दृष्टि-र्जायते साधकस्य च ॥

श्रीआनन्द-भैरवी ने उत्तर दिया—हे वत्स ! पञ्च-वाय्वात्मक जो ब्रह्म है, वही योग - ज्ञान का कारण है और कुलीन साधक की पञ्च - वाय्वात्मक ही क्रिया होती है । १ प्राण, २ अपान, ३ समान, ४ उदान और ५ व्यान—ये पाँच प्राण-वायु हैं । इन पाँचों और मन-स्वरूप ब्रह्म को लेकर छः प्रकार होते हैं ।

'प्राण'-वायु के साथ जब मन होता है, तो कुलेश्वर ! यह शरीर मतवाले के समान बलवान और दाम्भिक बनकर क्रीड़ा करने लगता है । जिस समय मन 'अपान' वायु के साथ रहता है, तब चित्त व्याकुल हो जाता है और जब यह मन 'समान' वायु के साथ रहता है, तब शरीर स्थिर भाव में रहता है । वह मन जब 'व्यान' वायु का साथ करता है, तब चित्त को विह्वल कर देता है और जब यह 'उदान' वायु का साथ करता है, तो ऊर्ध्व शून्य हो जाता है ।

जब यह मन गुरु-स्थान 'ब्रह्म-रन्ध्र' में पञ्च-वायु के साथ जाता है, तब साधक को परं-ब्रह्म दृष्टि-गोचर होता है अर्थात् उसे परम ब्रह्म की प्राप्ति होती है ।

॥ इति निगम-तत्त्व-सारे 'पञ्च-प्राणात्मक-ब्रह्म-ज्ञानं' नाम सप्तमः पटलः ॥

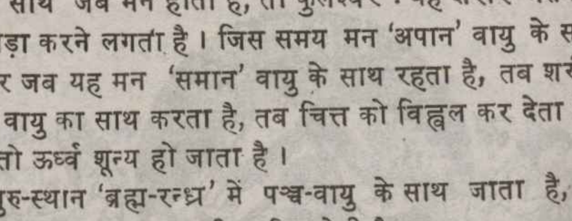

अष्टम पटल

पञ्च-तत्त्व-शुद्धि

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

अपरं श्रोतुमिच्छामि, पञ्च-तत्त्वादि-शोधनम् । यं विना न भवेद् देवि ! देवानामर्चनादिकम् ॥
यां पीत्वा श्रीमहा-देवः, साक्षाद्-ब्रह्म-मयो विभुः । यस्य प्रसादाच्छ्री-ब्रह्मा, जगद्धाता सनातनः ॥
यस्य प्रसादाच्छ्री-कृष्णः, कंसादींश्च दुरासदान् । जघान तृण-वत्-सर्वं, पञ्च-तत्त्व प्रसादतः ॥
तत्त्वं वद मे कान्ते ! येन सिद्धिः प्रजायते ।

श्रीआनन्द-भैरव जी बोले--हे देवि ! पञ्च - तत्त्वादि का शोधन सुनने की मेरी और भी इच्छा है । १ मद्य, २ मांस, ३ मीन, ४ मुद्रा और ५ मैथुन--ये पूजन के लिए 'पञ्च - तत्त्व' हैं । इनके जिस शोधन के बिना देवताओं की पूजा नहीं हो सकती; जिस संस्कृत तत्त्व का पान करके श्री महा-देव जी ब्रह्मा जी जगत् के धाता और सनातन बने हैं और जिस संस्कृत तत्त्व के प्रसाद से श्रीकृष्ण जी ने कंसादि दानवों का सहज ही वध किया, उस तत्त्व-शोधन को मुझसे कहो, जिससे सिद्धि प्राप्त हो जाती है ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

सर्वासामपि पूजानां, प्रधानं पञ्च-तत्त्वकम् । पञ्च-तत्त्वं बिना पूजा, अभिचाराय कल्प्यते ॥
मद्यं मांसं तथा मीनं, मुद्रा मैथुनमेव च । पञ्च-तत्त्वमिदं प्रोक्तं, कोटि-जन्माघ-नाशनम् ॥
तस्य शुद्धि-विधानं हि, शृणुष्वानन्द-भैरव ! स्व-मन्दिरोद्भवं द्रव्यं, उत्तमं परि-कीर्तितम् ॥
सौञ्ज्यागार-समुद्भूतमधमं परि-कीर्तितम् । अन्त्यजादि-समुद्भूतं, निकृष्टं परिकीर्तितम् ॥
अधमस्य प्रदानेन, हरेदायुश्च सम्पदः । पानं यस्य मुखे नास्ति, दूती-यजन - पूर्वकम् ॥
तस्य दीक्षा वृथा देव ! सत्यमेव न संशयः । ततस्तु कारणं देव ! समानीय घट-स्थितम् ॥
रक्त-वस्त्रेण सम्वेष्ठ्य, रक्त-माल्येन भूषितम् । त्रिकोण-मण्डलं लिख्य, तस्योपरि महेश्वर ! ॥
ततश्च रक्त-वस्त्रेण, दृढं बन्धनमाचरेत् । अकारादि-स्वर - पुटं, शुक्र-वीजं शतं जपेत् ॥
एवं स्वर-पुटं कृत्वा, दीर्घ-षट्केन शङ्कर ! माया-वीजं शतं जप्त्वा, काली-वीजं शतं जपेत् ॥
ततो जपेद् ब्रह्म-वीजं, यावद् गन्धं न विन्दति । ततश्च बन्धनं मुक्त्वा, भैरवीं तत्र पूजयेत् ॥
भैरवं तत्र सम्पूज्य, यथोक्त-विधिना हर ! ततो जपेदिष्ट-मन्त्रं तस्योपरि महेश्वर ! ॥
मातृकार्ण-पुटं कृत्वा, जपेन्मन्त्रं सहस्रकम् । यावद् भवति देवेश ! दुग्ध-वत् कुल-वारुणी ॥
तावज्जपेन्महा - मन्त्रं, इष्ट - मन्त्रं तथा प्रिय ! अनेन क्रम-योगेन तत्त्व - शुद्धिर्विधीयते ॥

श्रीआनन्द-भैरवी ने कहा—हे आनन्द-भैरव ! सब पूजाओं में 'पञ्च-तत्त्व' का पूजन ही प्रधान पूजा है । 'पञ्च-तत्त्व' के बिना पूजा करना अभिचार कहा जाता है । मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा और मैथुन—इन्हीं को 'पञ्च-तत्त्व' कहते हैं । कोटि-जन्म के पापों का ये नाश करनेवाले हैं । इन 'पञ्च - तत्त्वों' के शुद्ध होने का विधान मैं कहती हूँ । हे आनन्द-भैरव ! आप सुनें ।

अपने मन्दिर या अपने स्थान का बना हुआ 'द्रव्य' या 'तीर्थ' (मद्य) उत्तम कहा जाता है और सौञ्ज्यागार (मद्य-शाला) का बना हुआ द्रव्य अधम कहा जाता है। अन्त्यजादि के यहाँ का बना हुआ 'तीर्थ' निकृष्ट कहा जाता है। अधम द्रव्य देवता को प्रदान करने से आयुर्बल का विनाश करता है और धन का भी नाश करता है।

जिस साधक के मुख में दूती-पूजन-पूर्वक द्रव्य - पान नहीं होता, उस साधक की दीक्षा व्यर्थ हो जाती है। हे देव ! इसलिए देवताओं को उत्तम द्रव्य प्रदान करे। अधम व निकृष्ट न प्रदान करे और उत्तम संस्कृत 'द्रव्य' का ही पान करे।

'कारण' मँगाकर घट में रखे। रक्त-वस्त्र से उसे वेष्ठित करे। रक्त-पुष्पों की माला से घट को भूषित करे। घट के ऊपर त्रिकोण-मण्डल बनाए। 'अकथादि त्रिकोण' लिखे (अ–१६, क–१६, थ–१६) कोणों में 'ह', 'ल' और 'क्ष' इन तीन अक्षरों को देकर रक्त-वस्त्र का दृढ़ बन्धन करे। फिर अकारादि स्वरों से 'शुक्र-वीज' (शं) को पुटित करके १०० बार मन्त्र का जप करे। कलश के ऊपर इसी रीति से छः दीर्घ स्वरों से पुटित–'शां शीं शूं शैं शौं शः' का भी १०० बार जप करे। 'माया-वीज' (ह्रीं) को भी स्वर-पुटित कर १०० बार जप करे। 'काली-वीज' (क्रीं) को भी स्वर-पुटित कर १०० बार जप करे। हे शङ्कर ! इसके बाद ब्रह्म-वीज (ॐ) का जप करे।

तब तक जप करना चाहिए, जब तक तीर्थ सुगन्धित न हो जाय। इसके बाद कलश का बन्धन मुक्त कर कलश के ऊपर श्रीआनन्द-भैरवी का पूजन करे। वहीं यथा-विधि श्रीआनन्द-भैरव का भी पूजन करे। हे हर ! इसके बाद कलश के ऊपर इष्ट-मन्त्र का १०० बार जप करे। हे महेश्वर ! तब मातृकार्ण-पुटित मूल-मन्त्र का एक सहस्र जप करे।

हे देवेश ! जब तक कुल-वारुणी दुग्ध-वत् न हो जाय, तब तक कलश के ऊपर 'महा - मन्त्र' और 'इष्ट-मन्त्र' का जप करता रहे। हे प्रिय ! इस क्रम के योग से 'तत्त्व' (तीर्थ, कारण) शुद्ध होकर देवता को प्रदान करने के योग्य हो जाता है।

॥ इति निगम-तत्त्व-सारे 'पञ्च-तत्त्व-शुद्धि' नाम अष्टमः पटलः ॥

नवम पटल

तत्त्व-शोधन

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

अपरं श्रोतुमिच्छामि मांसादि-शोधनं प्रिये ! तदुपायं वद प्रौढे ! येन दोषो न विद्यते ॥

श्रीआनन्द - भैरव जी ने कहा—हे प्रिये ! प्रथम तत्त्व के शोधन - संस्कार को सुन लिया । अब दूसरे मांस-मत्स्यादि तत्त्वों के शोधन का उपाय मुझसे कहो, जिसके करने से दोष नहीं होता अर्थात् पूजन करने में किसी प्रकार की विघ्न-बाधाएँ नहीं होतीं और आनन्द से पूजा - पुरश्चरण होकर मनोरथ सिद्ध होते हैं ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

मांसं तु त्रिविधं प्रोक्तं, ख-भू - जल - चरं हर ! देव्याः प्रीति - करं सद्यः, त्रिविधं मांसमुच्यते ॥
शुद्धि कुर्याच्च विधि-वच्छास्त्रोक्त-विधिना सुधीः । नाचरेद् यदि मोहेन, तत् कृत्वा पातकं लभेत् ॥
तन्मांसं च समभ्यर्च्य, कारणैः प्रोक्षयेत् सुधीः ।

श्रीआनन्द-भैरवी बोलीं—हे हर ! मांस तीन प्रकार का होता है—'ख' अर्थात् आकाश में चलने-वाले जीवों का, 'भू' अर्थात् पृथिवी पर चलनेवाले जीवों का और 'जल' में चलनेवाले जीवों का । ये तीनों प्रकार के मांस देवी को प्रसन्न करनेवाले हैं । इन मांसों को शुद्ध करके चढ़ाने से दोष नहीं होता । शुद्धि शास्त्रोक्त विधि से करे । यदि मोह से कोई शुद्धि नहीं करता, तो अशुद्ध पञ्च-तत्त्व से पूजा करनेवाले को पाप लगता है । अतः बुद्धिमान सदा मांस की पूजा कर 'कारण' अर्थात् मद्य से उसका प्रोक्षण करे ।

मूल-मन्त्र का दस बार उच्चारण कर निम्न मन्त्र को तीन बार पढ़े—

ॐ विष्णोर्वक्षसि या देवी, या देवो शङ्करस्य च । मांसं पवित्रो कुरु चैतद् विष्णोः परमं पदम् ॥

फिर धेनु और योनि-मुद्रा को दिखाकर मांस को पवित्र बनाए । ऐसा करने से मांस देवता के तर्पण-पूजन-निवेदन के योग्य हो जाता है ।

मीन - शुद्धि - विधिं वक्ष्ये, शृणुष्वानन्द - भैरव ! दग्ध-मीनं समानीय, भर्जितं वा कुलेश्वर ! ॥
मूल-मन्त्रैः कारणेनाभ्युंक्ष्य च मनुं जपेत् । पद्भ्यां भूमिं दिशः श्रोत्रात्, तथा लोकानकल्पयन् ॥

हे आनन्द-भैरव ! मीन-शुद्धि का विधान आपसे कहती हूँ, सुनो । दग्ध मीन या भर्जित मीन को सामने रखकर मूल - मन्त्र का दस बार स्मरण कर कारण (मद्य) से उसका प्रोक्षण कर धेनु और योनि-मुद्राएँ दिखाए । फिर निम्न मन्त्र को तीन बार पढ़े—

ॐ पद्भ्यां भूमिं दिशः श्रोत्रात् तथा लोकानकल्पयन् स्वाहा ।

तदनन्तर '**ॐ त्र्यम्बकं यजामहे**' मन्त्र को पढ़कर मीन का शोधन करे । इस प्रकार 'मीन' देवता के तर्पण-पूजन-निवेदन के योग्य होती है ।

मुद्रा - शुद्धि - विधिं वक्ष्ये, येन शुद्धिर्विधीयते । ततो वै भर्जितां मुद्रां, समानीय च शोधयेत् ॥

हे आनन्द-भैरव ! मुद्रा-शुद्धि का विधान मैं आपसे कहती हूँ, सुनो। भर्जित मुद्रा को सामने रखकर **'तद्विष्णोः परमं पदम्'** मन्त्र को पढ़कर कारण(मद्य) से उसका प्रोक्षण करे। फिर धेनु-योनि-मुद्राएँ दिखाकर निम्न मन्त्र को पढ़े--**ॐ विष्णोर्योनिं कल्पयतु, त्वष्टा - रूपाणि पिंशतु, आसिञ्चतु प्रजा-पति-र्धाता, गर्भं दधतु ते स्वाहा**। इस प्रकार मुद्रा शुद्ध हो जाती है।

अथ वक्ष्ये महेशान ! शुद्धिं तु मैथुनस्य च। आनीय प्रमदां कान्तां, घृणा-लज्जा - विवर्ज्जिताम् ॥
स्व-कान्तां पर-कान्तां वा, सु-वेशां स्थाप्य मण्डले। प्रथमं कारणं दत्वा, यथोक्त-विधिना शिव ! ॥
वाग्भवं लिङ्ग-मूले तु, शतमष्टोत्तरं जपेत्। योनि - गर्ते चन्दनं दत्वा, काम - वीज - त्रयं जपेत् ॥
ततः पठेद् वेद-मन्त्रं, सुस्थेन मनसा प्रिय !

हे महेशान ! मुद्रा-शोधन के बाद मैथुन - शोधन का विधान कहती हूँ, सुनो। सुन्दरी कान्ता प्रमदा को बुलाए। भक्ति के साथ, घृणा, लज्जा से विवर्जिता स्व-कान्ता अथवा पर-कान्ता, जो सुवेशा हो, ऐसी स्त्री को मण्डल में स्थापित करे। पहले कारण देकर मूल-मन्त्र द्वारा तीर्थ (मद्य) से प्रोक्षण करे। इसके बाद लिङ्ग - मूल में वाग्भव वीज (ऐं) का १०८ बार जप करे। तदनन्तर योनि - यन्त्र में चन्दन लगाकर तीन बार काम-वीज (क्लीं) का जप करे। इसके बाद निम्न वेद-मन्त्र को सुस्थिर मन से पढ़े—

ॐ गर्भं धेहि सिनीवालि, गर्भं धेहि सरस्वति ! गर्भं धेह्यश्विनौ देवा, वाधत्तां पुष्कर-स्रजौ ॥
अग्निमीले पुरोहितं, यज्ञस्य देवमृत्विजं। होतारं रत्न-धातमम्। ॐ अज्ञातं यद् नाज्ञातं, यज्ञस्य क्रियते मिथः स्वाहा। अयमूर्यावतो वृक्षाः, ऊर्ज्जीव फलिनी भव। पर्णं वनस्पते नुत्वानुत्वा च सूयतां रयि।

इस प्रकार पञ्चम-तत्त्व का शोधन होता है।

शोधयित्वा पञ्च - तत्त्वं, भक्षयित्वा फलं लभेत्। अशुद्धं पञ्च - तत्त्वं च, भक्षयेत् साधको यदि ॥
मन्त्रः पराङ्-मुखो याति, आपदस्तस्य पदे पदे। आदि-वीजं समुच्चार्य, महा-पिशाचिनी पदम् ॥
ततः सर्वं मे वशं च, कुरु - द्वयं ततो वदेत्। स्वाहान्तोऽयं मनुः प्रोक्तः, सर्वेषां वश्य - कर्मणि ॥
पञ्च - तत्त्वं समादाय, वाम - हस्त - कनिष्ठया। मन्त्रेणानेन तिलकं, सर्वेषां वश्य - कर्मणि ॥
शोधनेन विना वत्स ! सिद्धि - हानिः प्रजायते। अपरं परमेशान ! शुद्धिर्हि कारणं नहि ॥
मम ज्ञानेन वर्तते, तत्त्व - सारात् परात्परम्। नराणामुपकाराय, तव स्नेहात् प्रकाशितम् ॥

संशोधित पञ्च-तत्त्व को ग्रहण करने से अभीष्ट फल होता है किन्तु असंस्कृत पञ्च-तत्त्व के सेवन से नरक प्राप्त होता है। अशुद्ध पञ्च-तत्त्व को यदि साधक ग्रहण करता है, तो देवता उससे रुष्ट हो जाता है और मन्त्र भी फल नहीं देता तथा उस साधक को पद-पद पर विपत्ति लगी रहती है।

आदि-वीज (ह्रीं) का उच्चारण कर **'महा-पिशाचिनि'** पद का उच्चारण करे। इसके बाद **'सर्वं मे वशं कुरु कुरु'** यह कहे। अन्त में **'स्वाहा'** का उच्चारण करे। यह मन्त्र सबको वशीभूत करने के लिए है। पूरा मन्त्र है—**'ह्रीं महा-पिशाचिनि ! सर्वं मे वशं कुरु कुरु स्वाहा।'**

संशोधित पञ्च-तत्त्व लेकर उक्त मन्त्र से मस्तक में वाम - हस्त की कनिष्ठा से तिलक करने से जिसे देखेगा, वही वशीभूत हो जायगा। हे वत्स ! पञ्च - तत्त्व के शोधन के बिना सिद्धि-हानि होती है। मैंने जो शोधन कहा है, इसके बिना सिद्धि-हानि हो जाती है। हे परमेशान ! शुद्धि करने का और कारण नहीं है। मेरे ज्ञान में 'तत्त्व-सार' से बढ़कर कोई दूसरा विधान नहीं है। हे शिव ! मनुष्यों के उपकार के लिए यह विधान स्नेह-वश तुमसे कहा है।

॥ इति निगम-तत्त्व-सारे 'तत्त्व-शोधनं' नाम नवमः पटलः ॥

दशम पटल

सम्विदा (विजया)-कल्प

।। श्रीआनन्द-भैरव उवाच ।।

अपरं श्रोतुमिच्छामि, सम्विदा-कल्पमुत्तमम् । येन हीना न शुद्धिः स्यात्, तन्मे वद कुलेश्वरि ! ।।

श्रीआनन्द-भैरव जी बोले—हे कुलेश्वरि ! मैं दूसरा उत्तम 'सम्विदा - कल्प' सुनना चाहता हूँ। उसे कहो, जिसके बिना सिद्धि नहीं मिलती ।

।। श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ।।

कलि - काले महेशान ! सम्विदा - कल्पमुत्तमम् । सर्वेषां साधनं मध्ये, विजया चाधिकं स्मृतम् ।।
यां बिना श्रीमहा-देवः, सर्व-कारण-वर्जितः । सम्विदां विजयां पीत्वा, योग - ज्ञानं करोति यः ।।
सर्व - धर्म - युतो भूत्वा, विहरेत् हर-वद् भुवि । बहुधा - शोधनं तस्याः, विजयायाः कुलेश्वर ! ।।
प्रीतिदा चण्डिकायाश्च, सर्व-कारण - कारिणी ।

श्रीआनन्द-भैरवी जी बोलीं—हे परमेशान ! कलिकाल में सम्विदा-कल्प उत्तम है । सब साधनों के मध्य में 'विजया-साधन' अधिक उत्तम है । विजया के बिना श्रीमहा-देव जी सर्व-कारण से अलग रहते हैं । सम्विदा (विजया) का पान कर, जो मनुष्य योग का ज्ञान प्राप्त करता है, वह सर्व - धर्म-युक्त होकर शिव के समान पृथिवी पर विहार करता है । हे कुलेश्वर ! विजया का शोधन अनेक प्रकार का है। सर्व-कारणों की कारण विजया से तर्पण-पूजन करने से भगवती चण्डिका प्रसन्न होती हैं ।

।। श्रीआनन्द-भैरव उवाच ।।

बहुधा साधनं तस्याः, विजयायाः परमेश्वरि ! तेषां मध्ये सार - भूतं, तद् विधानं वद प्रिये ! ।।

श्रीआनन्द-भैरव जी बोले—हे परमेश्वरि ! अनेक प्रकार के विजया-साधनों में से जो सार-भूत साधन है, उस विधान को, हे प्रिये ! मुझसे कहो ।

।। श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ।।

संक्षेपात् साधनं तस्याः, शृणु वत्स ! समाहितः । वाग्भवं तु रमा माया, सम्विदा-पदमुत्तमम् ।।
सिद्धि देहि पदं चोक्त्वा, ततः स्वाहा मनुर्मतः । अष्टोत्तर - शतं जप्त्वा, तस्योपरि महेश्वर !
ततो वै दर्शयेद् धीमान्, योनि - मुद्रां महेश्वर ! वार - त्रयं तु पानं तु, कर्तव्यं कुल - भैरव ! ।।
हस्ते पात्रं गृहीत्वा तु, सुधा - देवीं विभावयेत् ।

श्रीआनन्द-भैरवी जी बोलीं—हे वत्स ! सावधानी के साथ संक्षेप में उस विधान को सुनो । **'वाग्भव' (ऐं), 'रमा' (श्रीं), 'माया (ह्रीं), 'सम्विदा'** - पद, **'सिद्धि देहि'** पद का उच्चारण करे, फिर **'स्वाहा'** । इस प्रकार यह मन्त्र बना—**ऐं श्रीं ह्रीं सम्विदे सिद्धि देहि स्वाहा ।'** विजया के ऊपर इस मन्त्र का १०८ बार जप करे । हे महेश्वर ! इसके बाद बुद्धिमान् मनुष्य 'योनि-मुद्रा' को दिखाए । तदनन्तर इष्ट और गुरु का तर्पण कर तीन बार विजया-पान करे । हे कुल-भैरव ! हाथ में पात्र लेकर सुधा-देवी का ध्यान करे और तब निम्न मन्त्र का उच्चारण कर उसे ग्रहण करे—

ॐ सम्विदे ज्ञानदे नित्ये ! महा-मोक्ष-प्रदायिनि ! त्वत्-प्रसादान् मम ज्ञानं, सुस्थिरं च विजायते ।।

हे सम्विदे (विजये), ज्ञान-दायिनि, शाश्वति, महान् मोक्ष को देनेवाली ! तुम्हारी प्रसन्नता से मेरा ज्ञान अच्छे प्रकार से स्थायी होकर रहे ।

इमं मन्त्रं समुच्चार्य, सम्विदां विजयां पिवेत् । अज्ञानात् यदि वा मोहात्, विजया-पान-कर्मणि ।।
नोच्चरेदिमं मन्त्रं, तस्य सिद्धिर्न जायते ।

उक्त मन्त्र का उच्चारण कर सम्यक् ज्ञान देनेवाली 'विजया' का पान करना चाहिए । अज्ञानता-वश या किसी भ्रम के कारण 'विजया' का पान करते समय जो इस मन्त्र का उच्चारण नहीं करता, उसे सिद्धि नहीं मिलती ।

।। इति निगम-तत्त्व-सारे 'सम्विदा-कल्प' नाम दशमः पटलः ।।

एकादश पटल

भाव - माहात्म्य

॥ श्रीआनन्द-भैरव उवाच ॥

एकं पृच्छामि देवेशि ! वद त्वं कारणं शुभम् । अशक्तानां महेशानि ! कथं सिद्धिर्विजायते ? ॥
तदुपायं वद प्रौढे ! लोकानामुप - कारिणि ! निर्ज्ञाना निर्धनाः सर्वे, लोकाः सन्ति कलौ युगे ॥
तेषां सिद्धिश्च देवेशि ! केनोपायेन जायते ?

श्री आनन्द-भैरव जी बोले--हे देवेशि ! तुम अब शुभ 'कारण' को कहो । हे महेशानि ! अशक्त साधकों को किस प्रकार सिद्धि मिलती है ? संसार का उपकार करनेवाली हे प्रौढे ! उस उपाय को बताओ कलि-युग में सभी लोग निर्ज्ञानी और निर्धन संसार में होंगे । हे देवेशि ! उन लोगों को किस प्रकार सिद्धि मिलेगी ।

॥ श्रीआनन्द-भैरव्युवाच ॥

एतत् क्रियाद्यशक्तश्चेत्, सत्सङ्गं करोति यः । तस्य सर्व-सु-सिद्धिः स्यात्, नात्र कार्या विचारणा ॥
वीर - भावोऽपि सर्वेषां, श्रेयो भवति शङ्कर ! पञ्च - तत्त्वैर्महा - सिद्धिरनायासेन जायते ॥
सम - भावं च निर्वाणं, जायते कुल - भैरव ! जम्बू - द्वीपे महेशान ! मद्यात् सिद्धिर्न संशयः ॥
अङ्ग-वङ्ग-कलिङ्गेषु, स्त्रिया सिद्धिर्विजायते । गौड - शाल्व - देशार्णे, पशु - भावाद् विजायते ॥
जम्बू-द्वीपे महेशान ! मद्य-भोग्या जनाः स्मृताः । अपरे ब्राह्मणाः सर्वे ते, यान्ति परमां गतिम् ॥
यदन्य - शास्त्र - दृष्टया च, विह्वलो जायते हर ! कारणं नरकस्यैव, इति जानीह तत्त्वतः ॥
मद्य-भोग्या ब्राह्मणाश्च, कलौ यान्ति परां गतिम् । यस्य ज्ञाने महेशान ! स्त्रियो हि मुक्तिदा सदा ॥
तस्य सर्वाणि कर्माणि, प्रकरोम्यहमिच्छया । हा हन्त ! पशु-शास्त्रज्ञः, कलौ तिष्ठति सर्वथा ॥
दिवि दिव्यन्ति दिव्याश्च, वीरास्तिष्ठन्ति भूतले । पशवः सन्ति पाताले, क्रमशः कौलिकेश्वर ! ॥
भावमाश्रित्य निवसेद्, यत्र कुत्रापि शङ्कर ! भावं विना न सिद्धिः स्यात्, सर्वथैव कुलेश्वर ! ॥

श्रीआनन्द-भैरवी जी बोलीं--मेरे द्वारा कही हुई क्रियाओं के करने में जो अशक्त होते हैं, वे वीरों का अथवा कौलिकों का सत्सङ्ग करें, अभिषेकादि संस्कार करावें, तब उन को सब प्रकार की सिद्धियाँ सुलभ रहती हैं, इसमें सन्देह नहीं । हे शङ्कर ! 'वीर-भाव' से सभी का कल्याण होता है । 'पञ्च-तत्त्वों' द्वारा पूजन-अर्चन करने से महा-सिद्धि अनायास उत्पन्न होती है एवं हे कुल-भैरव ! सम-भाव की प्राप्ति होकर निर्वाण अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

हे महेशान ! जम्बू-द्वीप में 'मद्य' से सिद्धि मिलती है और अङ्ग, वङ्ग तथा कलिङ्ग देश में 'स्त्रियों' द्वारा सिद्धि मिलता है । गौड़ - शाल्व देशों में 'पशु - भाव' से सिद्धि मिलती है । हे महेशान ! जम्बू-द्वीप में मद्य-भोगी मनुष्य और ब्राह्मण होंगे । वे सभी श्रेष्ठ गति को प्राप्त करेंगे ।

अन्य शास्त्रों का अवलोकन कर जो व्याकुल हो जाते हैं, उन्हें नरक की प्राप्ति होती है । यही तत्त्व की बात है ।

मद्य-भोगी ब्राह्मण कलि में मोक्ष प्राप्त करते हैं और हे महेश ! जिसके ज्ञान में यह आ गया कि स्त्री से मोक्ष होता है, उस साधक के सब कार्यों को मैं सदैव अपनी ही इच्छा से पूरा किया करती

हूँ । दुःख की बात है कि पशु - शास्त्र के जाननेवाले ब्राह्मण ही विशेष रूप से कलि-युग में होंगे । वीर-भाव रखनेवाले कुलाचारी ब्राह्मण कम होंगे ।

देवता लोग स्वर्ग में दिव्य-भाव से आराधना करते हैं और 'वीर' लोग भू-तल में अर्चन-विधान करते हैं तथा हे कौलिकेश्वर ! 'पशु' लोग पाताल में अर्चन-विधान करते हैं । यही सनातन क्रम है ।

हे कुलेश्वर शङ्कर ! भाव रख कर जहाँ चाहे, वहाँ उपासना कर सकता है । भाव के बिना कोई सिद्धि नहीं मिलती । भाव ही से सम्यक् प्रकार की सिद्धि होती है ।

॥ श्री आनन्द-भैरव उवाच ॥

दीपिनीं परमां विद्यां, यदि तेऽस्ति कृपा मयि । येनाशक्तो जनः पापं, न प्राप्नोति कदाचन ॥

श्रीआनन्द-भैरव जी बोले—हे देवि ! यदि मेरे ऊपर आपकी दया हो, तो परमा विद्या 'दीपिनी' को कहो, जिसके प्रभाव से अशक्त मनुष्य कभी पाप का भागी नहीं बनता ।

॥ श्री आनन्द-भैरव्युवाच ॥

दीपिनीं परमां विद्यां, यो न जानाति शङ्कर ! तस्य विद्या न सिद्धिः स्याज्, जन्म-कोटयर्चनैरपि ॥
दीपिनी कुल्लुका-विद्या, विज्ञेया साधकैः स्वयम् । या महा-कुल्लुका देवी, सा च यद् दीपिनी स्मृता ॥
काली-वीजं शब्द - वीजं, ह्रीं वीजं तदनन्तरम् । सर्वेषां तन्त्र - मन्त्राणां, दीपिनीति प्रशस्यते ॥
जपान्ते वा जपादौ वा, दीपिनीं यत्नतो जपेत् । न जपेद् यदि मोहेन, तस्य सिद्धिर्न जायते ॥
अति गुह्यं परं-ब्रह्म ! कथितं वत्स ! वाञ्छया । इति ते कथितं देव ! सर्व - सारं परात् परम् ॥
प्रकाशात् सर्व-नाशः स्यात्, सिद्धि-हानिश्च जायते ।

भगवती आनन्द-भैरवी बोली—हे शङ्कर ! 'दीपिनी' परमा विद्या को जो नहीं जानता, उस साधक को विद्या-सिद्धि प्राप्त नहीं होती । कोटि जन्म भी अर्चन-पूजन करता रहे, निष्फल हो जाती है । सभी साधकों को 'दीपिनी' कुल्लुका विद्या को जानना चाहिए । जो 'महा-कुल्लुका देवी' हैं, वही 'दीपिनी' भी कही जाती है ।

काली-वीज' (क्रीं), 'शब्द-वीज' (हूँ), इसके बाद 'ह्रीं' वीज का उच्चारण करे । सब तन्त्र-मन्त्रों में यही 'दीपिनी' (क्रीं हूँ ह्रीं) कही जाती है । जप के अन्त में या जप के आदि में 'दीपिनी' विद्या का यत्न-पूर्वक जप करना चाहिए । यदि मोह से न जपे, तो उस साधक को सिद्धि नहीं मिलती ।

हे परम-ब्रह्म, हे वत्स ! यह अति गुप्त विषय तुम्हारी इच्छा देखकर मैंने कहा है । हे देव ! इस प्रकार आपसे जो कहा है वह सर्व-सार का भी सार है, पर से परे है । अभक्त के प्रति इसे प्रकट करने से सिद्धि में हानि होती है ।

॥ श्री आनन्द-भैरव उवाच ॥

एतदद्भुत-माहात्म्यं, त्वन्मुखात् संश्रुतं मया । अद्य - प्रभृति देवेशि ! तव दासो भवाम्यहम् ॥

श्रीआनन्द - भैरव बोले—हे देवेशि ! इस अद्भुत माहात्म्य को मैंने आपके मुख से सुना । हे देवेशि ! आज के दिन से मैं आपका दास बना रहूँगा ।

॥ इति निगम-तत्त्व-सारे आनन्द-भैरव-आनन्द-भैरवी-सम्वादे 'भाव - माहात्म्यं' नाम एकादशः पटलः ॥

●●●

श्री वटुक भैरव (राजसिक)

रजि०सं०ए०डी०६१

रजि०सं०३२९८१/५७

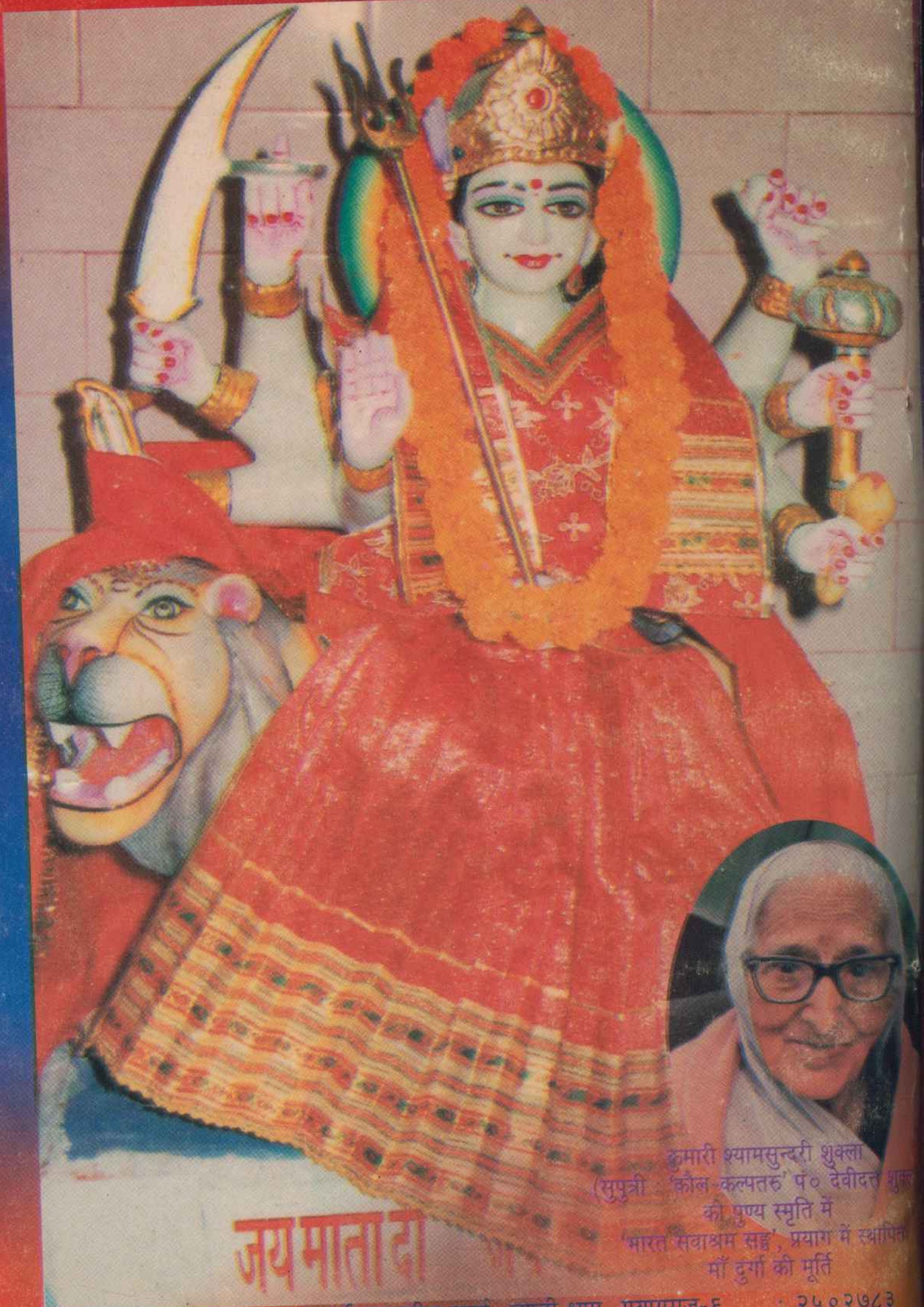

कुमारी श्यामसुन्दरी शुक्ला
(सुपुत्री : 'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल
की पुण्य स्मृति में
'भारत सेवाश्रम सङ्घ', प्रयाग में स्थापित
माँ दुर्गा की मूर्ति

सम्पादक/प्रकाशक/मुद्रक : श्री ऋतशील शर्मा, चण्डी-धाम, प्रयागराज-६ : २५०२७८३